गुरु साधनायें

संकलन
अजय कुमार उत्तम

सर्व सिद्धि प्रदाय

श्री गुरूदेव निखिलेश्वरानन्द प्रयोग

--योगीराज विश्वरूपानन्द जी महाराज

इस बात का मु : गर्व है, कि मैं बाल्यावस्था से ही सन्यासी हुआ और अब जीवन के ८० वर्षों से भी ज्यादा आयु प्राप्त करने के बाद भी मुझे इस बात का संतोष और गर्व है, कि मैंने अपने जीवन में जो साधनाएं चाही थी, वे प्राप्त हुई, जिन सिद्धियों को मैं वरण करना चाहता था, उन सिद्धियों को मैंने हस्तगत किया और साधना की उन ऊंचाइयों को स्पर्श किया जो मेरे जीवन की धरोहर है।

मुझे अपने जीवन का सबसे बड़ा सौभाग्य इस बात से हुआ कि मुझे सन्यासी जीवन के प्रारम्भ में अद्वितीय योगीश्वर श्री निखिलेश्वरानन्दजी जैसे महायोगी का सानिध्य प्राप्त हुआ, उनकी कठिन एवं कठोर परीक्षा में सफल हुआ, और उनका प्रिय शिष्य कहलाने का गौरव प्राप्त कर सका।

मैं ही नहीं अपितु हजारों–हजारों सन्यासी उन्हें 'आराध्य' मानते है हजारों–हजारों सन्यासी आज भी उनके एक संकेत पर अपने आपको फना करने के लिए तैयार है, और उनकी एक झलक देखने के लिए, दो चार क्षण उनके साथ व्यतीत करने के लिए अपना सब कुछ पुण्य भी लुटाने के लिए तैयार है। ऐसे ही योगीराज के जिस दिन मैंने दर्शन किये थे, वह दिन मेरे जीवन का सौभाग्यदायक दिन था, जिस दिन मैंने उन्हें गुरू रूप में प्राप्त किया, वह मेरे पिछले बीस जन्मों का सबसे श्रेष्ठ महत्वपूर्ण और दुर्लभ क्षण था, उनके सानिध्य में मैंने

उन सिद्धियों को प्राप्त किया, जो कि वास्तव में ही अगम्य अगोचर और अद्वितीय है।

इस बार शिवरात्रि के पर्व पर उनका आध्यात्मिक संकेत प्राप्त होने पर मैं उनके गृहस्थ स्वरूप को साक्षात देखने का सौभाग्य प्राप्त कर सका, वास्तव में ही वे अपने आप में अद्वितीय है, जिसकी किसी से तुलना नहीं की जा सकती , यदि वे सन्यास जीवन में रहे है, तो सन्यासी के आदर्शों और तत्वों की कसौटी पर पूर्णतः खरे उतर कर शंकराचार्य की उस परम्परा को पुनः जीवित कर दिया था कि सन्यास जीवन किस प्रकार और किन आदर्शो के साथ यतीत किया जा सकता है और अब, जब कि मैं उन्हें गृहस्थ जीवन में देख रहा हूं, तो अनुभव कर रहा हूं, कि वे गृहस्थ जीवन के तत्वों को पूर्णतः आत्मसात किये चार आश्रमों में से गृहस्थ जीवन या गृहस्थ आश्रम को भी पूर्णता के साथ सम्पन्न कर रहे है। इस गृहस्थ जीवन की समस्याओं, बाधाओं, अड़चनों और कठिनाइयों को भी वे सामान्य मानव की तरह ले रहे है, सामान्य की तरह उनका समाधान ढूंढते है, चुनौतियों का सामना करते है, सामान्य मानव की तरह ही संघर्ष कर उसमें सफलता प्राप्त कर रहे है।

मैं समझता हूं कि वे सब यह इसीलिए कर रहे है कि वे अपने शिष्यों को यह दिखा देना चाहते हैं, कि गृहस्थ जीवन की समस्याओं को झेलते हुए भी साधना की जा सकती हैं। गृहस्थ की चुनौतियों का सामना करते हुए भी पूर्णतः साधु जीवन या वैराग्य जीवन व्यतीत किया जा सकता है। गृहस्थ की झंझटों का सामना करते हुए भी साधना काल में सूक्ष्म प्राणों से सर्वत्र विचरण किया जा सकता है, और अपने उत्तरदायित्वों का निर्वाह किया जा सकता है। पूर्ण गृहस्थ जीवन का गरल पीते हुए भी मुस्कराया जा सकता है, और आनन्द के साथ जीवन को पार लगाया जा सकता है।........यह सब कुछ मैंने इस बार शिवरात्रि के अवसर पर कुछ क्षण उनके साथ बिताने पर अनुभव किया।

वेद व्यास ने श्रीमद भागवत में एक स्थान पर कहा है, कि भगवान श्री कृष्ण सोलह कला पूर्ण ब्रह्म के साक्षात् स्वरूप होते हुए भी देवकी के गर्भ से इसीलिए जन्म लिया कि वे यह दिखा देना चाहते थे, कि सामान्य बालक भी आगे चल कर गीता तत्व का उपदेश देने वाला पुरुषोत्तम बन सकता है। उन्होंने सामान्य बालक की तरह ही सान्दीपन आश्रम में शिक्षा प्राप्त की, जीवन के घात प्रति-घातों से जूझे, जीवन की समस्याओं का और चुनौतियों का सामान्य मानव की तरह मुकाबला किया और सामान्य मानव की तरह ही गृहस्थ जीवन व्यतीत करते हुए पूर्ण ब्रह्म, भगवान श्री कृष्ण और योगीराज कह-लाये, इन सारे कार्य कलापों में उन्होंने एक बार भी अपनी शक्ति का दुरुपयोग नहीं किया, अपने ब्रह्मत्व का उपयोग नहीं किया, वे सामान्य मानव की तरह ही रहे और सामान्य मानव की तरह ही जीवन व्यतीत किया।

मैं इसी की पुनरावृत्ति वर्तमान जीवन में भी देख रहा हूं, नित्य आने वाली बाधाओं और चुनौतियों के हल करने में उन्होंने एक बार भी अपनी साधना शक्ति का सहारा नहीं लिया, एक बार भी उन्होंने दुर्लभ सिद्धियों का प्रयोग गृहस्थ जीवन की समस्याओं को सुलझाने में नहीं किया, क्योंकि वे सामान्य गृहस्थ शिष्यों के बीच हैं, और सामान्य गृहस्थ में रहते हुए गृहस्थ की सम-स्याओं से जूझना चाहते हैं, और अपने कार्यों से शिष्यों को दिखा देना चाहते हैं, कि एक सामान्य साधक भी सफल गृहस्थ जीवन व्यतीत करता हुआ, साधना की ऊंचाइयों को प्राप्त कर सकता है, अपने जीवन की दुर्लभ साधनाओं को बचाये रख सकता है, और गृहस्थ जीवन में रहते हुए भी सन्यासी की तरह जीवन के क्षण व्यतीत कर सकता है।

मैं हतप्रभ हूं कि एक व्यक्ति दो सर्वथा विभिन्न जीवन जीते हुए भी प्रत्येक जीवन में सफलता प्राप्त कर सकता है, यह मैंने पहली बार ही अनुभव किया, उनका सन्यासी जीवन जहां सभी दृष्टियों से पूर्ण और तेजस्वी

रहा है, तो गृहस्थ जीवन भी पूर्ण शान्त एवं आनन्दप्रद ही। दोनों ही रूपों में पूर्णता प्राप्त करना अत्यन्त कठिन है, परन्तु इन कठिनइयों के बीच भी जो अपने आपको निर्विकल्प रूप से बचाये रख सकते है, संभवतः वे ही पूर्ण कहलाने के अधिकारी होते है।

सन्यासी जीवन में हम सभी सन्यासी शिष्य सिद्धाश्रम के अत्यन्त तेजस्वी योगीराज परमहंस स्वामी महारूपा जी से, जो "स्वामी निखिलेश्वरानन्दजी साधना प्रयोग" प्राप्त किया था, और जिस साधना को सम्पन्न कर हम सभी सन्यासी शिष्यों ने इस पूर्णता को प्राप्त की थी, जो विशेष रूप से स्वामी निखिलेश्वरानन्दजी के लिए ही यह प्रयोग विधि बनाई गई थी, जो प्रयोग विधि महा तेजस्वी योगीराज महारूपा जी से प्राप्त हुई थी, और जिसके माध्यम से साधनाओं में सम्पूर्ण सिद्धियां प्राप्त करने में हम लोगों ने सफलता पाई थी, उसी प्रयोग विधि को मैं इस बार पूज्य गुरूदेव से क्षमा याचना करते हुए, इस गोपनीय विधि को स्पष्ट कर रहा हूं।

विनियोग

ॐ अस्य श्री प्राणात्मन निखिलेश्वरानन्द मंत्रस्य भगवान श्री महारूपा ऋषि गायत्री छन्द निखिलेश्वरानन्द योगीश्वर्यै, क्लीं बीजम्, श्रीं शक्ति ऐं कीलकं, प्रणवो ॐ व्यापक मम समस्त क्लेश परिहारार्थं चतुर्वर्ग फल प्राप्तये सर्व सिद्धि सौभाग्य वृद्धयर्थे मंत्र जपे विनियोगः।

ऋष्यादि न्यास

श्री महारूपा ऋषये नमः - शिरसि।
गायत्री छन्द से नमः - मुखे।
निखिलेश्वरानन्द ऋषिभ्यो नमः- हृदि।
क्लीं बीजाय नमः - गुह्ये।
श्रीं शक्तये नमः - नाभौ।
ऐं - कीलकाय नमः - पादयोः।
ॐ व्यापकाय नमः - सर्वांगें।
मम समस्त क्लेश परिहारार्थं चतुर्वर्ग फल प्राप्तये सर्व सिद्धि सौभाग्य वृद्धयर्थ मंत्र जपे विनियोगाय नमः –पुष्पांजली।

षडंग न्यास

ॐ ऐं श्रीं क्लीं
प्राणात्मन
"निं"
सर्व सिद्धि प्रदाय
निखिलेश्वरानंदाय
नमः

कर-न्यास

अंगुष्ठाभ्यां नमः
तर्जनीभ्यां स्वाहा
मध्यमाभ्यां वषट्
अनामिकाभ्यां हुं
कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्
कर-तल-कर पृष्ठाभ्यां फट्

अंग न्यास

हृदयाय नमः
शिरसे स्वाहा
शिखायै वषट्
कवचाय हूं
नेत्र-त्रयाय वौषट्
अस्त्राय फट्

मानस पूजन

१- ॐ "लं" पृथिव्यात्मक गन्धं प्राणात्मन निखिलेश्वरानंद श्री पादुकाभ्यां नमः – अनुकल्पयामि।
२- ॐ "हं" आकाशात्मकं पुष्पं प्राणात्मन निखिलेश्वरानंद श्री पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि।
३- ॐ "यं" वायवात्मकं धूपं प्राणात्मन निखिलेश्वरानंद श्री पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि।
४- ॐ "रं" वन्ह्यात्मक दीपं श्री प्राणात्मन निखिलेश्वरानंद श्री पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि।
५- ॐ "वं" अमृतात्मकं नैवेद्यं श्री प्राणात्मन निखिलेश्वरानंद श्री पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि।
६- ॐ "शं" शक्त्यात्मकं ताम्बूलं श्री प्राणात्मन निखिलेश्वरानंद श्री पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि।

मंत्र

ॐ ऐं श्रीं क्लीं प्राणात्मन "निं" सर्व सिद्धि प्रदाय निखिलेश्वरानंदाय नमः
(सवा लाख मंत्र जप से सिद्धि)

निखिलेश्वरानंद पंच रत्न स्तवन

ॐ नमस्ते सते सर्व-लोकाश्रयाय, नमस्ते चिते विश्व-रूपात्मकाय।
नमो द्वैत-तत्वाय मुक्ति-प्रदाय, नमो ब्रह्मणे व्यापिने निर्गुणाय ॥१॥
त्वमेकं शरण्यं त्वमेकं वरेण्यम्, त्वमेकं जगत्-कारण विश्व-रूपम्।
त्वमेक जगत्-कर्तृ-पातृ-प्रहर्तृ, त्वमेकं परं निश्चलं निर्विकल्पम् ॥२॥
भयानां भयं भीषणं भीषणानाम्, गतिः प्राणिनां पावनं पावनानाम्।
महौच्चैः पदानां नियन्तृ त्वमेकम्, परेषां परं रक्षकं रक्षकानाम् ॥३॥
परेशं प्रभो सर्व-रूपाविनाशिन्, अनिर्देश्य सर्वेन्द्रियागम्य सत्य।
अचिन्त्याक्षर व्यापकाव्यक्त-तत्व, जगद्-भासकाधीश पायादपायात् ॥४॥
तदेकं स्मरामस्तदेकं जपामः, तदेकं जगत्-साक्षि-रूपं नमामः।
तदेकं निधानं निरालम्बमीशम्, भवाम्भोधि-पोत शरण्यं व्रजामः ॥५॥
पंच रत्नमिदं स्तोत्रं ब्रह्मणः परमात्मनः। यः पठेत् प्रयतो भूत्वा ब्रह्म सायुज्य माप्नुयात् ॥६॥

अर्थात् हे गुरूदेव ! आप मेरे जीवन के आराध्य हो, आप नित्य हो, समस्त लोकों के आश्रय हो, आपको नमस्कार करता हूं। हे योगी राज ! आप ज्ञान स्वरूप हो, विश्व को आत्मा स्वरूप हो, आप अद्वैत तत्व प्रदायक मुक्तिदायक आपको नमस्कार है, आप सर्व व्यापी निर्गुण ब्रह्म हो, सगुण रूप में आप हम समस्त शिष्यों के सामने उपस्थित हो, आपको नमस्कार है,

आप ही हम समस्त शिष्यों के एक मात्र "शरण्य" अर्थात् आश्रय हो, आप इस संसार में हमारे लिए अद्वितीय वरणीय हो, आप ही समस्त सिद्धियों के एक मात्र कारण हो, आप विश्व रूप हो, आप के मुंह में और कण्ठ में सम्पूर्ण विश्व समाया हुआ है जिसे हमने कई बार अनुभव किया है। आप ही समस्त सिद्धियों के संसार के श्रेष्ठी कर्ता, निर्माण, कर्ता, पालन कर्ता और संहार कर्ता हो। आप निश्चल और विविध कल्पनाओं से रहित पूर्णता प्राप्त षोडश कला युक्त पूर्ण पुरूष हो, आपको हम शिष्यों का नमस्कार है।

आप भय के भी भय हो, अर्थात् आपके नाम का स्मरण करते ही भय समाप्त हो जाता है, आप विपत्तियों के लिए विपत्ती स्वरूप हो, आपको देखते ही या आपका नाम स्मरण करते ही हम लोगों की विपत्तियां समाप्त हो जाती हैं। हम सब शिष्यों की आप एक मात्र गति हो। आप पवित्रता के साक्षात् स्वरूप हो, उच्च पद पर जितनी भी महाशक्तियां है, आप उनके आधार स्वरूप हो, आप संसार के सभी श्रेष्ठ पदार्थो से प्रेरित हो, और रक्षकों के पूर्ण रूप से रक्षक हो, हम सब शिष्य आपको भक्ति भाव से प्रणाम करते है।

हे, तपस्वी, हे प्रभु, समस्त शिष्यों के हृदय में विराजमान अविनाशी रूप में रहते हुए, समस्त शिष्यों का कल्याण करने वाले और समस्त प्रकार का इन्द्रियों पर पूर्ण रूप से नियंत्रण करने वाले आप पूर्ण रूप से अगोचर होते हुए भी हम सब लोगों के सामने साक्षात देह रूप में उपस्थित हो। हे सत्य स्वरूप, हे अचिन्त्य, हे अक्षर, हे व्यापक, हे न कहने वाले तत्व, हे ब्रह्म स्वरूप, हे मेरे आराध्य, हे मेरे प्राणों में निवास करने वाले, हम समस्त शिष्य आपके चरणों में है, आप हमें अपनी भक्ति, अपना ज्ञान, और अपना स्नेह प्रदान करें, हम आपको भक्ति भाव से प्रणाम करते हैं।

हम तो और किसी इष्ट को नहीं जानते, न तो हमें मंत्र का ज्ञान है, और न तंत्र का, न हमें पूजा विधि आती है, और साधना रहस्य, हमें तो केवल गुरू मंत्र का जप करने में ही समर्थ है, पल पल पर आप द्वारा बिखेरी हुई माया से हम कई बार भ्रमित हो जाते है, और आपको सामान्य मानव समझने की गलती कर बैठते है, आपको सामान्य मानव की तरह हंसते और उदास होते हुए देखते और विचरण करते हुए, कहते और सुनते हुए जब अनुभव करते है, तो हम सामान्य शिष्य भ्रम में पड़ जाते है, और हमारा सारा ज्ञान उस एक क्षण के लिए तिरोहित हो जाता है। हम बार बार जन्म लेते है, संसार के दुखों में संसार की समस्याओं और गृहस्थ की परेशानियों में डूबते उतरते हुए आपका भली प्रकार से चिन्तन नहीं कर पाते, हमें और कुछ भी नहीं आता, हम तो केवल आतुर कण्ठ से "गुरूदेव" शब्द का उच्चारण ही कर सकते हैं, और इसी शब्द के माध्यम से आपके द्वारा सिद्धाश्रम प्राप्त कर पूर्ण ब्रह्म में लीन हो जाना चाहते है, हम तो केवल इतना जानते है, कि आप ही हमारे आश्रय भूत हो, आप ही हमारे जीवन के आधार हो, आप ही हमारे भव सागर के जहाज स्वरूप हो हम तो केवल आपका ही आश्रय ग्रहण करते है, और आपको हम सब श्रद्धायुक्त प्रणाम करते है।

जो इस पंच रत्न स्तवन का नित्य पाठ करता है, वह निश्चय ही समस्त विकारों से मुक्त होकर ब्रह्म स्वरूप गुरू चरणों में लीन होने की सामर्थ्य प्राप्त कर लेता है। प्रति दिन इस स्तवन का पाठ करना चाहिए, अथवा सोमवार और गुरूवार का तो निश्चय ही इसका पाठ कर बाद में ही अन्न जल ग्रहण करना चाहिए।

देह सूक्ष्म प्रयोग

उपरोक्त पंच रत्न स्तवन का पाठ करने के बाद साधक निम्न प्रकार से देह सूक्ष्म प्रयोग सम्पन्न करें।

साधक हाथ में जल लेकर संकल्प करे, कि मैं अमुक गौत्र, अमुक नाम का शिष्य अपने देह की रक्षा करता हुआ, अपने स्थूल देह को सूक्ष्म देह में परिवर्तित कर समस्त ब्रह्माण्ड में विचरण करने की सामर्थ्य प्राप्त करने के लिए परम पूज्य गुरूदेव को और उनकी समस्त शक्तियों उनके समस्त ज्ञान, और उनकी समस्त सिद्धियों के साथ मैं उन्हें अपने शरीर में समाहित करता हूं।

गुरूदेव शिरः पातु हृदयं निखिलेश्वरः ।
कंठं पातु महायोगी वदनं सर्व-दृग्-विभुः ।
करो मे पातु पूर्णात्मा पादो रक्षतु स्वामिनः ।
सर्वांगं सर्वदा पातु परं ब्रह्म सनातनम् ।
यः पठेद् गुरू कवचं ऋषि-न्यास पुरः सरम् ।
स ब्रह्म ज्ञानमासाद्य साक्षात् ब्रह्म मयो भवेत् ।
भूर्जे विलिख्य गुटिकां स्वर्णस्थां धारयेद् यदि ।
कण्ठे दक्षिणे बाहौ सर्व सिद्धिश्वरो भवेत् ।
इत्येतत् परमः गुरू कवचं यः प्रकाशितम् ।
दद्यात् प्रियाय शिष्याय-भक्ताय प्रिय धीमते ।

अर्थात् परम पूज्य गुरूदेव हमारे सिर की रक्षा करें, परम पूज्य स्वामी निखिलेश्वरानंदजी हमारे हृदय की रक्षा करे, महायोगी गुरूदेव हमारे कण्ठ की रक्षा करें, और समस्त ब्रह्माण्ड को देखने वाले ब्रह्म स्वरूप गुरूदेव हमारे शरीर की रक्षा करे,

पूर्ण स्वरूप गुरूदेव मेरे दोनों हाथों की रक्षा करे, मेरे स्वामी गुरूवर मेरे दोनों पैरों की रक्षा करे, सनातन ब्रह्म स्वरूप परम पूज्य गुरूदेव स्वामी निखिलेश्वरानन्दजी मेरे समस्त शरीर की रक्षा करे।

इस गुरु कवच का ऋषि महायोगी, छन्द अनुष्टुप देवता स्वयं गुरूदेव तथा चतुर्वर्ग फल प्राप्ति के लिए यह प्रयोग है। जो शिष्य इस प्रयोग का पाठ करता है, वह समस्त सिद्धियों को प्राप्त कर गुरुदेव का प्रिय बनता हुआ पूर्ण रुप से ब्रह्म मय हो जाता है।

जो शिष्य इस कवच को भोज पत्र पर लिख कर स्वर्ण गुटिका में रख कर अपने कण्ठ या दाहिनी भुजा पर धारण करता है, वह निश्चय ही समस्त प्रकार की सिद्धियों का स्वामी होता हैं।

मैंने अत्यन्त गोपनीय इस गुरु कवच को स्पष्ट किया है, इसे गुरु भक्त बुद्धिमान और प्रिय शिष्य को ही प्रदान करना चाहिए।

इस प्रकार साधक इस स्तोत्र कवच का पाठ कर दोनों हाथ जोड़ कर गुरूदेव के चित्र या उनकी पादुका के सामने भक्तिभाव के साथ प्रणाम करे-

करूणामय ! दीनेश ! तवाहं शरणं गतः ।
त्वत्-पदाम्भोरुहच्छायां देहि मूर्ध्नि यशोधन ।।

अर्थात् हे, करूणामय, हे तीन लोकों के ईश्वर, मैं आपकी शरण में आया हूँ, हे गुरूदेव, हे कृपापुंज ! मेरे मस्तक पर अपने चरण कमलों की छाया प्रदान करे।

इस प्रकार साधना और प्रयोग सम्पन्न करने के बाद जब गुरू प्रसन्न होते है, तो उनके चित्र से या उसकी पादुका से (यदि वे साक्षात उपस्थित हो तो उनके मुंह से) शब्द उच्चरित होते हैं-

उत्तिष्ठ वत्स । मुक्तोऽसि ब्रह्म-ज्ञान-परो भव ।
जितेन्द्रियः सत्य-वादी बलारोग्यं सदास्तु ते ।।

यदि पूज्य गुरूदेव सशरीर सामने उपस्थित न हो तो साधक ऐसा अनुभव करे, कि पूज्य गुरूदेव उसे ऐसा ही आशीर्वाद दे रहे है।

अर्थात् हे पुत्र, हे शिष्य, हे आत्मीय, उठो, तुम मुक्त हो, मेरे शिष्य रहते हुए ब्रह्म ज्ञान का अध्ययन करो, तुम इन्द्रियों पर अपने विकारों और बुद्धि पर नियंत्रण करते हुए सत्यवादी बने रहो, और चुनौतियों का दृढ़ता के साथ सामना करो। बल और आरोग्य हमेशा तुम्हारे साथ रहे और तुम पूर्णता प्राप्त करो।

इसके बाद साधक खडे हो कर पूर्ण भक्ति भाव से गुरूदेव की आरती सम्पन्न करे और गुरूदेव को समर्पित किया हुआ प्रसाद स्वयं तथा अपने परिवार को दे, तथा गुरूदेव का आज्ञाकारी हो कर देवता के समान भूमण्डल पर विचरण करता हुआ, उनके आदर्शों का पालन करे।

○○
○○

निखिलेश्वरं

निखिलेश्वरं भुवनेश्वरं, भवनेश्वरं, यजनेश्वरं। परमेश्वरं मदनेश्वरं सर्वेश्वरं कामेश्वरं ।
वरणेश्वरं, करणेश्वरं, भाग्येश्वरं, दक्षेश्वरं। कार्येश्वरं, कर्मेश्वरं, पूर्णेश्वरं निखिलेश्वरं ।।१।।

यक्षेश्वरं, दक्षेश्वरं, अमलेश्वरं, कमलेश्वरं। नाथेश्वरं, योगेश्वरं, गैरेश्वरं, नामेश्वरं ।
लेखेश्वरं, लक्ष्येश्वरं, मायेश्वरं, सकलेश्वरं । नरमेश्वरं, शिष्येश्वरं विमलेश्वरं निखिलेश्वरं ।।२।।

पदमेश्वरं, कनकेश्वरं देहेश्वरं, देवेश्वरं,। ज्ञानेश्वरं, तापेश्वरं, कायेश्वरं, वागीश्वरं ।
मणिकेश्वरं, पलभेश्वरं, इच्छेश्वरं, पूर्णेश्वरं। मंत्रेश्वरं तंत्रेश्वरं यंत्रेश्वरं निखिलेश्वरं ।।३।।

एकेश्वरं, दित्यैश्वरं, भव्येश्वरं, शब्देश्वरं । विद्येश्वरं परमेश्वरं जयमेश्वरं रक्षेश्वरं ।
तारेश्वरं, शक्तिश्वरं, भक्तेश्वरं शक्त्येश्वरं। धरणीश्वरं व्यापेश्वरं, सिद्धेश्वरं निखिलेश्वरं ।।४।।

श्रींशेश्वरं ह्रींशेश्वरं, क्लींशेश्वरं, भायेश्वरं । चिन्त्येश्वरं, एकेश्वरं वागेश्वरं कालेश्वरं ।
तपसेश्वरं, तापेश्वरं सृष्टयेश्वरं, तरणेश्वरं । निखिलेश्वरं निखिलेश्वरं निखिलेश्वरं निखिलेश्वरं ।।५।।

क्या आप साधना में असफल हो रहे हैं ?

क्या आपको अभी तक किसी प्रकार की अनुभूति नहीं हुई ?

क्या आपने अभी तक अपने इष्ट के साक्षात दर्शन नहीं किये

तो फिर पूज्य गुरूदेव के जन्म दिवस पर यह लेख आपके लिये

प्रत्यक्ष सिद्धि साधना प्रयोग

★

कई बार साधकों को प्रयत्न करने पर भी सफलता नहीं मिल पाती, वे गुरु आज्ञा से किसी साधना में भाग तो लेते है, अपनी तरफ से पूरा प्रयत्न भी करते हैं, उनका प्रयत्न भी यही होता है कि वे जो साधना कर रहे है उसमें उन्हें सफलता मिल जाय। परन्तु प्रयत्न करने पर भी न तो उन्हें किसी प्रकार की अनुभूति होती है. और न किसी प्रकार की सफलता ही मिलती है, इससे उनका मन खिन्न हो जाता है।

और यह खिन्नता साधक को उदासीन बना देती है, वह यह सोचता है कि ये साधनाएं क्या सही है, क्या इन साधनाओं से सफलता मिलती भी है, क्या किसी को इष्ट के साक्षात दर्शन हुए भी है और इन सबसे धीरे धीरे साधक साधना से किनारा करता रहता है।

परन्तु यही स्थिति शिष्य या साधक के लिए घातक होती है, मनुष्य वह होता है, जो पूरे प्रयत्न से और निरन्तर प्रयत्न से सफलता प्राप्त करता है, कोई भी कार्य या सफलता पहली या दूसरी बार में ही नहीं मिल जाती। हिमालय पर चढ़ने के लिए तेनजिंग को २६ बार प्रयत्न करना पड़ा। महाकाली सिद्ध करने के लिए रामकृष्ण परमहंस को १७ बार एक ही साधना को बार-बार करना पड़ा। स्वामी विवेकानंद ने १४ बार कुण्डलिनी जागरण साधना सम्पन्न करने के बाद अपनी पूर्ण कुण्डलिनी जागृत की थी, पर इन साधको ने हिम्मत नहीं हारी, इन साधकों के मन में किसी प्रकार की वितृष्णा पैदा नहीं हुई, जब गुरू ने कह दिया तो उन्होंने उस बात को दृढ़ता से स्वीकार कर लिया और निरन्तर प्रयत्न में रहे कि मुझे अपने जीवन में और साधना में सफलता प्राप्त करनी ही है,

अौर उन्होंने सफलता प्राप्त की। सफलता की प्राप्ति ही नहीं की, अपितु अपने अपने क्षेत्र में विश्व प्रसिद्ध भी हुए वास्तव में ही वे माताएं धन्य है, जो ऐसे पुत्र उत्पन्न करती है, जिनके मन में दृढ़ निश्चय होता है, जो पूणता के साथ गुरु आज्ञा का पालन करते है, और निरन्तर साधना में रत रह कर पूर्णता, सफलता और श्रेष्ठता प्राप्त कर लेते हैं, ऐसे ही साधक प्रकाश पुंज बन कर पूरे विश्व को आलोकित करते हैं, और अपना तथा अपने कुल का नाम सम्मानित करते है।

साधना में दृढ़ता

साधना में दृढ़ता के लिए यह आवश्यक है, कि साधक का गुरू के प्रति पूर्ण प्रेम भाव सम्मान और निष्ठा होनी चाहिए, मैंने कई साधकों को देखा है, कि उनके दिन भर के कार्य छल प्रपंचमय होते है, और उनके मुंह से चौबीसों घण्टे 'अनुभूति' शब्द की रट लगी रहती है, बार-बार उनके मुंह से यही शब्द निकलते है कि हमें तो अनुभूति नहीं हुई, वे समय मिलने पर आलोचना, निन्दा और अपनी बड़ाई करते रहते है, गुरू के प्रति जो सम्मान भावना होनी चाहिए, जो अन्तरंगता और तादात्म्य होना चाहिए वह तो पूरी तरह से होता नहीं, और अनुभूति की उम्मीद करते है, यह कैसे संभव है। शास्त्रों में कहा गया है-

> जिह्वा दग्धं परान्नेन, हस्तो दग्धो प्रतिग्रहात्।
> मनो दग्धं पर-स्त्रीभिः, कथं सिद्धि वरानने॥

अर्थात् छल कपट और झूठ के साथ व्यापार करने से हाथ जल जाते है, या दग्ध हो जाते है, दूसरों की तथा गुरू की निन्दा करने पर और अशुद्ध अन्न खाने पर जीभ दग्ध हो जाती है, दूसरी स्त्री के प्रति रूचि लेने पर मन दग्ध हो जाता है, फिर ऐसे साधक को सिद्धि कहां मिल सकती है।

शास्त्रों में कहा गया है, कि अपना कार्य करना साधक के लिए आवश्यक है, पर साधना में सफलता के लिए जीभ निरन्तर गुरू मंत्र और मन का निरन्तर गुरू

पूज्य गुरुदेव

के प्रति समर्पण होना आवश्यक है, और जब ऐसा विशुद्ध भाव से हो जाता है, तो फिर अनुभूति भी हो जाती है, सफलता भी मिल जाती है और साधना में सिद्धि भी मिल जाती है।

फिर भी शास्त्रों में साधक के जीवन में न्यूनता होने पर कुछ विशेष प्रयोग दिये है, जिसे सम्पन्न करने पर सिद्धि और साधना वश्य प्राप्त हो जाती है, नीचे मैं कुछ गोपनीय प्रत्यक्ष सिद्धि साधना प्रयोग दे रहा हूं जिसे सम्पन्न करने पर निश्चय ही सफलता प्राप्त होती है।

साधना प्रयोग

सर्व प्रथम साधक या साधिका मन में यह निश्चय करे कि मुझे अपने जीवन में साधना में सफलता प्राप्त करनी ही है, और इसके लिए मेरे मन से, वचन से शरीर से या वाणी से जो पाप और दोष हुए है, या जो पाप

और दोष हो रहे है, उनकी निवृत्ति के लिए तथा शीघ्र ही साधना में सिद्धि के लिए मैं यह प्रयोग सम्पन्न कर रहा हूं।

यह प्रयोग आठ दिन का है, किसी भी गुरूवार के प्रातः काल से प्रारम्भ करके अगले गुरूवार को यह प्रयोग सम्पन्न होता है। साधक प्रातः काल स्नान कर शुद्ध स्वच्छ वस्त्र धारण कर पूर्व दिशा की ओर मुंह कर सफेद सूती आसन पर एक निष्ठ हो कर बैठ जाय और सामने रजत पात्र या ताम्र पात्र अर्थात् चांदी की थाली या तांबे के पात्र में कुंकुम से स्वस्तिक का चिन्ह बनावे, और इसे किसी लकड़ी के बाजोट पर सफेद वस्त्र बिछा कर उस पर स्थापित कर दें।

फिर अत्यन्त दुर्लभ और महत्वपूर्ण "प्रत्यक्ष सिद्धि-प्रदाय महाविद गुरु यंत्र" को स्थापित कर दे। यह यंत्र अत्यन्त गोपनीय, दुर्लभ और महत्वपूर्ण होता है जिस पर विशेष महाविद्या मंत्र से अभिसिंचन किया हुआ होता है। यह यंत्र अपने सदगुरू से प्राप्त कर लेना चाहिए, (यों पत्रिका कार्यालय ने इस प्रकार के बहुत कम यंत्र साधकों के कल्याण के लिए सम्पन्न करवाये है जिनमें से प्रत्येक यंत्र पर न्यौछावर मात्र २५०) रु. आया है, इस पर सवा लक्ष परकृत मंत्र से सम्पन्न कर पूर्ण सिद्धिकृतं बनाया है, और इसे स्वस्तिक पर नीचे पुष्प बिछा कर उस पर स्थापित कर देना चाहिए, और पीछे पूज्य गुरूदेव का चित्र यदि साधक के पास हो, तो उसे मढ़वा कर स्थापित करना चाहिए, इसके बाद साधक अपनी मूल साधना प्रारम्भ करे।

साधना सिद्धि

सर्व प्रथम साधक अपने बांये हाथ में जल लेकर दाहिने हाथ से शरीर पर जल छिड़कता हुआ अपने शरीर को पवित्र करे-

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।

इसके बाद साधक अपने दाहिने हाथ में जल लेकर तीन बार आचमन करे-

१- ॐ आत्म तत्वं शोधयामि स्वाहा।

२- ॐ विद्या-तत्वं शोधयामि स्वाहा।

३- ॐ गुरु-तत्वं शोधयामि स्वाहा।

तीन बार आचमन करने के बाद अपने हाथ धो कर पवित्र कर दे, और फिर दाहिने हाथ में जल ले कर संकल्प करे-

ॐ तत्सत् अद्यैतस्य ब्रह्मणो द्वितीय-प्रहरार्द्धे श्वेतवाराह कल्पे जम्बू-द्वीपे भरत-खण्डे अमुक-प्रदेशे अमुक-पुण्य-क्षेत्रे कलियुगे कलि-प्रथम चरणे अमुक-सम्वत्सरे अमुक-मासे अमुक-पक्षे अमुक-तिथौ अमुक-वासरे अमुक-गौत्रोत्पन्नो अमुक-नाम-शर्मा सर्वत्र यशो-विजयादि लाभार्थं सर्वारिष्ट निवृत्ति-पूर्वक-सफल-मनोकामना-सिद्धयर्थं च श्री गुरुदेव प्रीत्यर्थं सर्वसिद्धि साफल्य हेतु प्रत्यक्ष सिद्धि प्रयोग मह करिस्यै।

इस प्रकार संकल्प पढ़ कर दाहिने हाथ में लिया हुआ जल अपने सामने रखे हुए पात्र में छोड़ दें।

रक्षा विधान

इसके बाद बांये हाथ में थोडे से चावल लेकर दाहिने हाथ से उन चावलों को अपने चारों ओर छिड़कते हुए निम्न प्रकार से रक्षा विधान करे-

ॐ गुरु वै महाशान्तिक भूतप्रेतपिशाचराक्षसानां सर्वदृष्टिभयविनाशाय स्वाहा ।

ॐ नमो भगवते रूद्राय स्वाहा । ॐ नमो भैरवाय स्वाहा । ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा । ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा । ॐ सिं सिंह शार्दूल गजेन्द्र–ग्राह–वक्र सर्पव्याघ्रादिमृगान् बन्धामि । ॐ श्रोत्रं बन्धामि । ॐ वाछं बन्धयामि । ॐ गति बन्धामि । ॐ आशां बन्धामि । ॐ दिशां बन्धाम । ॐ सवबन्धं बन्धामि । ॐ सर्वमायां वन्धामि । ॐ सर्वजनान् बन्धामि । ॐ बन्धं बन्धामि कुरू स्वाहा । ॐ पंचयां–जनविस्तीर्णं रुद्रो वदति मण्डलं कुरु स्वाहा ।

ॐ नमो भगवते सद्गुरु रात्रिज्वर–सायंज्वर–प्रातर्ज्वर-अग्निज्वर–शीतज्वर-द्वन्द्वज्वर-राक्षसज्वर-भूतज्वर-माण्डज्वर-पापिज्वर–मति–प्रयोगादि ज्वरविनाशाय स्वाहा ।

अक्षिशूल-कुक्षिशूल-कर्णशूल–प्राणशूल–दन्त–शूल - गण्डशूल–शिरःशूल शिरोर्द्ध शूल–पादशूल––पदार्द्ध शूल–सर्वागंशूलविनाशाय स्वाहा ।

ॐ सर्वव्याधिविनाशाय स्वाहा । ॐ सर्वशत्रुविनाशाय स्वाहा । ॐ अपहृतशोकादिविनाशाय स्वाहा । ॐ आत्मरक्षे प्राणरक्षे अग्निरक्षे प्रथम अग्निरक्षे ते शावकं बन्धामि ॐ ह्रां ह्रीं देहि स्वाहा । ॐ इन्द्राय देहि स्वाहा । ॐ स्वर स्वर ब्रह्मदं इति विजाते विष्णुदण्ड ॐ ज्वर ज्वर ईश्वरदण्ड ॐ जं तं नं भंजनिरिति दण्ड ॐ प्रहर ३ ह्रीं लीं ह्रीं लीं यमदण्ड ॐ नित्य-नित्य दण्डविषये विश्वाश्व–वाहिनि हंसिनि शूलिनि गारुडि रक्षे आयुः पुत्रं प्रवक्ष्यामि ।

इसके बाद साधक इस पात्र में रखे हुए दुर्लभ गोपनीय और महत्वपूर्ण यंत्र का मानस पूजन सम्पन्न करे।

मानस पूजन

१– ॐ **"लं"** पृथ्वी तत्वात्मकं गन्धं श्री गुरुदेव प्रीतये समर्पयामि नमः ।
२– ॐ **"हं"** आकाश-तत्वात्मकं पुष्पं श्री गुरुदेव प्रीतये समर्पयामि नमः ।
३– ॐ **"यं"** वायु तत्वात्मकं धूपं श्री गुरुदेव प्रीतये आघ्रापयामि नमः ।
४– ॐ **"रं"** अग्नि-तत्वात्मकं दीपं श्री गुरुदेव प्रीतये दर्शयामि नमः ।
५– ॐ **"वं"** जल तत्वात्मकं, नैवैद्यं श्री गुरुदेव प्रीतये समर्पयामि नमः ।
६– ॐ **"सं"** सर्व–तत्वात्मकं ताम्बूलं श्री गुरुदेव प्रीतये समपंयामि नमः ।

इसके बाद साधक १०१ माला (रूद्राक्ष या शुद्ध स्फटिक माला से मंत्र जप सम्पन्न करे ।

मंत्र

ॐ परमतत्वाय नारायणाय गुरुम्यो नमः

(शेष पृ. ३९ पर)

पूर्व जन्म कृत दोष निवारणार्थ

शमन—प्रयोग

साधक को कई बार प्रयत्न करने पर भी साधनाओं में सफलता नहीं मिल पाती, इसके कई कारणों में से एक कारण यह भी होता है, कि उस साधक के पिछले जीवन के या इस जीवन के दोष या पाप इतने अधिक होते है, कि वह प्रयत्न करने पर भी सफल नहीं हो पाता।

इसके लिए पांच चिन्तन स्पष्ट हैं-१) दीक्षा यदि नहीं ली हुई हो तब भी साधना में सफलता संदिग्ध रहती है, दीक्षा के उपरान्त भी यदि गुरू के प्रति आलोचना उनके प्रति भ्रम और संशय रहता है, तो भी सफलता नहीं मिल पाती ३- जो साधना काल में अपने इष्ट और गुरू में अन्तर समझता है, या पूर्ण हृदय से गुरू-चिन्तन, गुरू पूजा अथवा गुरु मंत्र जाप नहीं कर पाता है, तब भी साधना में सफलता नहीं मिल पाती। ४- गुरू के बताये हुए कार्यों में शिथिलता बरतना या आज्ञा पालन में न्यूनता रखने से भी साधना में सफलता संदिग्ध हो जाती है ५- और पिछलें जीवन कें अथवा इस जीवन के पाप, दोष अधिक हो, तब भी प्रयत्न करने पर सफलता नहीं मिल पाती।

उपरोक्त पांच कारणों में से प्रथम चार या पहली चार बाधाएं तो गुरु की सेवा करने से उनके सानिध्य में रहने से अथवा उनकी आज्ञा का पालन करने से और निरन्तर गुरू मंत्र जप करने से इन चारों दोषों का शमन हो जाता है, पांचवा दोष गंभीर होता है क्यों कि मन से वचन से और कर्मगत किये गये कार्यो से दोष व्याप्त हो जाता है, अतः इस पांचवे प्रकार के दोष को दूर करने के लिए अर्थात् पिछलें जीवन के दोषों को और वर्तमान जीवन के दोषों को समाप्त करने के लिए यह प्रयोग अपने आप में अत्यन्त सशक्त, महत्वपूर्ण और दुर्लभ है, जो कि पत्रिका के इस १०० वे विशेषांक में साधकों के कल्याण हेतु प्रस्तुत कर रहा हूं।

यह प्रयोग गुरूवार को किया जाता है, और आठ गुरूवार तक यह प्रयोग सम्पन्न होता है। गुरुवार के दिन साधक स्नान कर पीली धोती धारण कर पूर्व या उत्तर दिशा की ओर मुंह कर बैठ जाय, सामने पूज्य गुरूदेव का अत्यन्त आकर्षक और सुन्दर चित्र स्थापित करे, तथा उनकी भक्तिभाव से पूजा करे। उन्हें नैवेद्य समर्पित करे, सुगन्धित अगरबत्ती प्रज्वलित करे, घी का दीपक लगावें, और स्वयं "गुरू रुद्राक्ष" माला धारण कर पूर्ण शुद्ध सात्विक भाव से निम्न प्रयोग सम्पन्न करे-

प्रयोग विधि

साधक तीन बार दाहिने हाथ में जल लेकर पी ले और उसके बाद हाथ धो कर प्राणायाम करे और फिर दाहिने हाथ में जल कुंकुम, पुष्प लेकर संकल्प करे।

ॐ विष्णु विष्णु विष्णु देशकालौ संकीर्त्य अमुक गौत्रस्य अमुक शर्माऽहम् ममोपरि इह जन्म गत जन्म स्वकृत परकृत–कारित क्रियमाण कारयिष्यमाण-भूत-प्रेत पिशाचादि मन्त्र-तन्त्र-यन्त्र त्रोटकादिजन्यसकलदोष बाधा निवृत्ति पूर्वक पूर्ण सिद्धि दीर्घायुरारोग्यैश्वर्यादि-प्राप्त्यर्थं शमन साधना प्रयोग करिष्ये।

ऐसा कह कर हाथ में लिया हुआ जल सामने रखे हुए पात्र में छोड़ दें और गले में पहनी हुई रूद्राक्ष माला से गुरू मंत्र जप करे-

ॐ परमतत्वाय नारायणाय गुरूभ्यो नमः

एक माला मंत्र जप करने के बाद उस रूद्राक्ष माला को गले में धारण कर लें **और पूर्व दिशा की ओर मुंह** कर बैठ जाय, सामने गुरू चित्र लकड़ी के बाजोट पर स्थापित करे, उस पर शुद्ध घृत का दीपक लगावें, और हाथ में जल लेकर संकल्प करे।

ॐ में पूर्ववत इह गतः पाप्मा पापकेनेह कर्मणा इन्द्र साक्षी भूतं निखिलेश्वरानंद मम समस्त दोष पाप भंजयतु भंजयतु मोहयतु नाशयतु मारयतु कलि तस्मे प्रयच्छतु कृतं मम (अपना नाम उच्चारण करे) गुरू शान्तिः स्वस्त्ययनंचास्तु।

इसके बाद पूर्व की ओर मुंह किये किये ही अपने गले में पहनी हुई रुद्राक्ष माला से निम्न गुरू मंत्र की एक माला मंत्र जप करे-

पूर्वदिशाकृत गुरु मंत्र

।। ॐ श्रीं निखिलेश्वरनंदाय श्रीं ॐ ।।

२- इसके बाद साधक अग्निकोण की ओर मुंह कर बैठ जाय सामने गुरू का चित्र स्थापित करे, उसकी संक्षिप्त पूजा करे और सामने घी का दीपक लगावे, इसके बाद हाथ में जल लेकर संकल्प करे–

ॐ योमे पूर्वगत इह गत पाप्मा पापकेनेह कर्मणा अग्नि साक्षी भूतं निखिलेश्वरानंदम् मम समस्त दोष पाप भंजयतु मोहयतु नाशयतु मारयतु कलि तस्मै प्रयच्छतु कृतं मम (अपना नाम उच्चारण करे) गुरू शांतिः स्वस्त्ययनचास्तु।

इसके बाद अग्निकोण की ओर मुंह किये किये ही अपने गले में पहनी हुई रुद्राक्ष माला से निम्न गुरू मंत्र की एक माला मंत्र जप करे-

अग्नि दिशा कृत गुरु मंत्र

ॐ ऐं ऐं निखिलेश्वर नंदाय ऐं ऐं नमः ।।

३– इसके बाद साधक **दक्षिण दिशा की ओर** मुंह कर बैठ जाय, सामने लकड़ी के बाजोट पर श्वेत वस्त्र बिछा कर गुरू चित्र स्थापित करे, उसकी संक्षिप्त पूजा करे और घी का दीपक लगावे इसके बाद हाथ में जल लेकर संकल्प करे-

ॐ योमे पूर्वगत इह गत पाप्मा पापकेनेह कर्मणा दक्षिण नाशयतु साक्षी भूतं निखिलेश्वरानंदम् मम समस्त दोष पाप भंजयतु भंजयतु मोहयतु नाशयतु मारयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु कृतं मम (अपना नाम उच्चारण करे) गुरु शान्तिः स्वस्त्ययनंचास्तु।

इसके बाद दक्षिण दिशा की और मुंह किये किये ही अपने गले में पहनी हुई रूद्राक्ष माला से निम्न गुरू मंत्र की एक माला मंत्र जप करे—

दक्षिण दिशा कृत गुरु मंत्र

ॐ ह्रीं परमतत्वाय निखिलेश्वराय ह्रीं नमः ।।

४- इसके बाद नैऋत्य दिशा की ओर मुंह कर सामने लकड़ी के बाजोट पर सफेद वस्त्र बिछा कर गुरू का चित्र स्थापित करे, उनकी संक्षिप्त पूजा करे और घी का दीपक जलावे इसके बाद हाथ में जल लेकर संकल्प करे-

ॐ योमे पूर्वगत इह गत पाप्मा पापकेनेह कर्मणा नैऋत्य रक्षराज साक्षी भूतं निखिलेश्वरानंदम् मम समस्त दोष पाप भंजयतु भंजयतु मोहयतु नाशयतु मारयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु कृतं मम (अपना नाम उच्चारण करे) गुरूं शान्तिः स्वस्त्ययनंचास्तु।

इसके बाद नैऋत्य कोण की मुंह किये किये ही अपने गले में पहनी हुई रूद्राक्ष माला से निम्न गुरू मंत्र की एक माला मंत्र जप करे-

नैऋत्य दिशा कृत गुरु मत्र

ॐ क्लीं क्लीं निखिलेश्वरनंदाय क्लीं क्लीं नमः ।।

इसके बाद साधक **उत्तर दिशा की** ओर मुंह कर सामने लकड़ी के बाजोट पर सफेद वस्त्र बिछा कर गुरु का चित्र स्थापित करे, उसकी संक्षिप्त पूजा करे और घी का दीपक लगावे इसके बाद हाथ में जल लेकर संकल्प करे-

ॐ योमे पूर्वगत इह गत पाप्मा पापकेनेह कर्मणा उत्तर दिशा वरूण साक्षी भूतं निखिलेश्वरानंदम् मम समस्त दोष पाप भंजयतु भंजयतु मोहयतु नाशयतु मारयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु कृत मम (अपना नाम उच्चारण करे) गुरू शान्तिः स्वस्त्ययनचास्तु।

५-इसके बाद उत्तर दिशा की ओर मुंह किये किये ही अपने गले में पहनी रुद्राक्ष माला से निम्न गुरु मंत्र की एक माला मन्त्र जप करे।

उत्तर दिशाकृत गुरु मंत्र

ॐ श्रीं श्रीं श्रीं निखिलेश्वर्यै श्रीं श्रीं श्रीं नमः ।।

इसके बाद **वायव्य दिशा की ओर मुंह कर** सामने लकड़ी के बाजोट पर सफेद वस्त्र बिछा कर गुरू का चित्र स्थापित करे, उनकी संक्षिप्त पूजा करे और घी का दीपक जलावे इसके बाद हाथ में जल लेकर संकल्प करे-

ॐ योमे पूर्वगत इह गत पाप्मा पापकेनेह कर्मणा वायव्य यक्षराज साक्षी भूतं निखिलेश्वरानंदम् मम समस्त दोष पाप भंजयतु भंजयतु मोहयतु नाशयतु मारयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु कृतं मम (अपना नाम उच्चारण करे) गुरू शान्तिः स्वस्त्ययनंचास्तु।

६-इसके बाद वायव्य कोण की ओर मुंह किये किये ही अपने गले में पहनी हुई रुद्राक्ष माला से निम्न गुरू मंत्र जप करे।

वायव्य दिशा कृत गुरु मंत्र

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं निखिलेश्वर्याय श्रीं ह्रीं ऐं ॐ ।।

इसके बाद साधक **पश्चिम दिशा की ओर मुंह कर**

सामने लकड़ी के बाजोट पर सफेद वस्त्र बिछा कर गुरू चित्र स्थापित करे, उसकी संक्षिप्त पूजा करे और घी का दीपक लगावे, इसके बाद हाथ में जल लेकर संकल्प करे-

ॐ योमे पूर्वगत इह गत पाप्मा पापकेनेह कर्मणा पश्चिम सोम विप्रराज साक्षी भूत निखिलेश्वरानंदम् मम समस्त दोष पाप भंजयतु भंजयतु मोहयतु नाशयतु मारयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु कृतं मम (अपना नाम उच्चारण करे) गुरू शांतिः स्वस्त्ययनंचास्तु ।

७- इसके बाद पश्चिम दिशा की ओर मुंह किये किये ही अपने गले में पहनी हुई रुद्राक्ष माला से निम्न गुरू मंत्र की एक माला से मंत्र जप करे ।

पश्चिम दिशा कृत गुरु मंत्र

।। ॐ क्रीं निखिलेश्वर नंदाय क्रीं ॐ ।।

इसके बाद साधक **ईशान दिशा की ओर मुंह कर** सामने लकड़ी के बाजोट पर सफेद वस्त्र बिछा कर गुरू का चित्र स्थापित करे, उनकी संक्षिप्त पूजा करे और घी का दीपक जलावे इसके बाद हाथ में जल लेकर संकल्प करे-

ॐ योमे पूर्वगत इह गत पाप्मा पापकेनेह कर्मणा ईशान पृथुरत्न साक्षी भूत निखिलेश्वरानंदम् मम समस्त दोष पाप भंजयतु भंजयतु मोहयतु नाशयतु मारयतु कलिं मे प्रयच्छतु कृतं मम (अपना नाम उच्चारण करे) गुरु शान्तिः स्वस्त्ययनंचास्तु ।

८-इसके बाद ईशान कोण की ओर मुंह किये किये ही अपने गले में पहनी हुई रूद्राक्ष माला से निम्न गुरू मंत्र की एक माला मंत्र जप करे-

ईशान दिशा कृत गुरु मंत्र

ॐ ह्रीं निखिलेश्वर्यै ह्रीं नमः ।।

९- इसके बाद ऊपर आकाश (अनन्त) दिशा की ओर मुंह कर सामने लकड़ी के बाजोट पर सफेद वस्त्र बिछा कर गुरु का चित्र स्थापित करे, उनकी संक्षिप्त पूजा करे और घी का दीपक जलावे इसके बाद हाथ में जल लेकर संकल्प करे-

ॐ योमे पूर्वगत इह गत पाप्मा पापकेनेह कर्मणा अनन्त ब्रह्मा सष्टिराज साक्षी भूत निखिलेश्वरानंदम् मम समस्त दोष पाप भंजयतु भंजयतु मोहयतु नाशयु मारयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु कृतं मम (अपना नाम उच्चारण करे) गुरु शांति स्वस्त्ययनंचास्तु ।

९- इसके बाद साधक ऊपर आकाश की ओर मुंह किये किये ही अपने गले में पहनी हुई रुद्राक्ष माला से निम्न गुरू मंत्र की एक माला से मंत्र जप करे-

अनन्त (आकाश) दिशा कृत गुरु मंत्र

।। ॐ "निं" निखिलेश्वर्यै "निं" नमः ।।

१०- इसके बाद भूमि की ओर नीचा मुंह कर सामने लकड़ी के बाजोट पर सफेद वस्त्र बिछा कर गुरू का चित्र स्थापित करे, उनकी संक्षिप्त पूजा करे और घी का दीपक जलावे इसके बाद हाथ में जल लेकर संकल्प करे -

ॐ योमे पूर्व गत इह गत पाप्मा पापकेनेह कर्मणा अधः नागराजो साक्षी भूत निखिलेश्वरानंदम् मम समस्त दोष पाप भंजयतु भंजयतु मोहयतु नाशयतु मारयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु कृतं मम (अपना नाम उच्चारण करे) गुरु शान्तिः स्वस्त्ययनंचास्तु ।

इसके बाद साधक भूमि की ओर मुंह किये किये ही अपने गले में पहनी रूद्राक्ष माला से निम्न गुरू मंत्र जप करे-

अध: (भूमि) दिशाकृत गुरु मन्त्र

ॐ निखिलं निखिलेश्वयैं निखिलं नमः ।

इसके बाद साधक इस प्रकार दसों दिशाओं से संबंधित प्रयोग सम्पन्न कर पुनः मूल गुरु मंत्र की एक माला मंत्र जप पूर्व दिशा की और मुंह कर करे।

ॐ परमतत्वाय नारायणाय गुरूभ्यो नमः

इस प्रकार एक गुरुवार का प्रयोग सम्पन्न होता है। इस प्रकार साधक आठ गुरुवार इसी प्रकार से प्रयोग सम्पन्न कर लें तो यह दुर्लभ और अद्वितीय प्रयोग संपन्न हो जाता है और इसके बाद साधक पूर्णतः पवित्र, दिव्य, तेजस्वी, प्राणश्चेतना युक्त एवं सिद्धाश्रम का अधिकारी होता हुआ, गुरु का अत्यन्त प्रिय शिष्य हो जाता है, और साथ ही साथ उसके पिछले जीवन और इस जीवन के सभी प्रकार के पाप दोष समाप्त हो जाते है।

यह दुर्लभ प्रयोग प्रत्येक साधक के लिए अपने आप में अद्वितीय है और साधकों को इसका अवश्य ही लाभ उठाना चाहिए।

(पृ. ३४ का शेष)

जप समर्पण

गुह्यातिं-गुह्य-गोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्-कृतं जपम् ।
सिद्धिर्मे भवतु देव तत्वत् कृतादान्महेश्वर ।

क्षमा प्रार्थना

मन्त्र-हीनं क्रिया-हीनं भक्ति हीनं सुरेश्वर।
यत् पठितं मया देवि ! परिपूर्णं तदस्तु में ॥

पुरश्चरण (मन्त्र-सिद्धि)

नित्य १०१ माला जप करते हुए, आठवें दिन अर्थात् अगले गुरूवार के दिन १०१ माला मंत्र जप हो जाने पर मंत्र जप का दशांश होम शुद्ध घृत से करे और उसी दिन आठ छोटे बालकों को भोजन करावे तथा उन्हें यथोचित वस्त्र दक्षिणा आदि दे, यदि यह संभव न हो तो आठ ब्राह्मणों को भोजन करावे।

इस प्रकार विधिवत् यह प्रयोग करने पर साधक सर्व सिद्धिप्रद बन जाता है, उसकी कुण्डलिनी जागृत होने लगती है और वह जीवन में किसी भी साधना को संपन्न कर पूर्ण सफलता प्राप्त कर लेता हैं।

वास्तव में ही यह अत्यन्त गोपनीय महत्वपूर्ण और और दुर्लभ प्रयोग है, जो प्रत्येक साधक को सम्पन्न कर जीवन में इष्ट के प्रत्यक्ष दर्शन और किसी भी साधना में सिद्धि प्राप्त कर अपने गुरू का प्रिय पात्र एवं अत्यन्त प्रिय शिष्य बनता हुआ समस्त संसार में अपना तथा अपने कुल का नाम रोशन करता है। ★

इस वर्ष की अद्वितीय दुर्लभ और सर्वश्रेष्ठ सिद्धि पुरुष साधना

एक ऐसी साधना जो अपने आपमें ही दिव्य और अद्वितीय है। "सिद्धि पुरुष साधना वह है, जिसके द्वारा आप किसी भी प्रकार की सिद्धि प्राप्त कर सकते है, फिर वह भले ही तारा साधना हो, अप्सरा साधना हो, भूत साधना हो, दस महाविद्या साधना हो, या सूक्ष्म प्राण साधना हो, इस एक साधना के द्वारा यह सब कुछ सहज ही प्राप्त हो सकता है।

इसीलिए उपनिषदों में कहा गया है कि जीवन की अद्वितीय स धना सिद्धि पुरूष साधना है, जिसे गुरू अपने अत्यन्त प्रिय शिष्य को ही ज्ञान दे। एक दूसरे उपनिषद में बताया है कि गुरू अपने जीवन में केवल एक बार किसी एक शिष्य को ही यह साधना प्रदान करे, एक अन्य ग्रन्थ में इस साधना के बारे में बताया है, कि इस साधना के द्वारा मनुष्य कुछ भी कर सकता है।

और मैं पूज्य गुरूदेव के जन्म दिवस पर इस दुर्लभ साधना को प्रस्तुत कर रहा हूं और मेरी राय में यदि सही अर्थों में कोई शिष्य है, और वह यह साधना सम्पन्न नहीं करता तो वह वास्तव में ही अभागा है, दुर्भाग्यशाली है।

साधना रहस्य

यह एक दिन की साधना है, जिसे आपको २१ अप्रेल से पहले पहले सम्पन्न कर लेनी है। किसी भी गुरूवार को आप स्नान कर पीले वस्त्र धारण कर पूर्व दिशा की ओर मुंह कर बैठ जांय, और सामने पात्र में "सिद्धि पुरुष यंत्र" स्थापित कर दे। यह यंत्र सूर्य के समान तेजस्वी, और कल्पवृक्ष के समान दुर्लभ है।

इस यन्त्र की संक्षिप्त पूजा कर इसके सामने अगरबत्ती और दीपक लगा कर निम्न मंत्र की १०१ माला सम्पन्न करे। २४ घंटों में १०१ माला पूरी हो जानी चाहिए या साधक चाहें तो प्रत्येक २१ माला सम्पन्न होने के बाद घण्टे आधे घण्टे तक विश्राम कर सकता है,

सिद्धि पुरूष मंत्र

जो आपको मंत्र जप करना है, वह इस प्रकार है-

ॐ ह्रीं तेजसे श्रों परम सिद्धि पुरुषै क्रीं फट्।।

और जब मंत्र जप पूरा हो जाय तो उस यंत्र को किसी चांदी की चैन या पीले धागे में पिरो कर अपने गले में धारण कर ले और आप तत्क्षण अनुभव कर सकेंगे कि यह यंत्र कितना प्रखर और तेजस्वी है, आप अनुभव कर सकेंगे कि सिद्ध यंत्र में कितनी अधिक क्षमता और तेजस्विता होती है।

सर्वथा मुफ्त में

और यह यंत्र आपको सर्वथा मुफ्त में पत्रिका कार्यालय देने जा रहा है। हम योग्य पंडितों से बहुत कम यंत्र तैयार करवा सके है। जिनका प्रपत्र पहले आयेगा उन्हीं को यह यंत्र दे सकेंगे। इसके लिए आप अपने किसी परिचित को पत्रिका सदस्य बना कर हमें निम्न प्रपत्र भर कर या इसकी प्रतिलिपि बना कर भर कर हमें भेज दें, हम आपको १०५) रू. की वी. पी. से यह दुर्लभ यंत्र भेज देगे, वी.पी. छूटने पर आप को यह यंत्र सर्वथा सुरक्षित रूप में मिल जायेगा और आपके मित्र को हम पूरे वर्ष भर नियमित रूप से पत्रिका देते रहेगे ।

और साथ में गोपनीय प्रपत्र भी आपको प्राप्त होगा, कि आप इस यंत्र का किस प्रकार से उपयोग करे। आप स्वयं यह अनुभव कर सकेगे कि यह यंत्र कितना तेजस्वी हैं।

हम किसी भी हालत में २१ अप्रेल के बाद यह यंत्र आपको नहीं भिजवा सकेंगे, अतः आपको सारे काम छोड़ कर इस यन्त्र को प्राप्त करने की प्रक्रिया करनी चाहिए आप निर्णय लेने में काफी समय लगा लेते है, पत्रिका आने पर आप एक तरफ रख देते है, और सोचते है, कि समय आने पर मंगा लेंगे, पर तब बहुत विलम्ब हो चुका होता है, अतः आपको चाहिए कि आप कम से कम इस मामले में ढील न बरते तुरन्त, निर्णय ले तथा नीचे दिया हुआ प्रपत्र भर ले या इसकी प्रतिलिपि कर भर कर ही हमें भेज दें, प्रपत्र प्राप्त होते ही आपको यह **दुर्लभ यंत्र और उसका गोपनीय रहस्य** सुरक्षित रूप से आपके पास १०५ रू. की वी. पी. से भेज देंगे। इसमें से ९६) रू. पत्रिका शुल्क आप अपने मित्र से और ९) रू. डाक खर्च उसमें प्राप्त कर ले। इस प्रकार यंत्र आपको सर्वथा सुरक्षित रूप में मिल जायेगा।

वी. पी. छूटने पर हम निष्ठापूर्वक पूरे वर्ष भर आपके मित्र को या परिवार के सदस्य को पत्रिका भेजते रहेंगे।

सिद्धि पुरूष यंत्र प्राप्ति प्रपत्र

पत्रिका सदस्यता संख्या....... ....

मैं आपका पत्रिका सदस्य हूँ और मुझे यह दुर्लभ यंत्र प्राप्त करने का अधिकार है। इसीलिए यह प्रपत्र भर कर आपको भेज रहा हूं, आप मुझे उपरोक्त दुर्लभ यंत्र निम्न पते पर भेज दें।

मेरा नाम...

मेरा पूरा पता..

....

वी.पी. छुड़ाने का मैं वायदा करता हूँ, वी. पी. छूटने पर मेरे निम्न मित्र या पारिवारिक सदस्य को पत्रिका सदस्य बना दे और पूरे वर्ष तक आप उन्हें नियमित रूप से पत्रिका भेजते रहे।

मेरे मित्र का नाम.......... ....

मेरे मित्र का पूरा पता .. ..

आप सभी प्रकार का पत्र व्यवहार निम्न पते से करें-

सम्पर्क

मंत्र तंत्र यंत्र विज्ञान
डा० श्रीमाली मार्ग हाई कोर्ट कोलोनी,
जोधपुर ३४२००१ (राज.)

रजि० नं० ३५३०५/८१ पोस्टल एल. आर. जे. ३६६७/८६-८७

।। नमः निखिलेश्वर्यायै ।।

ॐ नमः निखिलेश्वर्यायै कल्याण्यै ते नमो नमः ।
नमस्ते रुद्र रूपिण्यै ब्रह्म मूर्त्यै नमो नमः ।।१।।

नमस्ते क्लेश हारिण्यै मंगलायै नमो नमः ।
हर्रति सर्व व्याधिनां श्रेष्ठ ऋष्यै नमो नमः ।।२।।

शिष्यत्व विष नाशिन्यै पूर्णतायै नमोस्तुते ।
त्रिविध ताप संहर्त्यै ज्ञान दात्र्यै नमो नमः ।।३।।

शांति सौभाग्य कारिण्यै शुद्ध मूर्त्यै नमोस्तुते ।
क्षमावत्यै सुधावत्यै तेज वत्यै नमो नमः ।।४।।

नमस्ते मंत्र रूपिण्यै तंत्र रूपे नमोस्तुते ।
ज्योतिषं ज्ञान वैराग्यं पूर्ण दिव्यै नमो नमः ।।५।।

य इदं पठतं स्तोत्रं शृणुया श्रृद्धयान्वितं ।
सर्व पाप विमुच्यन्ते सिद्धयोगिश्च संभवे ।।१।।

रोगस्थो रोग तं मुच्येत् विपदा त्राणया दपि ।
सर्व सिद्धि भवेत्स्य दिव्य देह श्च संभवे ।।२।।

निखिलेश्वर्य पंचकं य नित्य यो पठते नरः ।
सर्वान् कामान् मवाप्नोति सिद्धाश्रमो च वाप्नुयात् ।।३।।

—किंकर स्वामी

गुरू पूर्णिमा के अवसर पर

गुरू रहस्य सिद्धि

एक बार मण्डन मित्र ने भगवत पाद शंकराचार्य को पूछा कि जीवन में हजारों प्रकार की साधनाएं देखी गयी है, सैकड़ों देवी देवता इष्ट हो सकते है, और विभिन्न साधना विधियां आदि प्रचलित है, परन्तु इनमें से मूल साधना कौनसी है वह साधना कौनसी है, जिसके द्वारा सारी साधनाएं स्वतः सिद्ध हो जाय, वह कौनसी साधना है, जिससे जीवन में भोग और मोक्ष दोनों प्राप्त हो जाय और वह साधना रहस्य क्या हैं, जिसके सम्पन्न करने पर जीवन में किसी प्रकार का कोई अभाव न रहे।

शंकराचार्य ने दो क्षण मण्डन मिश्र की ओर देखा और बोले-यदि सत्य ही जानना चाहते हो तो इस प्रकार की एक मात्र साधना गुरू सिद्धि साधना ही है। मनुष्य तो क्या, ऋषियो मुनियो और साधु सन्यासियों ने भी एक स्वर से स्वीकार किया है, कि गुरू साधना के द्वारा ही जीवन में पूर्णता पाई जा सकती है, यहां तक कि महर्षि वशिष्ठ और विश्वामित्र जैसे ऋषियों ने भी गुरू साधना को ही अपना आधार बनाया, युग पुरूष भगवान श्रीराम और सोलह कला पूर्ण श्री कृष्णचन्द्र ने भी गुरू साधना के द्वारा ही अभूतपूर्व सिद्धियां प्राप्त की।

ब्रह्मोपनिषद में तो स्पष्ट रूप से बताया गया है कि भगवान शिव ने स्वयं गुरू साधना के महत्व को स्वीकार किया, और परब्रह्म को ही गुरू मानकर उसकी साधना सम्पन्न की। स्वयं विष्णु ने भी इसी पद्धति को अपनाया **इससे यह स्पष्ट है कि जीवन का आधार "गुरू" है। हम भले ही अपनी बुद्धि के तर्क में उलझ जांय, हम भले ही आत्म रूप को नहीं पहिचाने, परन्तु जब तक हम गुरू साधना को पूर्णता के साथ सम्पन्न नहीं कर लेते तब तक जीवन में श्रेष्ठता, सफलता, और पूर्णता संभव नहीं हो पाती।**

आगे आचार्यों में गुरू गोरखनाथ अत्यन्त श्रेष्ठ योगी हुए, उन्होंने भी गुरू को ही जीवन का आधार बनाया और गुरू साधना के द्वारा जीवन में अद्वितीय सिद्धियां प्राप्त की। कबीर का तो पूरा साहित्य ही गुरू साधना से भरा हुआ है, गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरित मानस का प्रारम्भ करते हुए गुरू की साधना कर उन्हें भक्ति भाव से प्रणाम कर इस अद्वितीय ग्रन्थ की रचना प्रारंभ की, जिससे कि यह रचना अद्वितीय और कालजयी बन सके।

आज के युग में भी यदि पूर्णता तक पहुंचना हैं, यदि कुण्डलिनी चक्र जागृत करने है, यदि अपने आध्यात्मिक पक्ष को पूर्णता देनी है, यदि जीवन में पूर्ण भौतिक सुख उपलब्ध करने है, और यदि विविध प्रकार की साधनाओं में सिद्धियां प्राप्त करनी है, तो इसका एक मात्र साधन गुरू साधना ही है, और इस साधना के द्वारा ही जीवन में सफलता पूर्णता पाई जा सकती है।

यो तो मेरे जीवन में कई साधनाओं का समावेश हुआ है, परन्तु मैंने अपने जीवन में गुरू साधना को ही महत्व दिया है, आज जो मैं साधनाओं के क्षेत्र में सफल माना जाता हूँ जो विभिन्न प्रकार की सिद्धियां मैंने प्राप्त की है, इन सब का आधार गुरू साधना ही है, और

मैं समझता हूं कि यदि साधक थोड़ा सा भी विवेकवान है, तो वह अपने जीवन में गुरू साधना को अवश्य ही महत्व देगा।

गोपनीय प्रयोग

मेरे पिताजी ने मेरे जन्म लेने के बाद सन्यास ले लिया था, और सन्यास के क्षेत्र में उन्होंने पूर्णता और सफलता प्राप्त की। एक बार जब वे साठ वर्ष से भी ज्यादा आयु के हो गये थे तब मेरी भेंट उनसे केदारनाथ के पास हुई थी, और मैंने उनसे निवेदन किया था, कि आप मेरे पिता है, मुझे जीवन की कोई ऐसी साधना दीजिए जिससे कि मैं गृहस्थ जीवन में रहते हुए, उस साधना को सम्पन्न कर सकूं और सभी प्रकार से भौतिक आध्यात्मिक सफलता अजित कर सकूं।

आप तो साधनाओं और सिद्धियों के भण्डार है, और पूरे हिमालय में आपका नाम है। मैं तो अपने जीवन में केवल एक ही साधना करना चाहता हूं, जो कि सरल हो, मेरे अनुकूल हो और जिसे एक बार करने पर ही सफलता मिल जाय, तब उन्होंने अत्यन्त वात्सल्य भाव से मेरे सिर पर हाथ फेरते हुए, अत्यन्त गोपनीय और दुर्लभ "गुरू रहस्य सिद्धि साधना" प्रयोग समझाया था, फिर घर आ कर मैंने उसे सिद्ध किया और वास्तव में ही उस दिन से जिस प्रकार से आर्थिक उन्नति हुई हैं, वह चमत्कार ही है। उस दिन से जिस प्रकार से मुझे विविध अनुभव और सिद्धियां प्राप्त हुई है, वे मेरे लिए अलौकिक है, कभी कभी तो मैं स्वतः प्रवचन करने लग जाता हूं, और किसी भी विषय पर घण्टे दो घण्टे धाराबाहिक रूप से बोलने लग जाता हूं। मेरे ज्ञान को, मेरे भाषण को और मेरे सम्मोहक व्यक्तित्व को देख कर मेरे परिचित और दूर दूर के लोग चमत्कृत हो उठते है, पर मैं यह समझता हूं कि इसका आधार 'गुरू रहस्य सिद्धि साधना" ही है, जिस साधना को मेरे पिताजी ने कृपापूर्वक मुझे दी थी।

साधना रहस्य

इस साधना को किसी भी गुरूवार, पुष्य नक्षत्र (इस वर्ष के पुष्य नक्षत्रों की सूची अप्रेल के अंक में दी गई है) अथवा गुरू पूर्णिमा (१८-७-८१) को सम्पन्न की जा सकती है, जब भी मन में गुरू के प्रति श्रद्धा का भाव हो, जब भी मन में उच्चकोटि की साधना सम्पन्न करने की इच्छा हो, तब इस साधना को सम्पन्न कर लेना चाहिए, इस साधना को पुरूष या स्त्री कोई भी सम्पन्न कर सकता है।

साधक प्रातः काल उठ कर स्नान कर स्वच्छ धुली हुई पीली धोती धारण करे, और कन्धे पर भी पीली धोती ही पहने। फिर अपने सामने पूजन सामग्री रख दे, जिसमें जल पात्र, कुंकुम, केसर, शुद्ध घृत का दीपक, अगरबत्ती, नारियल, दूध का बना हुआ प्रसाद, और श्रेष्ठ सुन्दर आकर्षक गुरु चित्र हो, इसके साथ ही साथ स्फटिक माला भी अपने साथ रखनी चाहिए, इसका उपयोग इस साधना में किया जाता है।

इसके बाद सामने थाली में निम्न प्रकार से परम गोपनीय और दुर्लभ गुरू यंत्र का अंकन कुंकुम या केसर से करे।

गुरू यंत्र

गु

	य	प	रा	त	
नम:	या	ॐ	र	णा	रू
	ना	त्वा	य	म	

भ्यो

फिर इस यंत्र पर अत्यन्त तेजस्वी और भगवान शिव मंत्र युक्त "गुरु रहस्य सिद्धि यंत्र स्थापित" कर दें। यह यंत्र संसार का सर्वाधिक तेजस्वी और दुर्लभ यंत्र माना गया है। इस यंत्र को पूज्य गुरूदेव से प्राप्त कर लेना चाहिए।

इस यंत्र को थाली में स्थापित कर सामने दीपक लगाना चाहिए, और फिर इस यंत्र की संक्षिप्त पूजा कर,

नैवेद्य चढ़ा कर भक्ति भाव से प्रणाम करे, कि मुझे गुरू रहस्य सिद्धि प्राप्त हो, मैं जीवन में भोग और मोक्ष दोनों की कामना रखता हूं, मेरी इच्छा है कि आप अपने पूर्ण ब्रह्म स्वरूप में मेरे सामने उपस्थित हो, और मेरे हृदय में स्थापित हो जिससे कि आप में निहित सारा ज्ञान और सारी सिद्धियां मुझे स्वतः प्राप्त हो सके और मैं सिद्धि पुरूष बन कर जीवन में लोगों का सभी दृष्टियों से पूर्ण कल्याण कर सकूं।

इसके बाद स्फटिक माला से निम्न परम गोपनीय ब्रह्मोपनिषद वर्णित इस गुरू मंत्र की २१ माला मंत्र जप करे। मत्र जप पूरा होने के बाद उस स्फटिक माला को अपने गले में धारण कर ले, ऐसा करते ही साधक को एक अलौकिक सा प्रकाश अनुभव होगा, और ऐसा लगेगा कि जैसे सम्पूर्ण ज्ञान स्वरूप गुरूदेव स्वयं उसके हृदय में स्थापित हो गये है।

ब्रह्मोपनिषद वर्णित गुरू मन्त्र

ॐ ह्रीं श्रीं ऐं वीं दुं तें श्रीं परम क्लीं क्लीं ह्लीं सत्वाय श्रीं स्त्रीं श्रृं श्रैं नारायणाय हुं हें हौं गुरुभ्यो श्रीं नमः॥

यह मन्त्र परम गोपनीय है, अतः बिना गुरू की आज्ञा के सामान्य व्यक्ति को यह मंत्र नहीं दिया जाना चाहिए। साधना समाप्ति के बाद किसी ब्राह्मण को या कुंवारी कन्या को भोजन करा दे और उसे यथोचित भेंट दक्षिणा आदि दे कर साधना सम्पन्न करे। मंत्र जप के बाद पूर्ण श्रद्धा से गुरू आरती सम्पन्न करे।

ब्रह्मोपनिषद युक्त गुरू रहस्य सिद्धि यंत्र

इसके लिए आपको धनराशि भेजने की जरूरत नहीं है, केवल एक पत्रिका सदस्य बनाने पर यह परम दुर्लभ यन्त्र आपको सर्वथा मुफ्त में प्राप्त हो सकेगा, इसके लिए आप नीचे दिया हुआ प्रपत्र किसी कागज पर उतार कर भर कर हमें भेज दे, जिससे कि समय पर आपको यह अद्वितीय चैतन्य गुरु रहस्य सिद्धि यंत्र सुविधापूर्वक प्राप्त हो सके।

गुरू रहस्य सिद्धि यन्त्र---प्रपत्र

मैं पत्रिका सदस्य हूं, अतः इस दुर्लभ और महत्वपूर्ण यंत्र को प्राप्त करने का अधिकारी हूं. आप १०५) रू. की वी. पी. से उपरोक्त दुर्लभ गोपनीय यंत्र मुझे वी.पी. से भिजवा दे, मैं पोस्टमेन को धनराशि दे कर यह यंत्र छुड़ा लूंगा, वी. पी. छूटने पर मेरे निम्न मित्र को पत्रिका का एक वर्ष का सदस्य बना दे, और उसे नियमित रूप से पत्रिका भेजते रहे–

मेरी पत्रिका सदस्यता संख्या ....

मेरा नाम ....

मेरा पूरा पता ....

....

मैंरे उपरोक्त पते पर आप इस यंत्र को भिजवा दें मैं वी.पी. छुड़ा लूंगा, और वी.पी. छूटने पर आप मेरे निम्न मित्र को इस वर्ष का पत्रिका सदस्य बना दे।

मेरे मित्र का नाम ....

मेरे मित्र का पूरा पता ....

....

शिष्यों के लिए दुर्लभ

पुरश्चरण प्रयोग

रसोल्लास तंत्र अपने आप में अत्यन्त गोपनीय और महत्वपूर्ण तंत्र रहा है, जो कि शिष्य को पूर्णता तक पहुँचाने की क्रिया का आधार है। इस तंत्र में यह बताया गया है कि यदि कोई शिष्य बार बार साधना में असफल हो रहा हो, या उसे अपने जीवन में पूर्णता प्राप्त नहीं हो रही हो, अथवा किसी प्रकार की बाधा या अड़चन आ रही हो तो उसे पुरश्चरण प्रयोग सम्पन्न करना चाहिए।

पुरश्चरण क्या है ?

साधना में सिद्धि और सफलता के लिए तीन प्रकार की बाधाएं शिष्य या साधक के सामने उपस्थित होती है। (१) पूर्वजन्म के किये गये दोषों की वजह से या पूर्व जन्म में गुरु अनादर आदि से जो दोष व्याप्त होता है, वह पुरश्चरण प्रयोग से ही समाप्त होता है। (२) यदि वर्तमान जीवन में देवताओं के प्रति अनादर या गलत तरीके से मंत्र जप आदि किया हो तब भी साधना दोष व्याप्त होता है और इस दोष को भी पुरश्चरण प्रयोग से ही दूर किया जा सकता है और (३) वर्तमान जीवन में यदि मन में गुरू के प्रति निरादर रहा हो, उनके सामने अभद्रता या असौम्यता प्रदर्शित की हो या मन में गुरू के प्रति अपशब्द, अपमान आदि भावनाएं व्यक्त हुई हो तब भी साधक या शिष्य को दोष व्याप्त होता है और इसके लिए भी पुरश्चरण प्रयोग को ही सर्व श्रेष्ठ उपाय बताया है।

कहते है, कि जब विष्णु का बाणासुर से युद्ध हो रहा था, तब स्वयं भगवान शिव बाणासुर के पक्ष में आकर खडे हो गये उस समय भगवान विष्णु ने पुरश्चरण प्रयोग सम्पन्न कर भगवान शिव से युद्ध किया और उन्हें पराजित कर बाणासुर की भुजाएं काट डाली।

इसी प्रकार एक बार रूद्र ने स्वयं भस्मासुर को यह वचन दे दिया कि तू जिसके सिर पर भी हाथ रखेगा वह भस्म हो जायेगा, और भस्मासुर ने भगवान शिव के ऊपर ही हाथ रख कर उसे भस्म कर देना चाहा, जिससे कि पार्वती को प्राप्त कर सके, ऐसी स्थिति में जब भगवान शिव विष्णु के पास पहुँचे तो विष्णु ने पुरश्चरण प्रयोग सम्पन्न कर भस्मासुर के सामने मोहिनी रूप धारण कर उसे स्वयं अपने ही हाथों भस्म करवा दिया।

वास्तव में ही पुरश्चरण प्रयोग प्रत्येक साधक और शिष्य के लिए आवश्यक है। इस तंत्र में तो यहां तक बताया गया है कि प्रत्येक पूर्णिमा को महीने में एक बार अवश्य ही इस प्रकार का प्रयोग सम्पन्न कर देना चाहिए, जिससे कि उस महीने में जो भी दोष व्याप्त हुए, हो, वे समाप्त हो सके, और साधना में सफलता प्राप्त हो सके।

भगवान शिव ने स्वयं पार्वती को समझाते हुए कहा है कि प्रत्येक साधना में सिद्धि अवश्य ही प्राप्त हो सकती है, यदि साधना से पूर्व पुरश्चरण प्रयोग सम्पन्न कर लिया जाय। जो तंत्र साधक हैं, जो तंत्र के क्षेत्र में अथवा साधना के क्षेत्र में पूर्णता प्राप्त करना चाहते है, उनके लिए तो यह पुरश्चरण पद्धति वरदान स्वरूप है। यह प्रयोग एक ऐसा रत्न है, जिसके द्वारा प्रत्येक साधना में अवश्य ही सिद्धि प्राप्त होती है।

एतत् तन्त्रानुसारेण पुरश्चर्या करोति यः ।
स सिद्धिः स गणः सौ पि विष्णुर्न च संचयः ।।

अर्थात् जो इस प्रकार के उच्चकोटि के पुरश्चरण तंत्र को जानकर किसी भी साधना से पूर्व यह पुरश्चरण प्रयोग सम्पन्न कर लेता है, वह पूर्ण रूप से सिद्ध होता है और दूसरे शब्दों में वह स्वयं विष्णु स्वरूप बन जाता है. इसमें किसी प्रकार का संदेह नहीं।

उच्चकोटि के योगियों और सन्यासियों ने भी यह स्वीकार किया है कि कई कारणों से जीवन में साधनाओं में सफलता नहीं मिल पाती, इसमें इस जन्म और पूर्व जन्म के दोषों की वजह से बाधाएं आती रहती है, जब तक इन बाधाओं तथा दोषों को दूर नहीं किया जाता, तब तक साधना में सिद्धि प्राप्त नहीं हो सकती, और इन दोषों को दूर करने का कोई अन्य उपाय नहीं है, केवल मात्र एक ही उपाय है "पुरश्चरण तंत्र" या दूसरे शब्दों में पुरश्चरण प्रयोग जिसकी वजह से साधना में सिद्धि और सफलता प्राप्त हो पाती है।

पुरश्चरण प्रयोग कब करे ?

प्रश्न यह उठता है, कि किस मुहूर्त में कब यह प्रयोग सम्पन्न करना चाहिए जिससे कि सभी जन्मों के दोष दूर हो सके, और जीवन तथा शरीर शुद्ध, निर्मल, पवित्र एवं दिव्य बन सके।

इसके लिए इसी तंत्र में स्पष्ट रूप से बता गया है-

न तंत्र काल–नियमः शुद्धाशुद्धं वरानने।
न रिक्ता न च मुद्रा च पुरश्चरण कर्मणि ।।
न तंत्र चंचलापांगि मल मासं विचारयेत्
जप कालो महेशानि कोटि सूर्य ग्रहः समः
पु० रत्नो० तंत्र २/१४-१५

भगवान शिव ने पार्वती को संबोधित करते हुए पुरश्चरण पद्धति के बारे में कहा हैं, कि हे चंचल नेत्र वाली पार्वती ! इस पुरश्चरण प्रयोग को करने के लिए समय का कोई नियम नहीं है, इस प्रयोग में शुद्ध और अशुद्ध का कोई विचार नहीं है इन प्रयोग में यदि रिक्ता तिथि या भद्रा जैसी अशुभ तिथियां भी हो तब भी कोई दोष नहीं लगता, यदि ऐसे समय में मल मास या अधिक मास चल रहा हो, तब भी विचार नहीं करना चाहिए। हे, पार्वती! यह बिल्कुल सही है, कि यह प्रयोग, साधक सही ढंग से सम्पन्न कर लेता है, तो करोड़ों सूर्य के समान उसको फल मिलता है, और वह सभी दृष्टियों से पूर्ण सिद्धि प्राप्त कर लेता है।

इस तंत्र में बताया गया है, कि ब्राह्मण को इस साधना में एक लाख जप करना चाहिए, क्षत्रीय को चार लाख, वैश्य को बारह लाख और शूद्र को सोलह लाख मंत्र जप करना चाहिए।

साधना कैसे करें

भगवान शिव ने इस साधना प्रयोग को समझाते हुए बताया है कि साधक प्रातः काल स्नान कर पूर्ण विधि विधान के साथ संध्या करे और गायत्री मंत्र का जप करे.

जप के बाद वह साधक भगवान सूर्य को जल से अर्घ्य दे, और लाल वस्त्र धारण कर कोमल आसन पर बैठ जाय और प्राणायाम करे।

इसके बाद अपने सामने पूज्य गुरूदेव का सुन्दर चित्र स्थापित कर दे यदि उनकी मूर्ति हो तो, मूर्ति स्थापित करे, ज्यादा अच्छा यह हो कि उन्हें अर्थात् गुरू को स्वयं को बुला कर उनका आसन पर विधिवत पूजन करे। तत्पश्चात मंत्र जप करे।

भगवान शिव ने स्पष्ट करते हुए कहा है कि गुरू जो मंत्र दे उसी को "गुरू मंत्र" कहा जाता है, और पूर्ण श्रद्धा युक्त एक लाख गुरू मंत्र जाप करे। साथ ही साथ पांचों अंगों के साथ पुरश्चरण करे। ये पांच अंग है- (१) होम, (२) तर्पण (३) अभिषेक (४) अपने कुल के विप्र को भोजन और (५) गुरू को दक्षिणा। ये पांचों पंचांग कहलाते है, और इनके साथ ही पुरश्चरण करते हुए मंत्र जाप करना चाहिए।

अनेन क्रम मार्गेण पुरश्चर्या समापयेत्।
ततः सिद्धो भवेद् देवि नान्यथा मम भाषितम्॥

भगवान शिव कहते है कि है, देवी पार्वती! इस क्रम से यह पुरश्चरण प्रयोग सम्पन्न करना चाहिए और ऐसा करने वह साधक स्वयं ही पूर्ण सिद्ध बन जाता है, और आगे की प्रत्येक साधना में पूर्ण सफलता प्राप्त करता है।

गुरु मंत्र

ॐ परमतत्वाय नारायणाय गुरूभ्यो नमः

उपरोक्त गुरू मंत्र है, जो कि शिष्य के लिए तो "मंत्र राज" कहा गया है, मगर इसके साथ ही साथ साधक को कुछ और जानकारियां भी प्राप्त कर लेनी चाहिए जो कि अत्यन्त गोपनीय है।

भगवान शिव पार्वती को पुरश्चरण पद्धति समझाते हुए कहते है कि-

प्रणव त्रयमुद्धृत्य माया बीजं समुद्धरेत्।
ततः प्रणवमुद्धृत्य एवमेतत् सु-दुर्लभम्॥४
एतां सप्ताक्षरीं विद्यां प्रजप्य दशधा प्रिये।
यः पश्येद् ग्रहण देवि। प्रायश्चितं न विद्यते॥५॥
(पु० श्लो० तंत्र ३/४-५)

अर्थात् सर्वप्रथम तीन प्रणव का उद्धार कर माया बीज को स्पष्ट करे और पुनः तीन प्रणव स्पष्ट करे जिसे कि अत्यन्त गोपनीय और दुर्लभ मन्त्र कहा गया है यह सप्ताक्षरी मन्त्र गुरू मन्त्र से पहले तीन माला नित्य मन्त्र जाप करना चाहिए। यह इस प्रकार से मंत्र बनता है—

ॐ ॐ ॐ ह्रीं ॐ ॐ ॐ

इसे "सिद्ध विद्या मंत्र" भी कहा गया गया है, यदि साधक गृहस्थ हो और जीवन में सम्पूर्ण भोगों का भोग करना चाहता हो तो अत्यन्त परम "दुर्लभ भोग मन्त्र" भी स्पष्ट करना चाहिए। मेरी राय में साधकों को सबसे पहले उपरोक्त सप्ताक्षरी मन्त्र की तीन माला मन्त्र जप करना चाहिए फिर मूल गुरू मन्त्र का यथा संभव मन्त्र जप करे क्यों कि मूल मन्त्र का कुल एक लाख मन्त्र जप करना है जो कि साधक पांच, सात या नौ दिन में संपन्न करे, परन्तु प्रत्येक दिन गुरू पूजन कर पहले सप्ताक्षरी मंत्र की तीन माला मंत्र जप करे, फिर मूल गुरू मंत्र करे और उसके बाद निम्न "भोग मंत्र" का जप तीन माला मंत्र जप करे।

ऐश्वर्य मंत्र

ह्रीं ह्रीं ह्रीं ॐ ह्रीं ह्रीं ह्रीं

इस प्रकार यह मंत्र जप सम्पन्न होता है, भगवान शिव कहते है, कि ये दोनों ही मंत्र दिखने में सामान्य प्रतीत होते है, परन्तु यदि इन मंत्रों को सही ढंग से जपा

जाय तो वह सभी दृष्टियों से पूर्ण सफलता प्राप्त करता है।

बहु-भाग्येन चार्वांगि लौकेर्भारतवासिभि:
प्राप्ति मात्रेण अप्तव्य तत् सर्वक्षय भवेत्

अर्थात् हे, पार्वती भारतवासियों के लिए इससे ज्यादा श्रेष्ठ और दुर्लभ मंत्र नहीं है, इसको जपने पर समस्त प्रकार के दोष क्षय होते है और उसका सभी दृष्टियों से पूर्ण भाग्योदय होता है।

पुरश्चरण यंत्र

भगवान शिव कहते है, कि जब इस प्रकार से मंत्र जप पूरा हो जाय तब पहले से ही प्राप्त सिद्ध दुर्लभ सूर्य के समान तेजस्वी पुरश्चरण यंत्र जो कि सामने पात्र में गुरू के सामने रखा हुआ होता है, उसका संक्षिप्त पूजन करे और उसे धारण कर ले। ऐसा करने पर उसके जीवन में सभी दृष्टियों से पूर्णता सफलता, और श्रेष्ठता प्राप्त होने लगती है, उसके पिछले जीवन के और इस जीवन के समस्त पाप दोष समाप्त हो जाते है और पूर्ण रूप से वह अपने पूज्य गुरुदेव को प्राप्त करता हुआ उसमें लीन हो जाता है।

यत् यत् कर्म कृतं देवि पुरश्चरणमुत्तमम्
तत् सर्वं नाशमायाति मम तुल्यो भवेत् यदि ।।

अर्थात् इस प्रकार से परम दुर्लभ पुरश्चरण यंत्र (न्यौछावर ६०)रू. को पहले से ही प्राप्त कर साधक को पूजन कर धारण कर लेना चाहिए तो उसके पाप और दोष नाश हो जाते है और भगवान शिव कहते है कि वह साधक मेरे समान हो जाता हैं।

सपत्नीक गुरूं देवं पूजयेद यस्तु साधक:
अनेन विधिना देवि सपूज्य गुरु देवतम्
भावयेच्च सपत्नीकं पूजयेद् गुरुमाज्ञया
सदैव सहसा सिद्धिर्जायते वीर-वन्दिते

इस प्रकार संभव हो तो गुरू पत्नी के साथ गुरू का पूर्ण रूप से पूजन करे, उनकी आज्ञा पालन करे तो निश्चय ही वह पूर्ण सिद्धि प्राप्त करता है।

इस साधना में पुरश्चरण माला का ही प्रयोग किया जाना चाहिए, यह माला विचित्र और विविध मनकों से गुंथी हुई होत है, तथा इसका प्रत्येक मनका पुरश्चरण मत्र से सिद्ध और प्रामाणिक होता है, इस प्रकार की दुर्लभ माला पर व्यय मात्र ६० रू. आता है।

साधना काल में तो इस माला का प्रयोग किया जाना ही चाहिए, साधना के बाद इस माला को यदि हम पहिने रहे, तो वह जीवन का सौभाग्य ही होगा क्योंकि इससे दैनिक होने वाले दोष और पाप स्वत: ही समाप्त होते रहेगे, और साधक का चित्त निर्मल और दिव्य बना रहेगा।

उच्चकोटि के जो सन्यासी और योगी होते है, जो अपने आप में श्रेष्ठ साधक होते है, वे इस पुरश्चरण माला को हर हालत में प्राप्त कर इसके माध्यम से पुरश्चरण प्रयोग तो सम्पन्न करते ही है, नित्य एक या दो घण्टों के लिए इस माला को धारण भी करते है जिससे कि पिछले दिन या उस दिन किये गये सभी दोष समाप्त हो जाते है और वह साधक निर्मल और दिव्य बना रहता है।

वास्तव में ही यह पुरश्चरण प्रयोग अपने आप में अत्यन्त ही महत्वपूर्ण और दुर्लभ प्रयोग है, साधकों को चाहिए कि वे इस साधना को अवश्य ही सम्पन्न करे, जिससे कि वे अपने जीवन में सभी दृष्टियों से पूर्ण सिद्धि प्राप्त कर सके।

पादुका - पूजन - प्रयोग

(३०-११-८९)

शास्त्रों के अनुसार मार्ग शीर्ष शुक्ल २ को "गुरूत्व दिवस" मनाया जाता है, दूसरे शब्दों में इसे "गुरू पादुका दिवस" भी कहते हैं, अंग्रेजी तिथि के अनुसार इस वर्ष यह ३०-११-८९ को सम्पन्न हो रहा है।

एक साधक या शिष्य के जीवन में 'गुरू पादुका दिवस' का सर्वाधिक महत्व है, और वह पूर्ण श्रद्धा, भावना, एवं चिन्तन के साथ "गुरू पादुका दिवस" को सपरिवार सम्पन्न करता है।

महर्षि योगी स्वामी पीताम्बर दत्त जी के द्वारा हमें गुरू पादुका पूजन का विशेष प्रयोग प्राप्त हुआ है, जो कि अपने आप में अनुपम एवं अद्वितीय है, अगली पंक्तियों में यह पूर्णता के साथ प्रकाशित है।

जन्म लेना कोई महत्वपूर्ण कार्य नहीं है, यह तो प्रकृति का एक प्रयोग है, जिसकी वजह से जीव नर देह धारण कर जन्म लेता है, परन्तु जन्म लेने के बाद जिन संस्कारों का वह उपयोग करता है, उन्हीं अमरत्व संस्कारों के फलस्वरूप उसके नर देह का महत्व अमरत्व स्पष्ट होताहै।

जन्म देना या जन्म लेना एक सहज स्वाभाविक क्रिया है, जिसमें किसी ज्ञान, किसी चेतना या किसी संस्कार की आवश्यकता नहीं होती, मूर्ख व्यक्ति भी किसी बालक को जन्म दे सकता है, दुष्ट और पापात्मा व्यक्ति भी किसी जीवन को बालक रूप प्रदान कर सकता है, और अकुलीन, असंस्कारित तथा पशु तुल्य जीवन जीने

वाला व्यक्ति भी बालक को जन्म दे सकता है, इस दृष्टि से देखा जाय तो बालक को जन्म देना कोई महानता नहीं है, या कोई जीवन जन्म लेता है, तो यह श्रेष्ठता या महत्वपूर्ण नहीं है, यह तो प्रकृति का एक नियम है, और उस नियम के अनुरूप बालक जन्म लेता है, बड़ा होता है, और मृत्यु के मुंह में चला जाता है।

जन्म लेते ही बालक से गुरू का संबंध स्थापित हो जाता है, प्रकृति को गुरू ही माना है, गाय आदि अन्य पशुओं के बालक प्रकृति में ही जन्म लेते हैं, उनके चारों ओर ऊंची ऊंची दीवारें या अस्पताल डाक्टर या चिकित्सक नहीं होते, शुद्ध प्रकृति से उनका सीधा संबंध होता है, इसलिए जन्म लेते ही उसका प्रकृति रूपी गुरू से सीधा संबंध स्थापित हो जाता है, और वह चार छः घण्टो में ही उठ कर अपने पैरों पर खड़ा हो जाता है, विचरण करने लग जाता है, या पक्षी पंख फैला कर उड़ने की सामर्थ्य प्राप्त कर लेते हैं, या पशु दौड़ने अथवा अन्य कार्य प्रारम्भ कर देते हैं।

परन्तु मनुष्य को यह सब करने में पूरा साल लग जाता है, क्योंकि वह प्रकृति से कटा हुआ होता है, प्रकृति का सीधा संबंध उससे नहीं हो पाता, प्रकृति रूपी गुरू की थपथपाहट उसे अनुभव नहीं होती, वह ऊंची दीवारों के बीच में घिरने के बाद जन्म लेता है, इसलिए अपने पैरों पर खड़े होने में उसे पूरा एक वर्ष लग जाता है, अन्य क्रिया कलाप जो पशु या पक्षी चार छः घण्टों में सीख लेते हैं, उसे नर बालक को सीखने में तीन चार वर्ष लग जाते हैं, और यह जीवन की विडम्बना या न्यूनता ही है।

वास्तविक मानव जीवन तब प्रारम्भ होता है, जब उसके हृदय में अध्यात्म शक्तियों का विकास होने लगता है, जब उसे यह अहसास होने लगता है, कि मेरा जीवन एक क्षण-संयोग है, इसके पीछे कोई निश्चित योजना या चिन्तन नहीं है, अब मैं अपने जीवन को पूर्णता तभी दे सकता हूं, जब मुझे गुरू का चिन्तन प्राप्त हो, मेरे शरीर में और जीवन में गुरू का महत्व हो, मेरा मार्गदर्शक और जीवन में पूर्णता देने में गुरू सहायक हो, ऐसा चिन्तन आने पर ही उसके जीवन की सार्थकता प्रारम्भ होती है।

जब मनुष्य इस चिन्तन से अनुप्राणित होता है, तब वह गुरू के सतसंग में और गुरू के साहचर्य में रहने की इच्छा अनुभव करता है, और तब गुरू अपनी कृपा से उसे शक्तिपात प्रदान कर पूर्ण पुरुष बनाने की, और अग्रसर करते हैं, शक्तिपात जीवन का प्रारम्भ है, जीवन का अन्त नहीं है, जिनको शक्तिपात हो चुका होता हैं, उनको स्वयं शास्त्र, वेद, आगम, तंत्र और चिन्तन का बोध होने लग जाता है, उन्हें शिव की पूर्ण अनुभूति होने से वह शिवमय बन जाता है, और उसके हृदय में पूर्ण ज्ञान का उदय हो जाता है, ऐसे ही शिष्य को "प्रातिभ" कहते हैं।

गुरू पादुका

आज के युग में यह संभव नहीं रहा, कि शिष्य प्रति क्षण, प्रति दिन गुरू के साहचर्य में रह सके, ऐसी स्थिति में गुरू की पादुका ही उसके लिए साक्षात् गुरूमय हो जाती है, क्योंकि –

पृथिव्या यानि तीर्थानि तानि तीर्थानि सागरे।
सागरे सर्व तीर्थानां गुरूस्य दक्षिणे पदे॥

अर्थात संसार के सभी तीर्थ और पुण्य क्षेत्र गुरू के चरणों में साकार रूप में उपस्थित होते हैं, इसीलिए गुरू के चरणों का जल जिसको "चरणामृत" कहा जाता है, स्वीकार किया जाता है, गुरू चरण जल से स्नान कर समस्त तीर्थों के स्नान का फल प्राप्त करता है; इसलिए गुरू के चरणों में धारण की हुई खड़ाऊ या पादुका स्वयं गुरू का साक्षात स्वरूप बन जाती है, और इसीलिए शास्त्रों में इस दिवस को 'गुरू पादुका दिवस' के नाम से सम्बोधित किया है, भगवत् पाद शङ्कराचार्य ने तो कहा है, कि गुरू से भी ज्यादा महत्वपूर्ण गुरू पादुका है, उसे अपने पूजा स्थान में ठीक उसी प्रकार से स्थापित

करना चाहिए जिस प्रकार से हम सम्मान के साथ गुरू को अपने घर में श्रेष्ठ आसन पर बिठाते हैं, गुरू पादुका की उपस्थिति साक्षात् गुरू की उपस्थिति ही मानी गई है, गुरू पादुका स्तवन मूल रूप में गुरू स्तवन ही है, इसीलिए पूरे भारत वर्ष में जितना महत्व गुरू पूर्णिमा का है, उससे भी ज्यादा महत्व " गुरू पादुका दिवस " का है ।

भगवान शिव ने पार्वती को समझाते हुए कहा है, कि मात्र गुरू पादुका पूजन करने से साधक की सोलह कलाएं स्वतः विकसित होने लग जाती हैं, ये सोलह कलाएं निम्न प्रकार से कही गयी है – **१- मूलाधार, २- स्वाधिष्ठान, ३- मणिपुर, ४- अनाहत, ५- विशुद्ध, ६- आज्ञा, ७- बिन्दु, ८- कला पद, ९- निर्वाधिका, १०- अर्धचन्द्र, ११- नाद, १२- नादान्त, १३- शक्ति, १४- व्यापिका, १५- समना, १६- उन्मना ।**

इन सोलह कलाओं का विकास और कुण्ड़लिनी जागरण हो कर जब कुण्डलिनी उर्ध्वगामी होती है, तब स्वतः साधक की 'खेचरी मुद्रा' प्रारम्भ हो जाती है और ऐसा होने पर वह शिवात्मक गुरु शिष्य से संबोधित हो जाती है ।

आगे के पृष्ठों में मैं गुरु पादुका-पूजन प्रयोग स्पष्ट कर रहा हूं, इससे पहले ही शिष्य को 'गुरु पादुका' प्राप्त कर अपने पूजा स्थान में या अपने कक्ष में सम्मान पूर्वक स्थापित कर देना चाहिए, और यह अहसास करना चाहिए कि यह खड़ाऊ या ये पादुकाएं साक्षात ब्रह्ममय गुरु ही सशरीर उपस्थित है और उनकी उपस्थिती में साधक निश्चित होकर अध्यात्म पथ पर निरन्तर अग्रसर होता रहता है, ऐसे साधक की कुण्डलिनी निरन्तर विकसित होती रहती है, और वह उस ब्रह्म रस का आस्वादन करने में समर्थ हो पाता है, जिसे जीवन मुक्त स्थिति या विदेह कहा जाता है ।

साधक " गुरू पादुका दिवस " के दिन पूर्ण श्रद्धा के साथ स्नान कर शुद्ध श्वेत वस्त्र धारण करे, और उत्तर दिशा की ओर आसन बिछा कर अपनी पत्नी के साथ या स्वयं बैठें, सामने श्रेष्ठ लकड़ी के तख्ते पर पीला वस्त्र बिछा कर उस पर गुरू पादुका स्थापित करें, और फिर अपने सामने पूजन सामग्री रख कर गुरू पादुका पूजन कार्य सम्पन्न करें ।

पादुका चिन्तन

साधक या शिष्य अपने दोनों हाथ खड़ाउओं पर रखता हुआ निम्न प्रकार से चिन्तन-उच्चारण करे–

ॐ गुरूभ्यो नम :
ॐ परम गुरूभ्यो नम :
ॐ परात्पर गुरूभ्यो नम :
ॐ परमेष्ठि गुरूभ्यो नम :
ॐ गणपतये नम :
ॐ मूल प्रकृत्यै नम :
ॐ मण्डूकाय नम :
ॐ मूलाधारयै नम :
ॐ कालाग्नि रुद्राय नम :
ॐ कूर्माय नम :
ॐ आधार शक्तये नम :
ॐ आनन्दाय नम ।
ॐ अनन्ताय नम :
ॐ पृथिव्यै नम :
ॐ सुधार्णवाय नम :
ॐ मणिद्विपाय नम :
ॐ कल्पवृक्षाय नम :
ॐ चिन्तामणि गृहाय नम :
ॐ हेमपीठाय नम :

इसके बाद बांई तरफ चावल की ढ़ेरी बना कर उस

पर एक गोल सुपारी रख कर उसे भैरव मान कर उसकी संक्षिप्त पूजा करें, जिससे कि किसी प्रकार का कोई विघ्न उपस्थित न हो, पूजन के बाद भैरव के सामने हाथ जोड़ कर उच्चारण करें –

तीक्ष्णदंष्ट्र महाकाय कल्पान्ते दहनोपम् ।
भैरवाय नमस्तुभ्यं अनुज्ञां दातुमर्हसि ।।

इसके बाद अपने बांये हाथ में थोड़े से चावल ले कर अपने चारों ओर घुमाते हुए दसों दिशाओं की ओर इस उद्देश्य से फेंके कि दसों दिशाओं का बन्धन हो सके, और किसी भी दिशा से किसी प्रकार का विघ्न उपस्थित न हो तथा शरीर पर कोई दुष्प्रभाव न पड़े ।

दस दिशा बन्धन

अप सर्पन्तु ये भूता ये भूता भूमिसंस्थिता: ।
ये भूता: विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ।।

अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचा: सर्वतो दिश: ।
सर्वेषामविरोधेन पाद पूजां समारभेत् ।।

आसन पूजन

इसके बाद अपने आसन को हटा कर उसके नीचे कुंकुम से त्रिकोण बनावे, और उस पर पुन: आसन बिछा दें, फिर आसन पर जल छिड़कते हुए निम्न उच्चारण करें –

ॐ क्षेत्रपालाय नम: । ॐ पृथ्वीत्यासन-मन्त्रस्य मेरूपृष्ठ ऋषि: । सुतलं छन्द: । कूर्मो देवता । आसने विनियोग: ।

ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता ।
त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरू चासनम् ।।

इसके बाद जो आसन बिछा हुआ है, उस पर निम्न मन्त्र का उच्चारण करते हुए आसन पर केसर की पांच बिन्दियां लगावे जिससे कि आसन सिद्ध हो सके ।

ॐ पृथिव्यै नम:
ॐ अनन्ताय नम:
ॐ कूर्माय नम:
ॐ विमलाय नम:
ॐ योगपीठाय नम:

इसके बाद खड़ाऊ के सामने पांच चावल की ढ़ेरियां बनावें, और उस पर एक एक गोल सुपारी रख कर केसर की बिन्दी लगावे तथा उच्चारण करें –

ॐ गुं गुरूभ्यो नम:
ॐ पं परम गुरूभ्यो नम:
ॐ पं परात्पर गुरूभ्यो नम:
ॐ पं परमेष्ठि गुरूभ्यो नम:
ॐ पं परापर गुरूभ्यो नम:

शरीर गुरू स्थापन प्रयोग

इसके बाद दाहिने हाथ से संबंधित अंगों को स्पर्श करते हुए गुरू को अपने पूर्ण शरीर में समाहित करें –

ॐ कूर्माय नम:
ॐ वैराग्याय नम:
ॐ आधार शक्तये नम:
ॐ अनैश्वर्याय नम:
ॐ पृथिव्यै नम:
ॐ अनन्ताय नम:
ॐ धर्माय नम:
ॐ सर्वतत्वात्मकाय नम:
ॐ ज्ञानाय नम:
ॐ आनन्दकन्द कन्दाय नम:
ॐ सविज्ञालाय नम:

ॐ ऐश्वर्याय नमः

ॐ विकारमयकेशरेभ्यो नमः

ॐ प्रकृतमयपत्रेभ्यो नमः

ॐ पंचाशर्णबीजाढ्यकर्णिकायै नमः

इस प्रकार अपने शरीर में गुरू को स्थापित कर अपने शरीर की संक्षिप्त पूजा करें, सिर पर जल छिड़के सिर के मध्य में केसर की बिन्दी लगावे, हृदय पर केसर का लेप करें, और प्रसन्नता अनुभव करें, कि मेरे शरीर के रोम रोम में पूज्य गुरूदेव स्थापित हुए हैं, जिससे कि मेरी कुण्डलिनी स्वतः जागृत होने लगी है।

इसके बाद खड़ाऊ के दाहिनी ओर एक दूसरे लकड़ी के बाजोट पर कलश स्थापित करे, उसमें जल डाले, कलश के मुंह पर पांच या ग्यारह पत्ते रखकर उसके ऊपर नारियल स्थापित करे, कलश के मुंह पर मौली या कलावा बांधे नारियल के ऊपर यज्ञोपवींत पहनावे, और कलश के चारो ओर चारो दिशाओं की ओर केसर की विन्दी लगाते हुए निम्न मंत्र का उच्चारण करे।

ॐ पूर्वे ऋग्वेदाय नमः

ॐ उत्तरे यजुर्वेदाय नमः

ॐ पश्चिमे अथर्व वेदाय नमः

ॐ दक्षिणे साम वेदाय नमः

इस प्रकार कलश के चारो ओर चार बिन्दियां लगाते हुए चारो वेदों की स्थापना करे और संक्षिप्त पूजन करे

कलश के पास में शंख स्थापित करे, और उसका पूजन करे, शंख के पास ही घण्टा स्थापित करे, और उसका भी पूजन करते हुए निम्न उच्चारण करे -

आगमर्थं तु देवानां गमनार्थं तु राक्षसाम्।
घण्टानादं प्रकुर्वीत पश्चाद् घण्टा प्रपूजयेत।।

फिर कलश के आगे बारह चावल ढेरियां बनावे और उस पर एक एक सुपारी रख कर निम्न देवताओं की स्थापना करें।

१– ॐ कालाग्नि रुद्राय नमः

२– ॐ कूर्मायै नमः

३– ॐ पृथिव्यै नमः

४– ॐ धर्माय नमः

५– ॐ ज्ञानाय नमः

६– ॐ वैराग्याय नमः

७– ॐ ऐश्वर्याय नमः

८– ॐ राग्याय नमः

९– ॐ अनन्ताय नमः

१०– ॐ सर्वतत्वात्मकाय नमः

११– ॐ आनन्दमयकन्दाय नमः

१२– ॐ प्रकृतिमय पत्रेभ्यो नमः

खड़ाऊ-विनियोग

ॐ अस्य श्री पादुका मन्त्रस्य दक्षिणामूर्ति ऋषिः गायत्रीछन्दः श्री गुरू देवता प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः।

इसके बाद खड़ाऊ में गुरू प्राण प्रतिष्ठा करते हुए निम्न मंत्र का उच्चारण करें।

पादुका गुरू मंत्र

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः हंसः शिवः सोहं हंसः स्वरूप निरुपणहेतवे श्री गुरुवे नमः

इसके बाद साधक न्यास करे -

न्यास

ॐ ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः
ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः
ॐ ह्रू मध्यमाभ्यां नमः
ॐ ह्रैं अनामिकाभ्यां नमः
ॐ ह्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः
ॐ ह्रः करतलकर पृष्ठाभ्यां नम

इसी प्रकार हृदयादि न्यास करें -

ॐ ह्रां हृदयाय नमः
ॐ ह्रीं सिरसे स्वाहा
ॐ ह्रू कवचाय हुं
ॐ ह्रैं नेत्रत्रयाय वौषट
ॐ ह्रौं शिखायै वषट
ॐ ह्रः अस्त्राय फट्

उपरोक्त न्यास करते हुए संबंधित अंगो का स्पर्श करे फिर फिर गुरु ध्यान करे ।

महा-रोगे महोत्पाते महा-देवी महा-मये ।
महा पदि महा-पापे स्मृता रक्षति पादुका ।।

तेनाधीनं स्मृतं ज्ञानं दुष्टं पत्तं च पूजितं ।
जिह्वायां वर्तते यस्य श्री परा-पादुका-स्मृतिः ।।

भोग भोगार्थिना ब्रह्म-विष्णवी-पद कांक्षिणाम ।
भक्ति रेव गुरौ देवि "नान्यः पंथा" इति श्रुतिः

इसके बाद एक अन्य पात्र में परम गुरु की स्थापना करें, स्थापना में पात्र में चावलों कीढ़ेरी बनाकर उस पर सुपारी रख कर उन्हे परम गुरु मान कर उपरोक्त प्रकार से ही न्यास करे फिर परम गुरु का ध्यान निम्न प्रकार से करे ।

परम गुरू ध्यान

गुरु भक्ति-विहीनस्य तपो विद्या कुल व्रतम् ।
सर्व नश्यन्ति तत्रैव भूषणं लोक रंजनम् ।।

गुरु भवत्यग्निना सम्यग् दग्ध्या सर्व-गतिर्दसः
श्वपचो पि परैः पूज्यो न विद्वानपि नास्तिकः ।।

परमेष्ठि गुरू ध्यान

परम गुरू के पास ही चावल की ढ़ेरी बना कर उस पर सुपारी रख कर परमेष्ठि गुरू की स्थापना करे, और संक्षिप्त पूजन कर उपरोक्त प्रकार से ही न्यास करें, और हाथ जोड़ कर प्रार्थना करें –

गुरूः पिता गुरूर्माता गुरूर्देवो गुरूर्गति ।
शिवे रूष्टो गुरूस्त्राता गुरौ रूष्टे न कश्चन ।।

पादुका लय पूजन

इसके बाद साधक पादुका लय पूजन करें, जो सामने दोनों पादुकाएं स्थापित की है, दोनों पादुकाओं पर कुंकुम से त्रिकोण बनावे, और द्वादस कलाओं में से छः कलाओं की स्थापना वाम पादुका में तथा छः कलाओं की स्थापना दाहिनी पादुका में स्थापित करें –

वाम पादुका कला स्थापन

१- ॐ तपिन्यै नमः
२- ॐ तापिन्यै नमः
३- ॐ ज्वालिन्यै नमः
४- ॐ रुच्यै नमः
५- ॐ सूक्ष्मायै नमः

६- ॐ भोगिन्यै नमः

दाहिनी पादुका कला स्थापन

इसके बाद दक्षिण पादुका पर निम्न छः कलाओं की स्थापना करें –

१- ॐ विश्वायै नमः

२- ॐ धूम्रायै नमः

३- ॐ मरीच्यैं नमः

४- ॐ बोधिन्यै नमः

५- ॐ धारिण्यै नमः

६- ॐ क्षमायै नमः

उपरोक्त सूर्य की द्वादस कलाएं कही जाती हैं, और इन कलाओं की स्थापना से दोनों पादुकाओं में पूर्ण सूर्य मण्डल स्थापित हो जाता है, इसके बाद दोनों पादुकाओं पर कलश में से जल (अमृत) छिड़कते हुए निम्न सोलह चन्द्र कलाओं की स्थापना करें, जिससे कि इन पादुकाओं में चन्द्र कलाओं के साथ साथ अमृत तत्व का प्रादुर्भाव हो सके ।

१- ॐ अमृतायै नमः

२- ॐ मानदायै नमः

३- ॐ पूषायै नमः

४- ॐ तुष्टयै नमः

५- ॐ पुष्टयै नमः

६- ॐ रत्यै नमः

७- ॐ धृत्यै नमः

८- ॐ शशिन्यै नमः

९- ॐ चण्डिकायै नमः

१०- ॐ काल्यै नमः

११- ॐ ज्योत्स्नायै नमः

१२- ॐ श्रियै नमः

१३- ॐ प्रीत्यै नमः

१४- ॐ अंगदायै नमः

१५- ॐ पूर्णायै नमः

१६- ॐ पूर्णामृतायै नमः

इस प्रकार करने के बाद बांये हाथ में केसर से चावल रंग कर दाहिने हाथ से थोड़े थोड़े चावल दोनों पादुकाओं पर डालते हुए निम्न उच्चारण करें –

१- मध्ये श्री कृष्ण आवाहयामि स्थापयामि

२- दक्षिणे वासुदेवं आवाहयामि स्थापयामि

३- पश्चिमे अनिरूद्धाय नमः स्थापयामि

४- पूर्वे वैशंपायनाय नमः स्थापयामि

५- उत्तरे जैमिन्यै नमः स्थापयामि

इसके बाद जिस पात्र में खड़ाऊ हो वह पात्र अपने सिर पर रख कर दोनों हाथों में ले कर साधक निम्न प्रकार से उच्चारण करे –

१- ॐ श्री शङ्कराचार्याय नमः आवाहयामि स्थापयामि

२- ॐ विश्वरूपाचार्याय नमः आवाहयामि स्थापयामि

३- ॐ पद्मपादाचार्याय नमः आवाहयामि स्थापयामि

४- ॐ हस्तामलकाचार्याय नमः आवाहयामि स्थापयामि

५- ॐ त्रोटकाचार्याय नमः आवाहयामि स्थापयामि

६- ॐ दत्तात्रेयाय नमः आवाहयामि स्थापयामि

७- ॐ जीवन मुक्ताय नमः आवाहयामि स्थापयामि

८- ॐ नारदं वामदेवं कपिलं आवाहयामि स्थापयामि

इसके बाद हाथों में पुष्प ले कर खड़ाऊ को सामने रख कर खड़ाऊ पर पुष्प समर्पित करते हुए निम्न उच्चारण करे –

१- ॐ गुरवे नमः गुरूं आवाहयामि स्थापयामि

२- ॐ परम गुरवे नमः परम गुरू आवाहयामि स्थापयामि

३- ॐ परात्पर गुरवे नमः परात्पर गुरू आवाहयामि स्थापयामि

४- ॐ परमेष्ठि गुरवे नमः परमेष्ठिगुरू आवाहयामि स्थापयामि

५- ॐ परम गुरवे नमः परम गुरूं आवाहयामि स्थापयामि

इसके बाद दोनों हाथों में पुष्प ले कर साथ में अक्षत, कुंकुम, पुष्प माला ले कर पादुका के ऊपर समर्पित करते हुए उच्चारण करें –

१- ॐ सर्वशास्त्रार्थतत्वज्ञं निखिलेश्वरानन्दाय आवाहयामि स्थापयामि

२- ॐ परमानन्दरूपेण स्वामी सच्चिदानन्द आवाहयामि स्थापयामि

३- ॐ ब्रह्मण्य रूपेण वेद व्यासाय आवाहयामि स्थापयामि

४- ॐ पूर्णत्व प्रदाय चतुर्मुख ब्रह्मा आवाहयामि स्थापयामि

सूक्ष्म गुरुतत्व मंत्र

सर्वथा गुप्त और दुर्लभ द्वादशार्ण सरसी रुह के रूप में जो गुरु मंत्र के बारह वर्ण है, वे निम्न है जो कि ब्रह्माण्ड के गुरुओं का प्रतिनिधित्व करते है साधक को स्फटिक माला से चार माला निम्न ब्रह्माण्ड गुरु मंत्र की जपनी चाहिए।

।। स ह फ्रें ह स क्ष म ल व र यू म् ।।

इसमें प्रथम द्वादश वर्ण है अंतिम म् "वाग्भव" बीज है, इस प्रकार यह द्वादश वर्ण युक्त मंत्र तुरन्त कुण्डलिनी जागरण में पूर्ण रूप से सहायक है। यदि साधक पादुका पूजन कर उपरोक्त गुरु मंत्र (ब्रह्माण्ड गुरु मंत्र) का जप करता है, तो निश्चय हीं उसकी कुण्डलिनी और सहस्त्रार जाग्रत होता है, यह प्रामाणिक वचन है।

इसके बाद 'गुरु पादुका पंचक' का मधुरता के साथ पाठ करें

श्री गुरू पादुका पंचकम्

ॐ नमो गुरूभ्यो गुरूपादुकाभ्यो
नमः परेभ्यः परपादुकाभ्यः ।
आचार्यसिद्धेश्वरपादुकाभ्यो
नमो नमः श्री गुरूपादुकाभ्यः ॥१॥

ऐंकारह्रींकाररहस्ययुक्त –
श्रींकारगूढार्थमहाविभूत्या ।
ओमकारमर्मप्रतिपादिनीभ्यां
नमो नमः श्री गुरू पादुकाभ्याम् ॥२॥

होत्राग्निहोत्राग्निहविष्यहोतृ –
होमादिसर्वाकृतिभासमानम् ।
यद् ब्रह्म तद् बोधवितारिणीभ्यां
नमो नमः श्री गुरू पादुकाभ्याम् ॥३॥

कामादिसर्पव्रजगारूडाभ्यां
विवेकवैराग्यनिधिप्रदाभ्यां
बोधप्रदाभ्यां द्रुतमोक्षदाभ्यां
नमो नमः श्री गुरू पादुकाभ्याम् ॥४॥

अनंतसंसारसमुद्रतार –
नौकायिताभ्यां स्थिरभक्तिदाभ्यां ।
जाड्याब्धिसंशोषणवाडवाभ्यां
नमो नमः श्री गुरू पादुकाभ्याम् ॥५॥

इसके बाद साधक पांच बत्तियों और कपूर से आरती सजा कर गुरु आरती करे और परिवार के सदस्यों को प्रसाद वितरित करे ।

यह पादुका पूजन प्रयोग मात्र पूजन प्रयोग हीं नहीं है अपितु भारतीय तांत्रिक ग्रन्थों का अनमोल रत्न है, जो मैंने पत्रिका पाठकों के लिये प्रस्तुत किया हैं। केवल पादुका पूजन से ही पूरा शरीर झंकृत हो जाता है, रोम रोम में देवताओं का निवास और ब्रह्माण्ड के समस्त गुरुओं की स्थापना हो जाती है, और साधक की कुण्डलिनी पूर्ण रूप से चैतन्य तथा जागृत हो जाती है जिससे वह समस्त ब्रह्माण्ड को अपने आपमें समेटे हुए, पूर्ण ब्रह्मानंद का आस्वादन करने में समर्थ सफल हो पाता है । ○

नमामि !

गुरू प्रशांतं भवभीत नाशम
विशुद्ध बोधं कलुषस्य हारम् ।
आनन्द रूपं नयनाभिरामम्
श्री गुरूदेवं नितरां नमामि ॥१॥

अज्ञाननाशं नित्य प्रकाशम्
सत्चित् स्वरूपम् जगदेक मूर्तिम् ।
विश्वाश्रयं विश्व पतिम् परेशं
श्री गुरूदेवं नितरां नमामि ॥२॥

अणु महान्तम् सद् सत् परंच
योगैक गम्यम् करूणावतारम् ।
सदा वसन्तं हृदयारविन्दे
श्री गुरूदेवं नितरां नमामि ॥३॥

स्वयं भुवम् शान्तमनन्त आद्यम्
ब्रह्मादि वन्द्यम् परमेश पूज्यम् ।
कालात्मकं कालभुवम् शरण्यम्
श्री गुरूदेवं नितरां नमामि ॥४॥

भोगापवर्गम् प्रतिदान शक्तम्
बन्धु सखायां सुहृदयं प्रियंच ।
अज्ञान नाशं सत् चित् प्रकाशम्
श्री गुरूदेवं नितरां नमामि ॥५॥

प्रेमाम्बुधि प्रेम रसायनंच
प्रेम प्रदान निधिम द्वितीयं ।
मृत्युञ्जयं मृत्युभयापहारम्
श्री गुरूदेवं नितरां नमामि ॥६॥

ज्योतिर्मयं पूर्णमनन्त शक्ति
संसार सारं हृदयेश्वरं च ।
विज्ञान रूपं सकलार्तिनाशम्
श्री गुरूदेवं नितरां नमामि ॥७॥

स्नेहं दयां वत्सलतां विधाय
चित्तं प्रमुग्ध कृत्नमनयेन ।
त्वं दीननाथं भव सिन्धु पोतम्
श्री गुरूदेवं नितरां नमामि ॥८॥

निखिलेश्वरानन्द

खड़ाऊ

पाद-पूजन

स विधि प्रयोग

गुरु शब्द का तात्पर्य है, वह स्थितिजनक स्वरूप जो बन्धन के मुख्य कारण अज्ञान, दोष रूपी हृदय ग्रन्थी को भेदने में समर्थ हो, वही "गुरु" है।

गृणाति उपदिशति धर्ममिति गुरुः गिरति ज्ञानमिति गुरुः।
यद्वा गीयते स्तूयते देव गन्धर्वादिभिरिति गुरुः ॥

अर्थात् जो जीवन का सम्पूर्ण धर्म बताये, ज्ञान रूपी ज्योति से अज्ञान का अन्धकार दूर करे, जिसकी देवता, गन्धर्व इत्यादि स्तुति करें, वही देव गुरु है।

गुरु शिष्य की समस्त बाहरी वृत्तियों को, ये बाहरी वृत्तियां जो उसे विनाश की ओर ले जाती हैं, उन वृत्तियों को शान्त कर, भीतर की वृत्तियां अन्तरआत्मा की वृत्तियां जाग्रत कराते हैं, जिससे वह शिष्य अमृतमय हो कर पूर्ण पुरुष बन सकता है।

दुःखी से दुःखी व्यक्ति को गुरु के पास आकर शान्ति प्राप्ति होती है और यदि दुःखी, निर्बल, धनहीन जीव को भी जब गुरु शिष्य रूप में अंगीकार कर लेते हैं, तो उस शिष्य को भी परम प्रसन्न, जीवन के पूर्ण आनन्द के अनुभव योग्य बना देते हैं, यही गुरु की प्रतिग्रह शक्ति की महिमा है।

शिष्य के मन में जब भाव आ जाता है, कि इष्ट की वाणी और गुरु की वाणी से एक ही अनुभूति है, उनका दिव्य शरीर, इष्ट रूप में ही कल्याण निहित बना है, तभी वह सफलता की आशा कर सकता है, यदि एक क्षण के लिए भी उसके मन में यह विचार आया कि श्री गुरुदेव मानव हैं, महापुरुष हैं, लौकिक हैं, तो यह निश्चय जानिये, कि साधक उसी बिन्दु पर खड़ा है जहां से उसने प्रस्थान किया, अपने लक्ष्य की ओर एक कदम भी नहीं बढ़ाया।

नर-वद् दृश्यते लोके, श्रीगुरूः पाप कर्मणा।
शिव-वद् दृश्यते लोके, भवानि! पुण्य कर्मणा ॥

अर्थात् श्री गुरुदेव—मानव, महात्मा, महापुरुष, केवल दुष्ट विचार धारा वाले दम्भियों को ही दिखाई देते हैं जो कि अपने तर्क के जाल में उलझे रहते हैं, श्रेष्ठ कार्य की ओर अग्रसर भक्ति, श्रद्धा से परिपूर्ण साधक

शिष्य को तो वे प्रत्यक्ष शिव रूप में ही दृष्टिगोचर होते हैं।

गुरु पादुका

गुरु अपने बाह्य शरीर में होते हुए भी आन्तरिक रूप से पूरे ब्रह्माण्ड को समाये रहते हैं, और इसको टिकाने का आधार केवल गुरु चरण ही हैं, इसीलिए लिखा है कि—

पृथिव्या यानि तीर्थानि तानि तीर्थानि सागरे ।
सागरे सर्व तीर्थानां गुरस्य दक्षिणे पदे ।।

अर्थात् संसार के सभी तीर्थ और पुण्य क्षेत्र गुरु के चरणों में साकार रूप से उपस्थित होते हैं, इसीलिए गुरु के चरणों का जल जिसको 'चरणामृत' कहा जाता है, स्वीकार किया जाता है और इसीलिए गुरु के चरणों में धारण की हुई खड़ाऊं या पादुका स्वयं गुरु का साक्षात् स्वरूप बन जाती है, और उसे अपने पूजा स्थान पर उसी प्रकार से स्थापित करना चाहिए, जिस प्रकार से हम सम्मान के साथ गुरु को अपने घर में श्रेष्ठ आसन पर बिठाते हैं।

भगवान शिव **"महेश्वरी तन्त्र"** में पार्वती को समझाते हुए कहते हैं, कि गुरु पादुका पूजन करने से साधक की सोलह कलाएं स्वतः विकसित होने लगती हैं, ये सोलह कलाएं निम्न प्रकार से हैं—

१-मूलाधार, २-स्वाधिष्ठान, ३-मणिपुर, ४-अनाहत, ५-विशुद्ध, ६-आज्ञा, ७-बिन्दु, ८-कला पद, ९-निर्वाधिका, १०-अर्धचन्द्र, ११-नाद, १२-नादान्त, १३-शक्ति, १४-व्यापिका, १५-समना, १६-उन्मना, ।

"कुलार्णव तन्त्र" में लिखा है—

है कोई शिष्य, जो इस गुरु आज्ञा-धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाये

शिष्य के लिए संसार में गुरु के अतिरिक्त कुछ भी नहीं हैं, वह बार-बार कहता है—

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वर, गुरु साक्षात्परं ब्रह्म तस्मै श्री गुरुवै नमः ।।

वह अपने गुरु में ही सारा विराट स्वरूप देखता है, कि मैं ऐसे महान गुरु का शिष्य बन कर धन्य हो गया।

शिष्य के लिए श्रद्धा, समर्पण एवं आज्ञा ही आधार है, दीक्षा ग्रहण करने वाले शिष्य का तो दायित्व और भी अधिक बढ़ जाता है, क्योंकि अब उसने एक बन्धन पूरी तरह तोड़ कर, नया बन्धन जोड़ा है, यह गुरु कृपा है, कि वे उसे क्या आज्ञा प्रदान करते हैं।

आज पूज्य गुरुदेव ने अपने सभी शिष्यों का आह्वान किया है कि—

— **है कोई ऐसा शिष्य जो घर-परिवार छोड़ कर सन्मार्ग में सेवा और समर्पण से कार्य करने को तत्पर हो ?**

— **है ऐसा कोई शिष्य, जो सब बन्धन तोड़ कर पूरे भारतवर्ष में गुरु-वाणी के प्रचार-प्रसार के लिए अपने आपको समर्पित कर दे ?**

— **है ऐसा कोई शिष्य, जो आकर खड़ा हो जाय, और कहे—मुझे केवल आज्ञा दें, बस, मुझे और कुछ नहीं चाहिए ?**

महारोग महोत्पाते महादेवि ! महाभये ।
महापदि महापापे स्मृता रक्षति पादुका ।।
तेनाधीनं स्मृतं ज्ञानं दृष्टं दत्तं च पूजितं ।
जिह्वायां वर्तते यस्य श्रीपरा-पादुका-स्मृतिः ।।

अर्थात् बड़े से बड़े रोग में, बड़े से बड़े कष्ट में, बड़ी से बड़ी आपत्ति में, बड़े से से बड़े संकट में, जो शिष्य श्री गुरु पादुका का पूजन एवं स्मरण करता है, तो उसकी सब बाधाएं दूर हो जाती हैं।

गुरु पादुका पूजन

इस अद्वितीय, जीवन को बदल देने वाली साधना का मूल आधार मन्त्र सिद्ध प्राण प्रतिष्ठा युक्त गुरु पादुका है, किसी भी गुरुवार के दिन साधक स्नान कर शुद्ध श्वेत वस्त्र धारण करें और अपने पूजा स्थान में उत्तर दिशा की ओर आसन बिछाकर बैठें तथा सामने एक लकड़ी के पीढ़े पर पीला वस्त्र बिछाकर एक ताम्र पात्र में गुरु पादुका स्थापित करें, तत्पश्चात् पूजन कार्य प्रारम्भ करें।

शरीर में गुरु स्थापन प्रयोग

सर्व प्रथम अपने बांएं हाथ में जल लेकर दाहिने हाथ से शरीर के अंगों पर जल स्पर्श करें तथा निम्न मन्त्र बोलें—

ॐ कूर्माय नमः
ॐ आधार शक्तये नमः
ॐ पृथिव्यै नमः
ॐ धर्मायै नमः
ॐ ज्ञानाय नमः
ॐ सवित्रालाय नमः
ॐ ऐश्वर्याय नमः
ॐ वैराग्याय नमः
ॐ अनेश्वर्याय नमः
ॐ अनन्ताय नमः
ॐ सर्वतत्वात्मकाय नमः
ॐ आनन्दकन्द कन्दाय नमः
ॐ प्रकृतमयपत्रेभ्यो नमः
ॐ विकारमयकेशरेभ्यो नमः
ॐ पंचाशर्णाबीजाढ्यकर्णिकायै नमः

अब अपने सामने गुरु चरण पादुका के आगे पांच चावल की ढेरी बनाएं और प्रत्येक पर एक-एक सुपारी रखें और केशर की बिन्दी लगाकर निम्न मंत्र उच्चारण करें—

ॐ गुं गुरुभ्यो नमः
ॐ पं परम गुरुभ्यो नमः
ॐ पं परात्पर गुरुभ्यो नमः
ॐ पं परमेष्ठि गुरुभ्यो नमः
ॐ पं परापर गुरुभ्यो नमः

अब साधक खड़ाऊं का पूजन प्रारम्भ करें, खड़ाऊं पर केशर कुंकुम गुलाल तथा पुष्प अर्पित करें और अपने दोनों हाथ जोड़ कर गुरु का ध्यान करते हुए १०८ बार गुरु पादुका मंत्र का जप करें—

यह गुरु आज्ञा-धनुष उठाने के लिए कौन शिष्य आता है, यह परीक्षा नहीं है, यह आमंत्रण है, पीछे की तुम सोच समझ कर आना, आगे की तो गुरुदेव सोच लेंगे, उसके बारे में तुम्हें चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है।

यदि तुम अपने बन्धनों से मुक्त हो कर, निश्छल भाव से, केवल आज्ञा शब्द ही प्राप्त करने के लिये अधिकारी समझते हो, तो ऐसे शिष्य को आमंत्रण है।

ध्यान रहे केवल आना ही तुम्हारे हाथ में है, जाना नहीं, कोई हिसाब-किताब, गणित जोड़ कर मत आना, अपना सारा हिसाब छोड़ कर आना। ●

गुरु पादुका मन्त्र

।। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः हंसः शिवः सोहं
हंसः स्वरूप निरूपणहेतवे श्री गुरुवे नमः ।।

इसके पश्चात् दोनों पादुकाओं को स्पर्श करें और अपने हाथों को नेत्रों से लगाएं तथा पुनः अपने स्थान पर स्थापित कर एक माला गुरु मन्त्र का जप करें—

।। ॐ परमतत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः ।।

इसके पश्चात् अपने पूरे परिवार के साथ गुरु आरती सम्पन्न करें और गुरु पादुका के सामने चढ़ाये गये नैवेद्य अर्थात् प्रसाद को ग्रहण करें।

इन पादुकाओं को पात्र में ही अपने पूजा स्थान में स्थापित रखें तथा नित्य प्रति पूजन अवश्य करें, जब भी साधक किसी कार्य के लिए घर से बाहर निकले तो गुरु चरण पादुका स्पर्श करके अपने कार्य हेतु रवाना हो।

नियमित साधना पूजा करने वाले साधक, शिष्य को हर समय अपने गुरु की उपस्थिति का साक्षात् अनुभव होता है और उसे हर कार्य में उचित निर्देश आशीर्वाद एवं पूर्णता की प्ति होती है। ●

मेरे शिष्यों,

आज तुमसे कुछ खुली-खुली बातें करने की इच्छा है, इसमें कुछ कड़वी बातें भी होंगी और कुछ मीठी भी।

मैं जो प्रश्न लिख रहा हूं, उसका मुझे उत्तर भेजने की आवश्यकता नहीं है, अपनी आत्मा पर हाथ रख कर पूछ लेना, उत्तर मेरे पास पहुंच जायेगा।

— क्या तुमने शिष्यत्व की दीक्षा प्राप्त की है ?

— क्या तुम शिष्य होने के सारे कर्त्तव्य निभाते हो ?

— क्या तुम वर्ष में एक बार भी गुरुधाम आते हो ?

— क्या तुम प्रत्येक गुरु पूर्णिमा पर उपस्थित होते हो ?

— क्या तुम अपने दिन प्रतिदिन के दैनिक क्रिया कलाप में साधना, भक्ति, गुरु ध्यान, गुरु आज्ञा, के सम्बन्ध में कुछ करते हो ?

— क्या तुम गुरु अमृत वचनों की इस पत्रिका के प्रचार प्रसार हेतु नियमित रूप से कुछ समय देते हो ?

— क्या तुमने सेवा और समर्पण में कोई विशेष कार्य किया है ?

— क्या तुम महीने में एक दिन भी अपने जैसे शुद्ध विचारों वाले ईश्वर प्रेमी सज्जनों के साथ बैठ कर, अन्य पत्रिका सदस्यों के साथ बैठ कर ध्यान, जप, साधना, का विशेष कार्य करते हो ?

— क्या तुम अपने अन्य गुरु भाइयों से निरन्तर मिलते रहते हो ?

— क्या तुम महसूस करते हो, कि गुरु हर समय तुम्हारे साथ है ?

मैं उत्तर जानता हूं, लेकिन मुझे विश्वास है, कि जिनके इन सभी प्रश्नों के उत्तर "हां" में नहीं हैं, वे विचार अवश्य करेंगे, मुझे उन शिष्यों को भी अपने पास बिठाना है। ★

मैं तो साधना के माध्यम से

हर क्षण तुम्हें उपलब्ध हूं

गुरु पूर्णिमा पर्व पर तो हर हालत में जहां भी गुरु हों वहां आना ही चाहिए, और साल में एक बार तो गुरुदेव से व्यक्तिगत रूप से इस अवसर पर मिलना ही चाहिए।

पर यदि किसी कारणवश न आ सकें तो फिर इस प्रयोग को संपन्न कर गुरु पूर्णिमा के दिन गुरुदेव को सूक्ष्म रूप से अपने घर आमन्त्रित कर विशेष पूजन सम्पन्न कर ही लेना चाहिए।

एक विशेष प्रयोग विधि, जो अनुपस्थित साधकों और शिष्यों के लिए अनिवार्य है।

गुरु पूर्णिमा पर्व पर गुरुदेव से मिलना ही जीवन का सौभाग्य होता है, वास्तव में ही वे अभागे होते हैं जो ऐसे अद्वितीय और महान पर्व पर भी गुरुदेव से व्यक्तिगत रूप से नहीं मिल पाते या उनके चरणों में नहीं बैठ पाते, या उनका सत्संग नहीं ले पाते।

जो वास्तव में ही कमजोर हैं, जिन में साहस और हिम्मत नहीं है वे परिस्थितियों के आगे घुटने टेक देते हैं और गुरु पूर्णिमा पर्व पर उनके पास नहीं पहुंच पाते, वे कायर होते हैं जो अपने मन को यह समझा देते हैं कि पैसों की व्यवस्था ही नहीं है, कैसे जाना होगा, या वहां जाने से क्या लाभ होगा, या इतनी लम्बी यात्रा कैसे कर पाएंगे, अथवा भीड़ में गुरुदेव से मिलना होगा भी या नहीं, या इतनी बार गुरुदेव से मिल लिये हैं, फिर इस बार नहीं भी मिल लेंगे तो क्या हो जायेगा— आदि कायरता और बुझदिली के ही परिचय पत्र हैं, जिसके माध्यम से साधक अपने आपको समझाने की असफल चेष्टा करता है।

गुरुदेव से मिलना तो आनन्द का पर्व है

यह जीवन की आपा-धापी तो चलती ही रहेगी, परिवार की तरफ से ये बेड़ियां तो पांवों में पड़ती ही

रहेंगी पर जो वास्तव में ही साहसी हैं, जो वास्तव में ही क्षमतावान हैं, जिनके पुण्य उदय होते हैं, जो सौभाग्य के ललाट पर तिलक कर सकता है, वह किसी की परवाह नहीं करता और हुलस कर, हुमस कर आगे बढ़ जाता है, गुरु पूर्णिमा पर्व पर अपने प्रिय गुरुदेव से मिल कर जीवन को पूर्णता की ओर अग्रसर कर लेता है।

पर यदि फिर भी न आ पायें तो

हो सकता है, कोई कारण हो, कोई विशेष अड़चन हो, कोई ऐसी घटना हो, जिसकी वजह से हम गुरुदेव के पास पहुंच ही नहीं सकें, तब भी हमें गुरु पूर्णिमा जैसे महान पर्व पर इस प्रयोग को तो सम्पन्न कर ही लेना चाहिए, जिसके माध्यम से गुरुदेव सूक्ष्म रूप से घर में आ सकें, उनके आने का एहसास हो सके, और पूर्णता के साथ हम उनका पूजन, अर्चन कर सकें।

इसीलिए सिद्धाश्रम में प्रयुक्त उस विशेष विधि को पहली बार पत्रिका के माध्यम से स्पष्ट किया जा रहा है, जिसके द्वारा घर बैठे भी गुरुदेव को आमंत्रित करें और उनको घर पर आना ही पड़े, हमें यह आभास हो जाय कि वह विराट सत्ता घर पर आई है, हमें एहसास हो जाय कि उनकी उपस्थिति हमारे घर में है, और तब हम पूर्ण विधि-विधान के साथ गुरु पूजन सम्पन्न कर सकें, और जीवन को पूर्णता प्रदान कर सकें।

गुरु पूजन

यह सिद्धाश्रम द्वारा विशेष प्रयोग विधि है, जो केवल गुरु पूर्णिमा के दिन ही सम्पन्न की जाती है, क्योंकि यह एक ऐसी विधि है, जिसके माध्यम से गुरु को उसके घर में आना ही पड़ता है, उपस्थित होना ही पड़ता है, इसलिए इस प्रयोग को बार-बार सम्पन्न नहीं करना चाहिए अपितु विशेष अवसर पर इस प्रयोग को पूर्ण श्रद्धा और विश्वास के साथ सम्पन्न करना चाहिए, जिससे कि हम उनकी उपस्थिति का अहसास पूरी क्षमता के साथ कर सकें।

गुरु पूर्णिमा के दिन यों तो जहां गुरुदेव हों, वहीं पर जा कर उनका विशेष पूजन-अर्चन सम्पन्न करना चाहिए पर यदि ऐसा संभव न हो तो अपने घर पर ही पूजन सामग्री मंगा कर इस विशेष गुरु पूजन को सम्पन्न करना चाहिए।

इस पूजन क्रम में कुछ विशेष यन्त्र और पूजन सामग्री की आवश्यकता होती है, जो कि किसी महत्वपूर्ण स्थान से ही प्राप्त की हुई उपयोग में ली जाती है, इन में भी **'गुरु आहूत यन्त्र'**, विशेष महत्वपूर्ण है, इसके अलावा कुछ और साधना सामग्री होती है, जिसके माध्यम से यह गुरु पूजन क्रम सम्पन्न होता है।

इस में लगभग ग्यारह विशेष सामग्री यन्त्र आदि की जरूरत पड़ती है जिस में पूजन सामग्री भी शामिल है और यह सामग्री सामान्यतः बाजार में उपलब्ध नहीं होती इसीलिए पत्रिका कार्यालय ने उदारतापूर्वक इस सामग्री से सम्बन्धित एक पैकेट तैयार किया है जिसे **"गुरु पूर्णिमा पैकेट"** कहा गया है, इस पर व्यय १९४)रु० आ जाता है।

आपको अग्रिम धनराशि भेजने की जरूरत नहीं है, आप केवल पत्र द्वारा समय रहते ही सूचित कर दें कि मुझे दुर्लभ महत्वपूर्ण **"गुरु पूर्णिमा पैकेट"** की आवश्यकता है और हम आपको उपरोक्त मूल्य तथा डाक खर्च जोड़ कर वी०पी० से यह सामग्री भिजवा देंगे जिससे कि आपको सुरक्षित रूप से यह पैकेट और सामग्री प्राप्त हो सके।

पूजन प्रयोग

गुरु पूर्णिमा अर्थात् इस वर्ष २६ जुलाई ९१ को सुबह स्नान आदि से निवृत हो कर अपने पूजा स्थान में पीला आसन बिछा कर पीली धोती या पीली साड़ी पहन कर बैठ जांय सामने शुद्ध घृत का दीपक लगा लें और पहले से ही प्राप्त किया हुआ गुरु चित्र स्थापित कर दें।

इसके बाद पैकेट से प्राप्त गुरु यन्त्र को थाली में रख कर उसका जल से स्नान पूजन आदि सम्पन्न करें और उसे पोंछ कर केसर का तिलक करें और पुष्प आदि समर्पित करें, अगरबत्ती सुगन्धित द्रव्य आदि प्रयोग में लें।

यह पूजन आप स्वयं और सुविधा हो तो पूरे परिवार के साथ सम्पन्न करें, फिर जो पैकेट में विशेष गुरु माला आई है, उसके द्वारा निम्न गुरु आहूत मन्त्र की एक माला मन्त्र जप करें, यह मन्त्र अत्यन्त तेजस्वी होता है, और गुरु आहूत मन्त्र का तात्पर्य होता है कि हर हालत में गुरु को उपस्थित होना ही है, इसीलिए विशेष अवसरों पर ही इस मन्त्र का प्रयोग करना चाहिए।

गुरु आहूत मन्त्र

ॐ श्रीं गुरुर्वै आहूतं पूर्णिमा त्वं सदं सह
विप्रे यता पूर्वे श्रियं सह मदैव चित्तं ॥

जब सुगन्ध सी अहसास हो या पदचाप सुनाई दे अथवा ऐसा लगे कि जैसे पूजा स्थान में कोई उपस्थित हुआ है तो पूर्ण भक्ति भाव से गुरुदेव को प्रणाम करें, और पैकेट में जो अन्य यन्त्र आदि हैं, उन्हें थाली में संजो कर रखें फिर इन सब का संक्षिप्त पूजन करें, सब पर केसर का तिलक करें, अक्षत पुष्प समर्पित करें।

इसके बाद हाथ में जल ले कर संकल्प लें कि इस गुरु पूर्णिमा के अवसर पर मैं अपने गुरु से (आपसे) पूर्ण एकाकार होना चाहता हूं, जिससे कि आपका सारा ज्ञान, आपकी गरिमा, और आपकी तेजस्विता प्राप्त हो सके, ऐसा कहते हुए जल छोड़ दें।

फिर पूरे विधि-विधान के साथ गुरुदेव का पूजन करें और गुरु चित्र को पुष्प हार पहनाएं तथा पूर्ण मनोयोग से गुरु मन्त्र की एक माला मन्त्र जप करें—

गुरु मन्त्र

॥ ॐ परम तत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः ॥

ऐसा करने से पूर्व अपने पास ही दाहिनी ओर पीला आसन बिछा देना चाहिए और उस पर पुष्प की पंखुड़ियां बिखेर देनी चाहिए, जिससे कि उस आसन पर गुरुदेव आ कर विराजमान हों।

अन्त में दूध के बने प्रसाद से गुरुदेव को भोग लगा कर पूरे विधि-विधान के साथ गुरु आरती सम्पन्न करें और फिर घर में जो पकवान बनाये हैं, पूरे परिवार के सदस्य मिल कर भोजन करें।

हमने इस पैकेट में कुछ विशेष प्रयोग विधि भी दी है, जो महत्वपूर्ण है, उसके अनुसार ही प्रयोग को सम्पन्न करें।

वास्तव में ही जो साधक या शिष्य किसी विशेष कारण से गुरु पूर्णिमा पर्व पर न आ सकें तो उन्हें यह प्रयोग अपने घर पर सम्पन्न कर लेना चाहिए और यदि पूरा परिवार गुरु पूर्णिमा पर न आ पा रहा हो और केवल घर का मुखिया ही आ रहा हो तो उसे चाहिए कि वह यह पैकेट पहले से ही मंगवा कर रख दे और अपनी पत्नी, पुत्र, पुत्र-वधू या पुत्री को यह हिदायत दे दें कि मेरी अनुपस्थिति में मेरे घर पर पूर्णिमा के दिन यह प्रयोग अवश्य ही सम्पन्न कर लिया जाय।

यह अपने आप में एक महत्वपूर्ण सिद्धाश्रम से प्राप्त दुर्लभ प्रयोग है, जिसे प्रत्येक घर में सम्पन्न होना चाहिए। ●

श्री गुरुपादुका पंचकम्

ॐ नमो गुरुभ्यो गुरुपादुकाभ्यो
नमः परेभ्यः परपादुकाभ्यः ।
आचार्यसिद्धेश्वरपादुकाभ्यो
नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्यः ।।१।।

मैं पूज्य गुरुदेव को प्रणाम करता हूं, मेरी उच्चतम भक्ति गुरु के चरणों और उनकी पादुका के प्रति है, क्योंकि गंगा-यमुना आदि समस्त नदियां और संसार के समस्त तीर्थ उनके चरणों में समाहित हैं, यह पादुकाएं ऐसे चरणों से आप्लावित रहती हैं, इसीलिए मैं इन पादुकाओं को प्रणाम करता हू, यह मुझे भवसागर से पार उतारने में सक्षम हैं, यह पूर्णता देनें में सहायक हैं, ये पादुकाएं आचार्य और सिद्ध योगी के चरणों में सुशोभित रहती हैं, और ज्ञान के पुंज को अपने ऊपर उठाया है, इसीलिए ये पादुकाएं ही सही अर्थों में सिद्धेश्वर बन गई हैं, इसीलिए मैं इन गुरु पादुकाओं को भक्ति भाव से प्रणाम करता हूं ।

ऐंकार ह्रींकाररहस्ययुक्त
श्रींकारगूढार्थमहाविभूत्या ।
ओम्कारमर्मप्रतिपादिनीभ्यां
नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्याम् ।।२।।

गुरुदेव "ऐंकार" रूप युक्त हैं, जो कि साक्षात् सरस्वती के पुंज हैं, गुरुदेव "ह्रींकार" युक्त हैं, एक प्रकार से देखा जाय तो वे पूर्णरूपेण लक्ष्मी युक्त हैं, मेरे गुरुदेव "श्रींकार" युक्त हैं, जो संसार के समस्त वैभव, सम्पदा और सुख से युक्त हैं, जो सही अर्थों में महान विभूति हैं, मेरे गुरुदेव "ॐ" शब्द के मर्म को समझाने में सक्षम हैं, वे अपने शिष्यों को भी उच्च कोटि की साधना सिद्ध कराने में सहायक हैं, ऐसे गुरुदेव के चरणों में लिपटी रहने वाली ये पादुकाएं साक्षात् गुरुदेव का ही विग्रह हैं, इसीलिए मैं इन पादुकाओं को श्रद्धा-भक्ति युक्त प्रणाम करता हूं ।

होत्राग्निहौत्राग्निहविष्यहोतृ-
होमादिसर्वाकृतिभासमानं ।
यद् ब्रह्म तद्बोधवितारिणीभ्यां
नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्याम् ।।३।।

ये पादुकाएं अग्नि स्वरूपा हैं, जो मेरे समस्त पापों को समाप्त करने में समर्थ हैं, ये पादुकाएं मेरे नित्य प्रति के पाप, असत्य, अविचार और अचिन्तन मे युक्त दोषों को दूर करने में समर्थ हैं. ये अग्नि की तरह हैं, जिनका पूजन करने से मेरे समस्त पाप एक क्षण मे ही नष्ट हो जाते हैं, इनके पूजन से मुझे करोड़ों यज्ञों का फल प्राप्त होता है, जिसकी वजह से मैं स्वयं ब्रह्म स्वरूप हो कर ब्रह्म को पहिचानने की क्षमता प्राप्त कर सका हूं, जब गुरुदेव मेरे पास नहीं होते, तब ये पादुकाएं ही उनकी उपस्थिति का आभास प्रदान कराती रहती हैं, जो मुझे भवसागर से पार उतारने में सक्षम हैं, ऐसी गुरु पादुकाओं को मैं पूर्णता के साथ प्रणाम करता हूं ।

कामादिसर्पव्रजगारुडाभ्यां
विवेकवैराग्यनिधिप्रदाभ्यां ।
बोधप्रदाभ्यां द्रुतमोक्षदाभ्यां
नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्याम् ।।४।।

मेरे मन में काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार के सर्प विचरते ही रहते हैं, जिसकी वजह से मैं दुखी हूं, और साधनाओं में मैं पूर्णता प्राप्त नहीं कर पाता, ऐसी स्थिति में गुरु पादुकाएं गरुड़ के समान हैं, जो एक क्षण में ही ऐसे कामादि सर्पों को भस्म कर देती हैं, और मेरे हृदय में विवेक, वैराग्य, ज्ञान, चिन्तन, साधना और सिद्धियों का बोध प्रदान करती हैं, जो मुझे उन्नति की ओर ले जाने में समर्थ हैं, जो मुझे मोक्ष प्रदान करने में सहायक हैं, ऐसी गुरु पादुकाओं को मैं भक्ति सहित प्रणाम करता हूं ।

अनंतसंसारसमुद्रतार
नौकायिताभ्यां स्थिरभक्तिदाभ्यां ।
जाड्याब्धिसंशोषणवाडवाभ्यां
नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्याम् ।।५।।

यह संसार विस्तृत है, इस भवसागर को पार करने में ये पादुकाएं नौका की तरह हैं, जिसके सहारे मैं इस अनन्त संसार सागर को पार कर सकता हूं, जो मुझे स्थिर भक्ति देने में समर्थ हैं, मेरे अन्दर अज्ञान की घनी झाड़ियां हैं, उसे अग्नि की तरह जला कर समाप्त करने में सहायक हैं, ऐसी पादुकाओं को मैं भक्ति सहित प्रणाम करता हूं ।

तांत्रोक्त गुरु साधना

तन्त्र साधनाओं में गुरु को आधार माना गया है, गुरु ही शिष्य को तन्त्र का पूरा ज्ञान करा सकता है, उसका प्रायोगिक ज्ञान दे सकता है, जिससे शिष्य अपने मार्ग में कहीं भटक न जाए और लाभ के स्थान पर अपनी हानि नहीं कर बैठे।

अतः तन्त्र साधना में इच्छुक साधक को कम से कम महीने में एक बार अपने स्थान पर गुरु का तान्त्रोक्त पूजन अवश्य करना चाहिए साधनाएं तन्त्र की हैं अतः पूजन भी पूर्ण तान्त्रोक्त विधि से सम्पन्न होना चाहिए।

समस्त साधनाओं का प्रारम्भ और समापन गुरु से ही होता है, भारतवर्ष ही नहीं अपितु विश्व के सभी मार्गों एवं सम्प्रदायों में गुरु का पद सर्वोच्च रूप से स्वीकार किया गया है, यों तो सभी ग्रन्थों में गुरु को प्रमुखता दी गई है, परन्तु तन्त्र में तो गुरु को समस्त महाविद्या साधनाओं एवं अन्य देव-साधनाओं में सर्वोच्चता प्रदान की गई है, उन्हें भगवान शिव का साक्षात् स्वरूप माना गया है।

ॐ संविद्रुपाय शान्ताय शंभवे सर्वसाक्षिणे।
सोमनाथाय महते शिवाय गुरुवै नमः॥

"यामल तन्त्र" में गुरु, देवता और मन्त्र में कोई भेद नहीं माना गया है—

गुरुरेकः शिवः प्रोक्तः सोऽहं देवि न संशयः। गुरुस्त्वमपि देवेशि ! मन्त्रोऽपि गुरुरुच्यते॥ अतो मन्त्रे गुरौ देवे, न हि भेदः प्रजायते॥

देवता-गुरु मन्त्राणामैक्यं, सम्भावनन् धिया।
तदा सिद्धा भवेन्मन्त्रः॥

"मुण्ड माला तन्त्र" में स्पष्ट रूप से बताया गया है कि जो साधक गुरु, देवता और मन्त्र में भेद नहीं समझता तथा इन तीनों को परस्पर एक दूसरे का पूरक समझता है वही जीवन में पूर्ण सिद्ध साधक बन सकता है।

मन्त्रे वा गुरु-देवे वा न भेद यस्तु कल्पते।
तस्य तुष्टा जगद्धात्री, किन्न दद्याद् दिने-दिस॥

भगवान शिव ने स्वयं कहा है, कि 'हे देवी ! गुरु ही एक मात्र शिव कहे गये हैं और मैं वही हूं, इसमें कोई संदेह नहीं, तुम जगत जननी अम्बिका स्वरूपा हो और तुम भी गुरु, मन्त्र और दुर्गा हो, अतः मन्त्र गुरु और देवता में कोई भेद नहीं होता, इन तीनों की एकता भावना बुद्धि द्वारा करते रहने से ही मन्त्र सिद्ध होता है, जो साधक मन्त्र, गुरु और देवता में कोई भेद नहीं करता, उस पर

जगदम्बा प्रसन्न होकर सब कुछ दे देती है।"

यही नहीं अपितु **"सुन्दरी तापिनी तांत्रिक ग्रन्थ"** में स्पष्ट कहा गया है—

यथा घटश्च कलशः कुम्भश्चैकार्थ-वाचका।
तथा देवे मन्त्रो च गुरुश्चैकार्थ-वाचका॥

अर्थात् जिस प्रकार घट, कलश और कुम्भ तीनों का एक ही अर्थ होता है, उसी प्रकार मन्त्र देवता और गुरु तीनों एक ही अर्थ वाले हैं।

कुण्डलिनी के मूलाधारादि षटचक्रों में सर्वोपरि स्थान श्री गुरुदेव का ही नियत किया गया है, अधोमुख सहस्र-दल-पद्म-कर्णिकान्तर्गत मृणाल रूपी चित्रिणी नाड़ी से भूपित गुरु मन्त्रात्मक द्वादश-वर्ण (ह स ख फ्रें ह स क्ष म ल व र य) रूपी द्वादश दल पद्म में अ-क-थ आदि त्रिरेखा और ह-ल-क्ष कोण से भूषित कामकला, त्रिकोण में नाद बिन्दु रूपी मणि पीठ अथवा हंस-पीठ पर शिव स्वरूप श्री गुरुदेव का स्थान है।

"पादुका तन्त्र" में गुरु को शिव और शक्ति का समन्वय स्वरूप माना है, और महर्षि ने गुरु का ध्यान इस प्रकार बताया है—

"निज-शिरसि श्वेत-वर्ण सहस्र-दल-कमल-कर्णिकान्तर्गत-चन्द्रमण्डलोपरि स्व-गुरुं शुक्ल-वर्णं शुक्लालंकार-भूषितं ज्ञानानन्द-मुदित-मानसं सच्चिदानन्द-विग्रहं चतुर्भुजं ज्ञान-मुद्रा-पुस्तक-वराभय-कर त्रिनयनं प्रसन्न-वदनेक्षणं सर्व देव-देवं वामांग वाम-हस्त-धृत-लीला कमलया रक्त-वसना-भरणया स्व-प्रियया दक्ष-भुजेनालिंगतं परम-शिव-स्वरूपं शान्तं सुप्रसन्नं ध्यात्वा तच्चरण-कमल-युगल-विगलदमृत-धारया स्वात्मानं प्लुतं विभाव्य मानसो पचारैराराध्यै"॥

जो साधना में पूर्णता चाहते हैं, जो सही अर्थों में सिद्ध योगी बनने की इच्छा रखते हैं, जो सम्पूर्ण प्रकृति को अपने अनुकूल बनाने की भावना रखते हैं, उनके लिए तन्त्र मार्ग ही श्रेष्ठ है, और तन्त्र में गुरु पूजा अत्यावश्यक मानी गई है, **"काली विलास तन्त्र"** में स्पष्ट रूप से बताया गया है—

गुरु-पूजां विना देवि, स्वेष्ट-पूजां करोति यः।
मन्त्रस्य तस्य तेजांसि हरते भैरवः स्वयम्॥
पूजा-काले च चार्वंगि आगच्छेच्छिष्यमन्दिरम्।
गुरुर्वा गुरुपुत्रो वा पत्नी वा वर-वर्णिनि॥
तदा पूजां परित्यज्य पूजयेत् स्वगुरुं प्रिये।
देवता-पूजनार्थं यद् गन्ध-पुष्पादिक चयत्॥
तत्सर्वं गुरुवे दद्यात् पूजयेन्नग-नन्दिनि।
तदैव सहसा देवि! देवता-प्रीतिमाप्नुयात्॥

अर्थात् हे देवी! जो बिना गुरु पूजा किये अपने इष्ट या देवता का पूजन करता है, उसके मन्त्र का तेज भैरव हर लेते हैं, हे प्रिये! यदि इष्ट पूजन के समय में भी श्री गुरुदेव, गुरु-पुत्र या गुरु-पत्नी शिष्य के घर आ जावें तो तत्काल इष्ट पूजन अथवा साधना क्रम उसी क्षण बीच में ही छोड़ कर गुरुदेव की पूजा करें, देवता की पूजा के लिए जो भी सामग्री शास्त्रों में बताई गई है, उसी से गुरुदेव की पूजा करनी चाहिए और ऐसा करने पर ही इष्ट एवं देवता प्रसन्न होते हैं।

इस साधना में आगे जो सामग्री का विवरण आता है, उसकी व्यवस्था साधक पहले कर ले—जल पात्र, गंगाजल, चन्दन, कुंकुम, केसर, अष्टगन्ध, अक्षत, पुष्प, बिल्व पत्र, दीप, मुख्य हैं, गुरु पूजा में अपने पूजा स्थान में हर समय गुरु चित्र अथवा मूर्ति अवश्य स्थापित करें, पूजा में **गुरु यन्त्र, षटचक्र, कुण्डलिनी जागरण यन्त्र, पच्चीस गुरु प्रसाद फल** आवश्यक हैं, इनकी व्यवस्था भी कर लें।

अब नीचे दिये गये क्रमानुसार पूजा सम्पन्न करें, आवाहन के पश्चात् गुरुदेव को अपने शरीर के षटचक्रों में स्थापित करते समय कुण्डलिनी यन्त्र का पूजन करें।

तान्त्रोक्त विधि सबसे महत्वपूर्ण एवं एक विशेष क्रम से की जाने वाली विधि है, इस विधि में किसी प्रकार की

सूक्ष्मता नहीं की जा सकती है, पूर्ण शास्त्रीय विधान आवश्यक है, सर्वप्रथम अपने सामने पूजा स्थान में एक अलग खण्ड बना लेना चाहिए जिसमें गुरु पूजा की सभी सामग्री रखी जा सके इस विशेष तांत्रोक्त सामग्री का बार-बार स्थान बदला नहीं किया जा सकता।

इस विशेष स्थान, जो विशेष ताक (आला या खण्ड) हो सकता है, पूरे स्थान पर पीला वस्त्र बिछा दें इसकी दीवारों पर पीला वस्त्र अथवा कागज लगा दें, साधक-साधिका के वस्त्र भी पीले हों, पूर्व दिशा को मुंह कर सम्पूर्ण पूजन करना है।

सर्वप्रथम तांत्रोक्त गुरु यन्त्र स्थापित करें, गुरु चित्र फ्रेम में मढ़वाकर लगा दें, गुरु के आगे षटचक्र कुण्डलिनी जागरण यन्त्र स्थापित करें, इस यन्त्र के नीचे अष्ट गन्ध से अपना नाम अवश्य लिख दें, अब गुरु ध्यान कर जिस क्रम में मन्त्र और सामग्री दी गई हैं, उसी क्रम में पूजा करें।

गुरु ध्यान

द्विदल कमल मध्ये बद्धसंवित्समुद्रं।
धृतशिवमयगात्रं साधकानुग्रहार्थम्॥
श्रुतिशिरसिविभान्तं बोधमार्तण्डमूर्ति।
शमिततिमिरशोकं श्रीगुरूं भावयामि॥
हृदंबुजे-कर्णिकमध्यसंस्थं सिंहासने संस्थितदिव्यमूर्ति।
ध्यायेद्गुरुं चन्द्रशिलाप्रकाशं चित्पुस्तकाभीष्टवरं-दधानम्॥

आवाहन

ॐ स्वरूपनिरूपण हेतवे श्री गुरवे नमः।
ॐ स्वच्छप्रकाश-विमर्श-हेतवे श्रीपरमगुरवे नमः।
ॐ स्वात्माराम पंजरविलीन-तेजसे श्री परमेष्टि गुरवे नमः, आवाहयामि पूजयामि॥

षोडशी क्रम के अनुसार आवाहन के बाद गुरुदेव को अपने शरीर के षट चक्रों में स्थापित करें।

श्री शिवानन्दनाथ परा-शक्त्यम्बा मूलाधारे स्थापयामि
श्री सदाशिवानंदनाथ चिच्छक्त्यम्बा स्वाधिष्ठान चक्रे स्थापयामि
श्री ईश्वरानंदनाथ आनन्द शक्त्यम्बा मणिपुर चक्रे स्थापयामि
श्री रुद्र-देवानंदनाथ इच्छा शक्त्यम्बा अनाहत चक्रे स्थापयामि
श्री विष्णु-देवानंदनाथ ज्ञान-शक्त्यम्बा विशुद्ध चक्रे स्थापयामि
श्री ब्रह्म-देवानंदनाथ क्रिया-शक्त्यम्बा सहस्रार चक्रे स्थापयामि

चन्दन अक्षत

निम्न नौ 'सिद्धोध' का उच्चारण करते हुए, गुरु के चरणों पर चन्दन अक्षत समर्पित करें।

ॐ उन्मनाकाशानन्दनाथ-जलं समर्पयामि
श्री समनाकाशानंदनाथ-गंगाजलं स्नानं समर्पयामि
व्यापकानन्दनाथ-सिद्धयोगा जलं समर्पयामि
शक्त्याकाशानन्दनाथ-चन्दनं समर्पयामि
ध्वन्याकाशानन्दनाथ-कुंकुंम समर्पयामि
ध्वनिमात्राकाशानन्दनाथ-केसरं समर्पयामि
अनाहताकाशानन्दनाथ-अष्टगन्धं समर्पयामि
विन्द्वाकाशानन्दनाथ-अक्षतं समर्पयामि
द्वन्द्वाकाशानन्दनाथ-सर्वोपचारार्थे समर्पयामि

पुष्प-बिल्व पत्र

अब गुरु यन्त्र, गुरु चित्र, एवं षटचक्र जागरण यन्त्र पर पुष्प पर एवं बिल्व पत्र अर्पित करें।

दीप

श्री महादर्पनाम्बा सिद्ध ज्योति समर्पयामि
श्री सुन्दर्यम्बा सिद्ध प्रकाशं समर्पयामि
श्री करालाम्बिका सिद्ध दीपं समर्पयामि
श्री त्रिबाणाम्बा सिद्ध ज्ञान दीपं समर्पयामि
श्री भीमाम्बा सिद्ध हृदय दीपं समर्पयामि

श्री करालयाम्बा सिद्ध सिद्ध दीपं समर्पयामि
श्री खराननाम्बा सिद्ध तिमिरनाश दीपं समर्पयामि
श्री विधीशालीनाम्बा पूर्ण दीपं समर्पयामि
श्री सोममण्डल नीराजनं समर्पयामि

नीराजन

इसके बाद ताम्र पात्र में जल, कुंकुम, अक्षत एवं पुष्प लेकर गुरु चरणों में समर्पित करें—

श्री सूर्यमण्डल नीराजनं समर्पयामि
श्री अग्निमण्डल नीराजनं समर्पयामि
श्री ज्ञानमण्डल नीराजनं समर्पयामि
श्री ब्रह्ममण्डल नीराजनं समर्पयामि

तत्पश्चात् अपने दोनों हाथों में पुष्प ले कर निम्न **'पंच पंचिका'** उच्चारण करते हुए इन दिव्य महाविद्याओं की प्राप्ति के लिए प्रार्थना करें—

१-पंच लक्ष्म्य :—१-श्री विद्या-लक्ष्म्यम्बा, २-श्री एकाक्षर-लक्ष्मी लक्ष्म्यम्बा, ३-श्री महालक्ष्मी-लक्ष्म्यम्बा, ४-श्री त्रिशक्ति-लक्ष्मी-लक्ष्म्यम्बा, ५-श्री सर्वसाम्राज्य-लक्ष्मी लक्ष्म्यम्बा।

२-पंच कोश :—१-श्री विद्या-कोशाम्बा, २-श्री पर-ज्योतिः-कोशाम्बा, ३-श्री परि-निष्फल-शाम्भवी-कोशाम्बा, ४-श्री अजपा-कोशाम्बा; ५-श्री मातृका कोशाम्बा।

३-पंच कल्पलता :—१-श्री विद्या कल्पलताम्बा, २-श्री त्वरिता कल्पलताम्बा, ३-श्री परि-जातेश्वरी कल्प-लताम्बा, ४-श्री त्रिपुटा कल्पलताम्बा, ५-श्री पंचबाणेश्वरी-कल्पलताम्बा।

४-पंच कामदुधा :— १-श्री विद्या-कामदुधाम्बा, २-श्री अमृतपीठेश्वरी कामदुधाम्बा, ३-श्री सुधांसू काम-दुधाम्बा, ४-श्री अमृतेश्वरि-कामदुधाम्बा, ५-श्री अन्नपूर्णा कामदुधाम्बा।

५-पंच रत्नविद्या :— १-श्री विद्या-रत्नाम्बा, २-श्री सिद्धलक्ष्मी-रत्नाम्बा, ३-श्री मातंगेश्वरी रत्नाम्बा, ४-श्री भुवनेश्वरी रत्नाम्बा, ५-श्री वाराही रत्नाम्बा।

उपरोक्त "पंच-पंचिका" विश्व की श्रेष्ठ साधनाएं हैं और इन साधनाओं की प्राप्ति के लिए ही गुरुदेव से प्रार्थना की जाती है इसमें प्रत्येक साधना का उच्चारण कर "प्राप्तिं प्रार्थयेत्" बोलना चाहिए, उदाहरण के लिए "पंच लक्ष्म्य" में पहली साधना "श्री विद्या लक्ष्म्यम्बा प्राप्तिं प्रार्थयेत्" उच्चारण करना चाहिए, इसी प्रकार से अन्य स्थान पर भी उच्चारण करते हुए हर बार 'गुरु प्रसाद फल' अर्पित करना आवश्यक है।

श्री मन्मालिनी

अन्त में तीन बार श्री मन्मालिनी का उच्चारण करना चाहिए, जिससे कि गुरुदेव की शक्ति, तेज और सम्पूर्ण साधनाएं पूर्णता के साथ प्राप्त हो सकें।

ॐ अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लं एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं हंसः सोऽहं गुरुदेवायै नमः।

अन्त में हाथ जोड़कर गुरुदेव की प्रार्थना स्तुति करें—

लोक-वीरं महान्पूज्यं, सर्व-रक्षा-करं विभुम्।
शिष्य-हृदयानन्दं, शास्तारं प्रणमाम्यहम्॥ १॥
द्वि-पूज्यं विश्व-वन्द्यं विष्णु-शम्भोः प्रियं सुतम्।
क्षिप्र-प्रसाद-निरतं, शास्तारं प्रणमाम्यहम्॥ २॥
मत्त-मातंग-गमनं कारुण्यामृत-पूरितम्।
सर्व-विघ्न-हरं देवं, शास्तारं प्रणमाम्यहम्॥ ३॥
अस्मत्-कुलेश्वरं देवं, अस्मच्छत्रु-विनाशनम्।
अस्माभिष्ट-प्रदातारं शास्तारं प्रणमाम्यहम्॥ ४॥
यस्य धन्वन्तरिर्माता, पिता रुद्रो भिषक्-तमः।
तं शास्तामहं वन्दे, महा-वैद्यं दया-निधिम्॥ ५॥

सम्पूर्ण पूजन के पश्चात् गुरु आरती सम्पन्न करें और समर्पण करें, कि "हे गुरुदेव! ये सब पूजन आपको ही समर्पित है अपनी कृपा बनाये रखें।"

आप, श्रेष्ठ साधक को महीने में कम से कम एक बार यह पूजन विधान अवश्य सम्पन्न करना चाहिए। ●

नमो विश्व रूपाय

सर्व सिद्धि प्रदाय

श्री गुरुदेव निखिलेश्वरानन्द

गुरु शिष्य का सम्बन्ध सबसे पवित्रतम दिव्य सम्बन्ध है, जहां शिष्य मन, वचन, कर्म से आराध्य गुरुदेव की आराधना कर अपने जीवन के विकार, दोषों का नाश कर सिद्धि तत्व प्राप्त करता है, प्रस्तुत आलेख पूज्य गुरुदेव के संन्यासी स्वरूप की ऐसी विशिष्ट साधना का प्रयोग है, जिसे उनके हजारों शिष्य सम्पन्न कर अपने जीवन में पूर्ण बन गये, पूज्य श्री के शिष्यों में गृहस्थ ही नहीं अपितु हजारों-हजारों साधु संन्यासी भी हैं, जो यह प्रयोग नित्य प्रति सम्पन्न कर जीवन की पीड़ाओं से मुक्त हो गये हैं, दीक्षा प्राप्त शिष्यों के लिए यह आवश्यक ही नहीं जीवन का अंग है।

परम पूज्य गुरुदेव का शिष्य होने के नाते मैं आज गुरुदेव के स्वरूपों का अध्ययन करने का दुःसाहस कर रहा हूं इस हेतु सर्वप्रथम तो मैं पूज्य श्री के चरणों का ध्यान करते हुए उनसे क्षमा प्राप्ति की प्रार्थना करते हुए अपने हृदय के विचार खोल कर सबके सामने रख रहा हूं।

दिव्य पुरुष जब इस धरा पर आते हैं, तो उनका आगमन शान्त वातावरण के साथ होता है और यह आगमन तभी होता है, जब संसार को उनकी आवश्यकता होती है, हजारों लाखों वर्षों से इतिहास में ऐसे महापुरुष साधारण रूप से जन्म लेकर साधारण वातावरण में पल कर भी अपनी दिव्य लीलाएं दिखाते हुए, एक कल्याण-कारी समाज संरचना करते हुए, नवीन प्रथ का निर्माण करते हैं, पूज्य श्री ने अपने जीवन में अपनी सारी लीलाओं का अपने शिष्यों को बार-बार अनुभूति करा कर, अपने साथ लेकर मार्गदर्शन किया, उन्होंने अपने शिष्यों को प्रत्यक्ष प्रमाण सहित जीवन का स्वरूप और जीवन जीने

की कला को प्रस्तुत करने हेतु जीवन के सभी रंग में दिव्य रास रचा, शिक्षा, गृहस्थ, संन्यास जीवन, साधना, तपस्या सभी रंग तो निराले ही हैं, किस प्रकार जीवन में रहते हुए, गृहस्थ में रहते हुए, जीवन की ऊंचाइयां प्राप्त की जा सकती हैं, किस प्रकार व्यक्ति गृहस्थ होते हुए भी संन्यासी हो सकता है यह सब उन्होंने प्रत्यक्ष रूप से प्रकट किया।

मैं उनका संन्यासी शिष्य अपने सभी संन्यासी भाइयों के साथ पूज्य गुरुदेव के गृहस्थ शिष्यों के सम्मुख स्वामी निखिलेश्वरानन्द साधना प्रस्तुत कर रहा हूं जिसकी रचना महातेजस्वी योगीराज महारूपा जी **ने की और हम सब शिष्य इस साधना को कर अपने जीवन में सिद्धि तत्व प्राप्त कर सके।**

विनियोग

ॐ अस्य श्री प्राणात्मन निखिलेश्वरानन्द मन्त्रस्य भगवान श्री महारूपा ऋषि गायत्री छन्द निखिलेश्वरानन्द योगीश्वर्यै, क्लीं बीजं, श्रीं शक्ति ऐं कीलकं प्रणवो ॐ व्यापक मम समस्त क्लेश परिहारार्थ चतुर्वर्ग फल प्राप्तये सर्व सिद्धि सौभाग्य वृद्धयर्थे मन्त्र जपे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यास

श्री महारूपा ऋषये नमः-शिरसि।
गायत्री छन्दसे नमः-मुखे।
निखिलेश्वरानन्द ऋषिभ्यो नमः-हृदि।
क्लीं बीजाय नमः-गुह्ये।
श्रीं शक्तये नमः-नाभौ।
ऐं कीलकाय नमः-पादयोः।
ॐ व्यापकाय नमः-सर्वांगे।
मम समस्त क्लेश परिहारार्थ चतुर्वर्ग फल प्राप्तये सर्व सिद्धि सौभाग्य वृद्धयर्थ मन्त्र जपे विनियोगाय नमः-पुष्पांजली

करन्यास

ॐ ऐं श्रीं क्लीं	अंगुष्ठाभ्यां नमः
प्राणात्मन	तर्जनीभ्यां स्वाहा
'निं'	मध्यमाभ्यां वषट्
सर्व सिद्धि प्रदाय	अनामिकाभ्यां हुं
निखिलेश्वरानंदाय	कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्
नमः	कर-तल-कर पृष्ठाभ्यां फट्

अंगन्यास

ॐ ऐं श्रीं क्लीं	हृदयाय नमः
प्राणात्मन	शिरसे स्वाहा
'निं'	शिखायै वषट्
सर्व सिद्धि प्रदाय	कवचाय हुं
निखिलेश्वरानंदाय	नेत्र-त्रयाय वौषट
नमः	अस्त्राय फट्

मानस पूजन

१-ॐ 'लं' पृथिव्यात्मक गन्धं प्राणात्मन निखिलेश्वरानंद श्री पादुकाभ्यां नमः-अनुकल्पयामि।

१ ॐ 'हं' आकाशात्मकं पुष्पं प्राणात्मन निखिलेश्वरानंद श्री पादुकाभ्यां नमः-अनुकल्पयामि।

३-ॐ 'यं' वायव्वात्मकं धूपं प्राणात्मन निखिलेश्वरानंद श्री पादुकाभ्यां नमः-अनुकल्पयामि।

४-ॐ 'रं' वन्ह्यात्मकं दीपं श्री प्राणात्मन निखिलेश्वरानंद श्री पादुकाभ्यां नमः-अनुकल्पयामि।

५-ॐ 'वं' अमृतात्मकं नैवेद्यं श्री प्राणात्मन निखिलेश्वरानंद श्री पादुकाभ्यां नमः-अनुकल्पयामि ।

६-ॐ 'शं' शक्त्यात्मकं ताम्बूलं श्री प्राणात्मन निखिलेश्वरानंद श्री पादुकाभ्यां नमः-अनुकल्पयामि ।

मन्त्र

।। ॐ ऐं श्रीं क्लीं प्राणात्मन 'निं' सर्व सिद्धि प्रदाय निखिलेश्वरानंदाय नमः ।।

(सवा लाख मन्त्र जप से सिद्धि)

निखिलेश्वरानंद पंच रत्न स्तवन

ॐ नमस्ते सते सर्व-लोकाश्रयाय, नमस्ते चिते विश्व-रूपात्मकाय ।
नमो द्वैत तत्वाय मुक्ति-प्रदाय, नमो ब्रह्मणे व्यापिने निर्गुणाय ।।१।।
त्वमेकं शरण्यं त्वमेकं वरेण्यम्, त्वमेकं जगत-कारण विश्व-रूपम् ।
त्वमेकं जगत् कर्तृ-पातृ-प्रहर्तृ त्वमेकं परं निश्चलं निर्विकल्पम् ।।२।।
भयानां भयं भीषणं भीषणानाम् गतिः प्राणिनां पावनं पावनानाम् ।
महोच्चै पदानां नियन्तृ त्वमेकम् परेषां परं रक्षक रक्षकानाम् ।।३।।
परेशं प्रभो सर्व-रूपाविनाशिन् अनिर्देश्य सर्वेन्द्रियागम्य सत्य ।
अचिन्त्याक्षर व्यापकाव्यक्त-तत्व, जगद् भासकाधीश पाय दपायात् ।।४।।
तदेकं स्मरामस्तदेकं जपामः तदेकं जगत् साक्षि-रूपं नमामः ।
तदेकं निधानं निरालम्बमीशम् भवाम्बोधि-पोत शरण्यं व्रजामः ।।५।।
पंच रत्नमिदं स्तोत्रं ब्रह्मण परमात्मनः ।
यः पठेत प्रयतो भूत्वा ब्रह्म सायुज्य माप्नुयात् ।।६।।

अर्थात् हे गुरुदेव ! आप मेरे जीवन के आराध्य, नित्य समस्त लोकों के आश्रय हो, आपको नमस्कार करता हूं, आप ज्ञान स्वरूप विश्व आत्मा स्वरूप अद्वैत तत्व प्रदायक मुक्ति प्रदायक सर्व व्यापी निर्गुण ब्रह्म हो, सगुण रूप में आप हम समस्त शिष्यों के सामने उपस्थित हो, आपको नमस्कार है ।

आप ही हम समस्त शिष्यों के आश्रय हो समस्त सिद्धियों के एकमात्र कारण हो, हमारे सृष्टिकर्ता, निर्माणकर्त्ता, पालन कर्त्ता, संहार कर्त्ता हो, आप निश्छल और विविध कल्पनाओं से रहित पूर्णता प्राप्त षोडशकला युक्त पुरुष हो, आपको हम शिष्यों का नमस्कार !

आप भय का नाश करने वाले विपत्ति को हरने वाले हम सब शिष्यों की एक मात्र गति हो, पवित्रता के साक्षात् स्वरूप, शक्तियों के आधार स्वरूप हो, रक्षकों के पूर्ण रक्षक हो, हम सब शिष्यों का भक्ति भाव से प्रणाम !

हे तपस्वी ! हे प्रभु ! समस्त शिष्यों के हृदय में विराजमान समस्त शिष्यों का कल्याण करने वाले अगोचर होते हुए भी हम सब लोगों के सामने साक्षात् देह रूप में उपस्थित हो, हे सत्य स्वरूप ! हे अचिन्त्य ! हे अक्षर या व्यापक ! हे ब्रह्म स्वरूप मेरे आराध्य ! हे मेरे प्राणों में निवास करने वाले आप हमें अपनी भक्ति अपना ज्ञान अपना स्नेह प्रदान करें ।

हम न तो किसी इष्ट को जानते हैं, न मन्त्र, न तन्त्र, न साधना रहस्य, हम तो केवल गुरु मन्त्र का जप करने में समर्थ हैं, आपकी पल-पल की लीलाएं देखते हुए आपको सामान्य मानव की तरह हंसते, उदास होते, विचरण करते कहते-सुनते अनुभव कर भ्रमित हो जाते हैं, हम अपने इस जन्म में संसार के दुःखों में गृहस्थ की परेशानियों में डूबते-उतराते आपका भली प्रकार से चिन्तन नहीं कर पाते, हमें और कुछ नहीं आता हम तो केवल आतुर कंठ से '**गुरुदेव**' शब्द का उच्चारण कर सकते हैं, यह शब्द ही हमारा सब कुछ है हम तो केवल आपका आश्रय ग्रहण करते हैं।

जो इस पंच रत्न स्तवन का नित्य पाठ करता है वह निश्चय ही समस्त विकारों से मुक्त हो कर ब्रह्म स्वरूप गुरु चरणों में लीन होने का सामर्थ्य प्राप्त कर लेता है।

उपरोक्त पाठ सम्पन्न कर **"दिव्यौध गुरु यन्त्र"** का पूजन कर अपने हाथ में जल लेकर अपना नाम, पिता का नाम, गोत्र, गुरु का नाम लेते हुए संकल्प करें कि मेरी देह में सूक्ष्मता का भाव आए और पूज्य गुरुदेव मेरे देह में अपनी समस्त शक्तियों, समस्त ज्ञान, सिद्धियों सहित समाहित हों, तत्पश्चात् निम्न स्तोत्र कवच का पाठ करें—

गुरुदेव शिरः पातु हृदयं निखिलेश्वरः।
कंठं पातु महायोगी वदनं सर्व-दृग-विभुः।
करो मे पातु पूर्णात्मा पादो रक्षतु स्वामिनः।
सर्वांग सर्वदा पातु परं ब्रह्म सनातनम्।
यः पठेद् गुरु कवचं ऋषि-न्यास पुरः सरम्।
स ब्रह्म ज्ञानमासाद्य साक्षात् ब्रह्ममयो भवेत्।
भूर्जे विलिख्य गुटिका स्वर्णस्थां धारयेद् यदि।
कण्ठे दक्षिणे बाहौ सर्व सिद्धिश्वरो भवेत्।
इत्येतत् परमः गुरु कवचं यः प्रकाशितम्।
दद्यात् प्रियाय शिष्याय भक्ताय प्रिय धीमते।

अर्थात् परम पूज्य गुरुदेव हमारे सिर की रक्षा करें, परम पूज्य स्वामी निखिलेश्वरानंद जी हमारे हृदय की रक्षा करें, महायोगी गुरुदेव हमारे कण्ठ की रक्षा करें, और समस्त ब्रह्माण्ड को देखने वाले ब्रह्म स्वरूप गुरुदेव हमारे शरीर की रक्षा करें।

पूर्ण स्वरूप गुरुदेव मेरे दोनों हाथों की रक्षा करें, मेरे स्वामी गुरुवर मेरे दोनों पैरों की रक्षा करें, सनातन ब्रह्म स्वरूप परम पूज्य गुरुदेव स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी मेरे समस्त शरीर की रक्षा करें।

इस गुरु कवच का ऋषि महायोगी छन्द अनुष्टुप् देवता स्वयं गुरुदेव तथा चतुर्वर्ग फल प्राप्ति के लिए यह प्रयोग है, जो शिष्य इस प्रयोग का पाठ करता है, वह समस्त सिद्धियों को प्राप्त कर गुरुदेव का प्रिय बनता हुआ पूर्ण रूप से ब्रह्ममय हो जाता है।

जो शिष्य इस कवच को भोज पत्र पर लिख कर **गुरु तत्व गुटिका** में रख कर अपने कण्ठ या दाहिनी भुजा पर धारण करता है, वह निश्चय ही समस्त प्रकार की सिद्धियों का स्वामी होता है।

मैंने अत्यन्त गोपनीय इस गुरु कवच को स्पष्ट किया है इसे गुरु भक्त बुद्धिमान और प्रिय शिष्य को ही प्रदान करना चाहिए।

इस कवच का पाठ कर साधक **"गुरु सिद्धि माला"** से गुरु मन्त्र का एक माला अथवा तीन माला जप सम्पन्न करें—

गुरु मन्त्र

॥ ॐ परम तत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः ॥

महारूपा जी द्वारा रचित गुरु पूजा का यह अध्याय प्रत्येक शिष्य को अपने हृदय में उतार कर इस प्रकार नित्य प्रति सम्पन्न करना चाहिये कि हर धड़कन के साथ 'जय गुरुदेव' ध्वनि ही निकले।

अब सौंप दिया सब भार तुम्हारे चरणों में

गुरु चरण कमलेभ्यो नमः

गुरु चरणों का ध्यान एवं नित्य प्रति गुरु पूजन ही तो शिष्य का जीवन है, यह पूजा समर्पण साधना है, जिसमें साधक अपने समस्त राग-द्वेष, पीड़ा अपने आंसुओं के माध्यम से कण्ठ से गुरु पुकार करते हुए समर्पित कर देता है, सौंप देता है, अपना समस्त जीवन ।

गुरु महिमा का वर्णन केवल वेद पुराण उपनिषद इत्यादि शास्त्रों में ही नहीं है अपितु जन-जन में एक निश्चित आधार के रूप में विख्यात है, महान सद्गुरुओं ने अपने स्वयं की प्रशंसा में कुछ नहीं लिखा, उन्होंने परम ब्रह्म को आधार माना अपने विचारों को कभी थोपने का प्रयास नहीं किया, उनका चिन्तन केवल सामाजिक चेतना को जागृत कर पूरे समाज के स्तर को सुधारना था, गुरु चाहे वशिष्ठ हों, याज्ञवल्क्य हों, गोरखनाथ हों अथवा रामतीर्थ या विवेकानन्द केवल एक ही प्रयास रहा कि सामाजिक अन्धकार को दूर कर शिष्यों के जीवन में ज्ञान की लौ जलाई जाए, उनके लिए शिष्य की कोई श्रेणी नहीं थी, जो भी शिष्य भावना से युक्त होता था, अपने भीतर आत्म साक्षात्कार करना चाहता था, अपनी कुण्डलिनी जागरण करना चाहता था, अपने जीवन के वास्तविक स्वरूप को देखना चाहता था, उस प्रत्येक शिष्य को अपने हृदय से लगाया, अपने पुत्र से अधिक माना और उसके जीवन को आलोकित किया ।

यदि सद्गुरुदेव सूर्य हैं तो शिष्य उनकी किरणें हैं, और जब ये किरणें, अपना प्रकाश फैलाती हैं, तो सब कुछ आलोकित हो जाता है, अन्धकार का नाश हो जाता है।

असत्य से सत्य की ओर

महान गुरुओं ने कभी भी अपनी शक्ति का दुरुपयोग नहीं किया और न ही अपनी शक्ति के चमत्कारिक प्रदर्शन किये, क्योंकि उन्हें ज्ञान था, कि यदि पूरे समाज का उत्थान करना है, समाज के सामने नया आदर्श देना है, शिष्य के जीवन से अज्ञान रूपी परत हटानी है तो उसे एक साधारण रूप में अपने पास बिठा कर अपने हाथ से ज्ञान का अमृत प्याला पिलाना पड़ेगा, उसे अपने साथ रख कर कुछ सिखाना पड़ेगा, अन्यथा प्रभाव केवल ऊपर-ऊपर ही रहेगा, और शिष्य वास्तविक अनुभूति प्राप्त नहीं कर सकेगा, इसके लिए उन्होंने सबसे पहले स्वयं शरीर की देह की क्षमता को मांपा, तपस्या के बल पर अपने आपको उस स्तर तक पहुंचाया कि वे जो भी बातें कहें वह एक ठोस आधार लिये हो, स्वयं की देखी-परखी, अनुभव की हुई हों, स्वयं के भीतर संशय की कोई गुंजाइश नहीं रहे, क्योंकि यदि स्वयं के भीतर ही संशय है तो जो वाणी उच्चारित होगी उसमें आधार नहीं होगा।

गुरु और वरदान

क्या आपने आज तक कहीं पढ़ा है कि गुरु ने कोई वरदान कोई भौतिक इच्छा मांगी हो, उन्होंने केवल ब्रह्मत्व प्राप्ति हेतु साधनाएं सम्पन्न कीं, और ब्रह्मत्व प्राप्ति से उनके भीतर वह तेज उत्पन्न हो गया कि यदि किसी ने उनसे कोई वर मांगा तो सद्गुरुदेव के श्रीमुख से उच्चरित हुआ "तथास्तु" अर्थात् जैसी तुम्हारी इच्छा है, वैसा ही कार्य पूर्ण हो, अब महत्वपूर्ण प्रश्न यह आता है, कि क्या वरदान मांगना शिष्य के लिए उचित है? यही शिष्य की भक्ति और उसकी क्षमता का प्रश्न उठ खड़ा होता है, सद्गुरुदेव सब कुछ देखते हुए भी शिष्य के मुंह से कहलाना चाहते हैं और जब शिष्य अपने भीतर के प्रश्नों के उत्तर अपनी इच्छाओं के उत्तर अपने आप गुरु भक्ति से समाधान कर लेता है, वही शिष्य अपने जीवन में सद्गुरुदेव के निकट पहुंच जाता है, इसीलिए शास्त्रों में गुरुदेव के लिए निवेदन है—

॥ ॐ ब्रह्म वै दिवो हः सः हिवो वैं गुरु वै सदा हः ॥

हे गुरुदेव ! आप ब्रह्म स्वरूप हैं, सूर्य स्वरूप हैं, विष्णु स्वरूप हैं, आप मुझे आत्मवत् बना लें, यही प्रार्थना है।

आत्मवत् बनते की शिष्य की भावना असत्य से सत्य की खोज के लिए बढ़ते हुए, सार तत्व को प्राप्त करना है, जिसे गुरु ही सरलता से सूर्य के सदृश तेज पुंज बन कर शिष्य को जाग्रत कर देते हैं।

तमसो मा ज्योतिर्गमय

जैसे ही शिष्य के अन्तर में गुरु उपरोक्त क्रिया सम्पन्न करता है, उसके जीवन में अज्ञान अन्धकार के बादल स्वतः छटते जाते हैं, एक नयी सिहरन नयी उमंग, नयी गति, नयी तरंग, जीवन में नाचने लगती है, उसे अहसास होने लगता है कि यही वह सब कुछ नहीं है, जिसे पाने के लिए

उसने अनमोल मानव रत्न यह देह रूपी मन्दिर प्राप्त किया है, इसमें स्थापित आत्मा और ब्रह्म का संयुक्त स्वरूप ही उसका अभीष्ट है, गुरु का "गु" अक्षर और "रु" अक्षर निश्चय ही अज्ञान से सत्य एवं अन्धकार से प्रकाश की ओर ले जाने की एक मधुर तांत्रोक्त क्रिया है, इसीलिए कहा गया है–

गुकारस्त्वदन्धकारश्च रुकारस्तेज उच्यते । ज्ञानाग्रासक ब्रह्म गुरुरेव न संशयः ।।

गुरु के पावन चरणों में मानव अपने संचित पुण्यों को ले कर जब दीक्षा का सौभाग्य प्राप्त करता है, तो गुरु का मिलन दिव्य वात्सल्य और ममतायुक्त पिता और माता का शिशु में आत्म मिलन जैसा मनोहारी दृश्य पैदा कर कर देता है, जब गुरु शिष्य को सीने से लगाकर उसे प्यार से दुलारते हुए '**बेटा**' का उच्चारण करते हैं, गुरु अपने हाथ के स्पर्श से आंखों के तेज से शिष्य को नया जीवन, नया चिन्तन, नया दर्शन, प्रदान करते हैं तो यही तो "**तमसो मा ज्योतिर्गमय**" की पादाम्वुज कल्प कथ्य है ।

मृत्योर्माअमृतंगमयः

मृत्यु मानव मात्र के लिए भयप्रद है, वालक हो अथवा वृद्ध, स्त्री हो अथवा पुरुष, पशु-पक्षी हो अथवा अन्य जीवनधारी, सभी इससे बचना चाहते हैं, लेकिन विधि की विडम्बना के आगे कहीं किसी की पार नहीं पड़ती, सभी मृत्यु के आगे नतमस्तक हो युगों-युगों से काल कवलित होते चले आये हैं, आगे भी यह क्रम चलता जा रहा है यदि किसी ने मृत्यु को जीवन शृंगार बनाया है, हंसते हुए गले लगाया है, तो ऐसा वह व्यक्तित्व गुरु का ही है, जिसके आगे मृत्यु अपने आपको ठगा सा महसूस करती है, बौनी हो जाती है उनके व्यक्तित्व के सामने, क्योंकि गुरु ने तो सदा अमरता का पाठ पढ़ा है, और मृत्यु पर विजय प्राप्त करने की संजीवनी कला में वह पूर्ण पारंगत हैं ।

गुरु अपने शिष्य को आत्मवत् बनाना चाहता है, उसके मृत्यु की ओर बढ़ते कदमों को मोड़ कर उसे अमरता का पाठ पढ़ाता है, वह चाहता है कि अपने सामने ही वह अपने शिष्य को इस योग्य बना दे, कि वह उसके बाद भी स्वयं पूर्ण तेजस्विता प्राप्त करते हुए, समाज को नयी दिशा दे सके, उसके लक्ष्य और कार्य को आगे गति दे सके, शिष्य गुरु के चरणों में बैठ कर अपने जीवन को संवारता जाता है, गुरु रूपी कामधेनु का ज्ञान रूपी मधुर दुग्धपान करते हुए कल्पवृक्ष सी शीतल छांव रूपी गुरु का वरदानमय आशीर्वाद प्राप्त करते हुए वह कभी थकता और अघाता नहीं, नित्य नूतन होता हुआ अपने जीवन का पूरा कायाकल्प कर लेता है और इसे ही गुरु पादाम्बुज कल्प का सही रूप कहा जाता है इसीलिए शिष्य अपने गुरु को हर पल, हर क्षण प्रसन्न रखने का प्रयास करता है, क्योंकि उसे मालूम है—

शिवे क्रुद्धे गुरुस्त्राता गुरु क्रुद्धे शिवो न हिं । तस्मात्सर्वप्रयत्नेन श्री गुरूं शरणं व्रजेत् ।।

गुरु प्राणाधार

गुरु और शिष्य की धड़कनें जुदा-जुदा नहीं होतीं, शिष्य के रोम-रोम में गुरु की छवि समाहित रहती है, आंखों में गुरु का तेजस्वी स्वरूप नाचता है, हर पल, हर क्षण, उठते-बैठते, सोते-जागते शिष्य गुरु में ही खोया रहता है, उसका संसार गुरुमय हो जाता है, उसकी हर क्रिया गुरु को अर्पित होती है, अपना स्वयं का अस्तित्व

गलती हुई बर्फ सा गलता जाता है, और एक क्षण जीवन में वह आता है कि समस्त क्रियाओं के प्रति उसका कर्त्ता-भाव सदा-सदा के लिए तिरोहित हो जाता है, वह गुरु की परछाईं सा बन गुरुतुल्य हो जाता है, और यही क्षण होता है कि गुरु अपने शिष्य को दोनों बांहों में समेट सीने से लगा कर सब कुछ समाहित कर देता है अपने शिष्य में, गुरु पाद सेवा और गुरु युगल चरण शिष्य की धरोहर बन कर साकार हो उठती है, ज्ञान के विराट पुंज में बोध के उन्मुक्त वातायनी क्षणों में, जहां व्यापकता ही व्यापकता है, सत् चित् आनन्द का मधुर मिलन शिष्य का व्यापक जीवन बन जाता है और इसीलिए शिष्य गुरु को प्राणाधार मानते हुए अनायास स्वीकार कर लेता है—

गुरोः पादोदकं युक्त्वा सो सोऽक्षयोवटः। तीर्थराजः प्रयागश्च गुरुमूर्त्ये नमो नमः ॥

कल्प प्रयोग विधि

किसी भी गुरुवार को प्रातः चार बजे ब्रह्म मुहूर्त में स्नान आदि नित्य क्रियाओं से निवृत्त होकर शुद्ध श्वेत धोती पहन कर सफेद आसन पर उत्तर की ओर मुंह कर बैठें, फिर मन की वाणी एवं हृदय को पवित्र करने के लिए 'ॐ' प्रणव बीज का तीन बार नाभि से उठाते हुए लम्बा उच्चारण करें, और फिर तीन प्राणायाम सम्पन्न करते हुए अपने सामने मन्त्र सिद्ध प्राण प्रतिष्ठा युक्त **'चांदी की चरण पादुका'** किसी पात्र में स्वस्तिक बना कर उस पर स्थापित करें, साथ ही **गुरु यन्त्र और चित्र** भी सामने रखें और फिर कुंकुम, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य एवं अगरबत्ती आदि से पूजन आरती सम्पन्न करें इसके बाद शुद्ध घी की ज्योति अपने सामने लगाए शुद्ध दूध गंगाजल चरणों में अर्पित करते हुए गुरु चिन्तन और गुरु चरणों का ध्यान करें, ।

तत्पश्चात् पद्मासन या सिद्धासन में बैठ कर अपने शरीर के रोम-रोम में गुरु को समाहित करते हुए उनकी उपस्थिति का अहसास करें, मूलाधार से लेकर सहस्रार तक सभी चक्रों में गुरु के ही बिम्ब का ध्यान करें, ज्ञान मुद्रा या तत्व मुद्रा में पांच मिनट शान्त चित्त बैठ कर अपने आपको गुरुमय बना लें और फिर नीचे लिखे मन्त्र का **'स्फटिक माला'** से नित्य ५१ माला जप १० दिन तक करें, तो यह गुरु पादाम्बुज कल्प सिद्ध होता है, जिसका फल साधक को जीवन भर स्वतः मिलता रहता है।

गुरु मन्त्र

॥ ॐ परम तत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः ॥

वास्तव में गुरु साधना से शिष्य को वह शक्ति प्राप्त होती है कि जब भी चाहे शान्त भाव से बैठ कर अपने गुरु का ध्यान करता है तो गुरुदेव उसके भीतर समाहित हो कर आधार प्रदान करते हैं, उसके संकट में मार्ग बतलाते हैं, गुरु भक्ति की महिमा तो अपार है ।
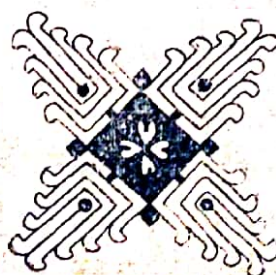
दिन का प्रारम्भ गुरु स्मरण से हो

हमारा प्रत्येक दिन हमारे लिए एक नया जीवन है, रात्रि के बाद जब व्यक्ति जागता है तो वह एक नया जीवन लेकर उठता है, शास्त्रों में लिखा है कि जीवन का प्रारम्भ और जीवन का अन्त गुरु स्मरण से होना चाहिए, इसी प्रकार हमारे प्रत्येक दिन का प्रारम्भ और अवशान गुरु स्मरण से ही उचित है, **ब्रह्मवैवर्त पुराण** में बताया गया है कि किसी भी प्रकार की पूजा, साधना, उपासना तब तक व्यर्थ है जब तक कि जीवन में गुरु न हो। **महाभारत** के शान्ति पर्व में बताया गया है कि किसी भी प्रकार की पूजा आदि के समय अपने दाहिने हाथ की ओर गुरु का आसन बिछा देना चाहिए और यह भावना मन में लानी चाहिए कि मेरे पास गुरु बैठे हैं, और उनके निर्देशन में ही मैं पूजा, साधना, अनुष्टान, व्रत, उपवास या अन्य कोई भी कार्य सम्पन्न कर रहा हूं।

विष्णु पुराण में बताया गया है कि जब तक गुरु का आसन बिछा कर गुरु-स्तवन न किया जाय तब तक किसी भी पूजा या साधना में सफलता प्राप्त नहीं होती।

साधक चाहे पुरुष हो या स्त्री, प्रत्येक के जीवन में गुरु का महत्व और स्थान आवश्यक है, उसे चाहिए कि वह प्रातः उठते समय गुरु-स्तवन करे इसके बाद ही दैनिक कार्य में प्रवृत्त हो।

वशिष्ठ ने कहा है कि स्नानादि से निवृत्त हो कर साधक या गृहस्थ आसन पर बैठ जांय, अपने दाहिनी ओर गुरु का आसन बिछा लें, उस पर गुरु की कल्पना करें या उनका चित्र या मूर्ति हो तो अपने सामने रखें और निम्न गुरु पाठ करें, इसके बाद ही अन्य किसी प्रकार की पूजा, व्रत, साधना या अनुष्ठान आदि सम्पन्न करें—

ॐ नमो गुरुभ्यो गुरु पादुकाभ्यो नमः परेभ्यः परपादुकाभ्यः।
आचार्य सिद्धेश्वर पादुकाभ्यो नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्यः ॥१॥

ऐंकारह्रींकार रहस्ययुक्त श्रींकारगूढ़ार्थ महाविभूत्या।
ॐकारमर्मप्रतिपादिनीभ्यां नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्याम् ॥२॥

होत्राग्नि होत्राग्निहविष्यहोतृ होमादिसर्वाकृतिभासमानम्।
यद् ब्रह्म तद्बोधवितारिणीभ्यां नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्याम् ॥३॥

कामादिसर्पव्रजगारुणाभ्यां विवेक वैराग्य निधिप्रदाभ्याम्।
बोधप्रदाभ्यां द्रुतमोक्षदाभ्यां नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्याम् ॥४॥

अनन्त संसारसमुद्रतार नौकायिताभ्यां स्थिरभक्तिदाभ्याम्।
जाड्याब्धिसंशोषणवाडवाभ्यां नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्याम् ॥५॥

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥ ★

✍ अपर अपार सिंह

बहुत थोड़े से समय में सब कुछ प्राप्त हो सकता है।

समस्त देवता मंत्रों के अधीन होते हैं और यदि गुरु मंत्र का जप हो, तो किसी अन्य मंत्र को जपने की आवश्यकता ही शेष नहीं रह जाती, हमारे यहां जितने भी शास्त्र, वेद, पुराण लिखे गये, वे सव "गुरु" इन दो अक्षरों पर ही आधारित हैं; जो देवताओं से भी उच्च एवं पूजनीय हैं, सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का तेज जिनके भीतर समाहित है।

गुरु मंत्र अपने आपमें छोटा होते हुए भी अत्यधिक क्षमताओं से ओत-प्रोत होता है, क्योंकि इसके एक-एक शब्द का अर्थ अपने आपमें मूल्यवान है, पूरे शरीर को सूर्य के समान बना देने की शक्ति उसमें समाहित है, जो अचूक है, तीक्ष्ण एवं प्रभावकारी है, पूरे शरीर को चैतन्यता प्रदान करने में सक्षम है . . . यह हर किसी को यूं ही नहीं प्राप्त हो जाता है, इसके पीछे एक गहन चिन्तन, धारणा छिपी होती है, पूर्ण चेतना युक्त इस गुरु मंत्र में शिष्य ही की पूर्णता निहित है। जो कार्य किसी अन्य देवी-देवता के लम्बे-चौड़े श्लोक व स्तुति गान से नहीं हो पाता, उसे गुरु मंत्र तत्काल कर दिखाता है। मानव की आवश्यकताओं के अनुसार ही मंत्रों की रचना प्राचीन काल में की गई, परन्तु क्लिष्ट होने के कारण, सस्वर व उचित उच्चारण न कर पाने के कारण इनका विपरीत प्रभाव ही अधिक देखने को मिला और मानव की समस्याएं, परेशानियां, बाधाएं रह गईं वहीं की वहीं।

आशा को निराशा में बदलते हुए देखा, तभी हमारे ऋषि इस विषय पर गम्भीरता से विचार कर इस निष्कर्ष पर पहुंचे, कि गुरु मंत्र ही सबसे श्रेष्ठ और तीव्र प्रभावकारी है, जिसका सस्वर उच्चारण भी आसानी से किया जा सकता है, जो अन्य मंत्रों की अपेक्षा महत्त्वपूर्ण भी है।

यदि पूर्ण श्रद्धा और विश्वास के साथ जप किया जाय, तो समस्याओं से पार पाने के लिए अन्य कुछ करने की आवश्यकता ही नहीं रह जाती, क्योंकि गुरु को ब्रह्मा, विष्णु और महेश से भी अधिक तेजस्वी कहा गया है, वे ही ज्ञान व सिद्धियां प्रदान करने में समर्थ हैं, भोग और मोक्ष दोनों को प्रदान करने वाले हैं, समस्त देवी-देवता तो उन्हीं के इंगित पर नृत्य करते रहते हैं। प्रत्येक गृहस्थ साधक के लिए गुरु मंत्र आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी है; जो उनके कष्टों को हमेशा के लिए दूर करने वाला अचूक मंत्र है। जो जिस कामना से, जिस भाव से इसे जपता है, उसे उसके अनुसार ही फल सिद्धि प्राप्त होती है। यदि इसे पूर्ण श्रद्धा और विश्वास से जपा जाय, तो सफलता निश्चय ही प्राप्त होती है। इसके माध्यम से विभिन्न पुरुषार्थों की सिद्धि होती ही है, जो इस प्रकार है –

स्वयं के अभ्युदय के लिए

जीवन में यदि आप चाहते हैं, कि सफलता आपके कदम चूमे और यदि उन्नति के उच्च शिखर पर पहुंचना है, तो गुरु मंत्र से उत्तम और कोई प्रदर्शक नहीं, जो तुम्हें उच्चता प्रदान कर सके, श्रेष्ठता प्रदान कर सके, तुम्हारे जीवन का अभ्युदय कर सके। साधक **"अभ्युदय माला"** से निम्न मंत्र का सवा लाख जप करें –

मंत्र

ॐ वं परम तत्त्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः

न्यौछावर – 180/-

विपत्तियों के नाश के लिए

मानव जीवन है, तो दुःख भी होंगे, कठिनाइयां भी होंगी और विपत्तियां भी आयेंगी ही, पर यदि अन्य कहीं भटकने की अपेक्षा गुरु मंत्र जप पूर्ण निष्ठा के साथ कर लिया जाय, तो समस्त विपत्तियों का नाश स्वतः ही होने लगता है। निम्न मंत्र का "आपदहन्ता माला" से सवा लाख जप करें –

मंत्र

ॐ खं परम तत्त्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः

न्यौछावर – 195/-

रोग नाश के लिए

गुरु मंत्र से कैसा भी रोग हो, जड़-मूल से समाप्त किया जा सकता है; इससे श्रेष्ठ अन्य कोई उपचार नहीं है, जो कि मनुष्य को रोग मुक्त कर पूर्ण स्वास्थ्य प्रदान कर सके। निम्न मंत्र का "रुद्र माला" से सवा लाख जप करें –

मंत्र

ॐ रं परम तत्त्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः

न्यौछावर – 150/–

सौभाग्य प्राप्ति के लिए

यदि बार-बार प्रयत्न करने पर भी भाग्य साथ न दे, तो उस व्यक्ति से दुर्भाग्यशाली दूसरा कोई नहीं होता, किन्तु यदि व्यक्ति "सौभाग्य माला" से निम्न मंत्र का सवा लाख जप कर ले, तो उससे ज्यादा सौभाग्यशाली भी अन्य कोई नहीं होता, क्योंकि यह दुर्भाग्य की लकीरों को मिटाकर सौभाग्य के अक्षर अंकित कर देने वाला अत्यन्त तेजस्वी मंत्र है।

मंत्र

ॐ क्लीं परम तत्त्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः

न्यौछावर– 175/-

सुलक्षणा पत्नी की प्राप्ति के लिए

इस मंत्र के माध्यम से अपनी इच्छानुकूल पत्नी को प्राप्त किया जा सकता है, जो सुलक्षणा हो, सौन्दर्यवती हो, साक्षात् लक्ष्मी हो, प्रिया हो; वरना सम्पूर्ण जीवन ही तनाव ग्रस्त हो जाता है, निम्न मंत्र का "स्निग्धा माला" से सवा लाख जप करें–

मंत्र

ॐ सुं हुं परम तत्त्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः

न्यौछावर – 175/–

दारिद्र्य, दुःखादि के नाश के लिए

इस मंत्र के माध्यम से जीवन में व्याप्त दुःख, दैन्यता, दरिद्रता जैसे शत्रुओं का नाश कर जीवन में सुख, समृद्धि, सम्पन्नता प्राप्त करते हुए जीवन को उल्लासित व प्रफुल्लित बनाया जा सकता है। "ऐश्वर्यवर्द्धिनी माला" से निम्न मंत्र का सवा लाख जप करें –

मंत्र

ॐ क्रीं परम तत्त्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः

न्यौछावर –210/–

समस्त साधनाओं में सफलता प्राप्ति के लिए

इससे बड़ा और सर्वश्रेष्ठ उपाय अन्य नहीं है, जो कि बड़ी-बड़ी उच्चकोटि की साधनाओं में सफलता प्रदान करने में सक्षम हो, क्योंकि गुरु ही मात्र ऐसे व्यक्ति हैं, जो शुभ और लाभ के प्रदाता हैं और समस्त न्यूनताओं को समाप्त करने वाले हैं। कैसी भी साधना हो या जीवन का कोई भी क्षेत्र हो, सफलता निश्चित प्राप्त होती ही है। निम्न मंत्र का "साफल्य माला" से सवा लाख जप करें –

मंत्र

ॐ ह्रीं परम तत्त्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः

न्यौछावर – 350/–

इन बीजाक्षरों से संप्रक्त गुरु मंत्र के सवा लाख जप से निश्चित ही उपरोक्त लाभ साधक को प्राप्त होते हैं। यह एक संन्यासी के द्वारा बताये गये तेजस्वी प्रयोग हैं; जो अचूक हैं, पूर्ण लक्ष्य भेदन में समर्थ हैं। मंत्र जप पूरा होने पर माला नदी, तालाब या मंदिर में विसर्जित कर दें।

21.4.2000
या किसी भी २१ तारीख को

गुरु प्राण धारण साधना

प्रातः स्नानादि नित्य क्रिया से निवृत्त होकर पूजा स्थान में शुद्ध धोती पहन कर आसन पर बैठें। सामने चौकी पर श्वेत या पीत वस्त्र बिछा कर सुन्दर गुरु चित्र स्थापित करें। अपने समीप ही साधना सामग्री – **'गुरु स्थापन यंत्र'**, **'चेतना माला'**, **'रुद्राक्ष'** एवं **'गुरु गुटिका'** तथा पूजन की अन्य सामग्री रखें। गुरु चित्र के सामने किसी थाली में कुंकुम से स्वस्तिक बनाकर उस पर **'गुरु स्थापन यंत्र'** को स्थापित करें। यंत्र के दाहिनी ओर गुटिका तथा बाईं ओर रुद्राक्ष को रख कर धूप, दीप प्रज्वलित करें। पहले पवित्रीकरण और आचमन करके दोनों हाथ जोड़ कर गुरु प्रार्थना करें।

प्रार्थना

ॐ सर्व मंगल मांगल्यं चैतन्यं वरदं शुभम्।
नारायणमं नमस्कृत्य गुरु पूजां समाचरेत्॥

अपने सामने किसी पात्र में थोड़ा जल लेकर उसमें कुंकुम, अक्षत, और पुष्प की पंखुड़ियां मिला लें, उसके बाद उसमें सभी तीर्थों का आवाहन करें –

ॐ गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु॥

भूतापसारण

बाएं हाथ में अक्षत लेकर दाएं हाथ से ढक दें तथा निम्न मंत्र बोलते हुए सभी दिशाओं में अक्षत छिड़कें –

अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भुवि संस्थिताः।
ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया॥

इसके बाद **'सर्व विघ्नान् उत्सारय – हूं फट् स्वाहा'** का उच्चारण करते हुए दाएं पैर की एड़ी से ३ बार भूमि पर आघात करें। तत्पश्चात समस्त गुरुओं को दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम करें और आगे दिये प्रणाम मंत्रों का उच्चारण करें –

गुरु जन्म दिवस पर सम्पन्न की जाने वाली इस साधना के महत्व के बारे में पत्रिका के मार्च-२००० अंक में विवेचन किया गया था, उसी साधना की पूजन विधि प्रस्तुत है।

ॐ ऐं गुरुभ्यो नमः।
ॐ ऐं परम गुरुभ्यो नमः।
ॐ ऐं परात्पर गुरुभ्यो नमः।
ॐ ऐं पारमेष्ठि गुरुभ्यो नमः।

गुरु पंक्ति को प्रणाम करने के बाद अपने हृदय में गुरु तत्व को स्थापित करें –

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः श्री निखिलेश्वरानन्द देवतायाः प्राणा इह प्राणाः।

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः श्री निखिलेश्वरानन्द देवतायाः जीव इह स्थितः।

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः श्री निखिलेश्वरानन्द देवतायाः सर्वेन्द्रियाणि।

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः श्री निखिलेश्वरानन्द देवतायाः वाङ्मनश्च चक्षु श्रोत्र जिह्वा प्राण प्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

अब अपने को गुरुत्व चेतना से सम्पन्न अनुभव करें।

मातृका न्यास (विनियोग)

दाहिने हाथ में जल लेकर विनियोग करें –

ॐ अस्य मातृका मंत्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, गायत्री छन्दः, मातृका सरस्वती देवता, ह्रीं बीजानि, स्वरा शक्तयः अव्यक्तं कीलकं सर्वाभीष्ट सिद्धये मातृका न्यासे विनियोगः।

इसके बाद निम्न मंत्र का उच्चारण करते हुए विभिन्न अंगों को दाएं हाथ से स्पर्श करें –

ॐ ब्रह्मणे ऋषये नमः	– सिर
ॐ गायत्रीच्छन्दसे नमः	– हृदय
ॐ मातृका सरस्वत्यै देवतायै नमः	– मुख
ॐ हल्भ्यो बीजेभ्यो नमः	– मूलाधार
ॐ स्वरेभ्यः शक्तिभ्यो नमः	– दोनों पैर
ॐ अव्यक्त कीलकाय नमः	– सभी अंग

गुरुदेव का दोनों हाथ जोड़कर आवाहन करें –

आवाहयामि रक्षार्थं पूजार्थं च मम कुतो:।
इहागत्य गृहाण त्वं पूजां यागं च रक्षये ॥

श्री गुरुदेवाय नम: आवाहनं समर्पयामि।

आसन

यंत्र व चित्र को पुष्प का आसन दें –

ॐ सर्वभूतान्तरस्थाय सर्वभूतान्तरात्मने।
कल्पयाम्युपवेशार्थमासनं ते नमो नम:।

इदं पुष्पासनं समर्पयामि नम:।

पाद्यं

चित्र के समक्ष दो आचमनी जल चढ़ावें –

यत् भक्तिलेश सम्पर्कात् परमानन्द सम्प्लव:।
तस्मै ते परमेशान पाद्यं शुद्धाय कल्पये ॥

इदं पाद्यं समर्पयामि नम:।

अर्घ्य

दुर्वाक्षत समायुक्तं बिल्व पत्रं तथा परम्।
शोभनं शंख पात्रस्थं गृहाणार्घ्यं महेश्वर: ॥

अर्घ्यं समर्पयामि नम:।

आचमन

मन्दाकिन्यास्तु यदवारि सर्व पापहरं शुभम्।
गृहाणाचमनीयं त्वं मया भक्त्या निवेदितम् ॥

आचमनीयं समर्पयामि नम:।

स्नान

इदं सुशीतलं वारि स्वच्छं शुद्धं मनोहरम्।
स्नानार्थं ते मया भक्त्या कल्पितं प्रतिगृह्यताम् ॥

स्नानं समर्पयामि नम:।

यंत्र के साथ रुद्राक्ष एवं गुरु गुटिका का भी उपरोक्त प्रकार से पूजन करते रहें, उन्हें भी स्नान, अक्षत, धूप आदि से पूजन करते रहें।

वस्त्र

मायाचित्र पटाच्छन्नं निजगुह्योप तेजसे।
मम श्रद्धा भक्ति वासं युग्मं गृह्यताम् ॥

वस्त्रोपवस्त्रं समर्पयामि नम:।

तिलक

महावाक्योत्थ विज्ञानं गन्धाढ्यं सुमनोहरम्।
विलेपनं सुरश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ॥

चन्दनं समर्पयामि नम:।

सकुंकुमं अक्षतान् समर्पयामि नम:।

चन्दन एवं अक्षत चढ़ाएं।

पुष्पमाला

तुरीयं वन सम्पन्नं नानागुण मनोहरम्।
आनन्द सौरभं पुष्पं गृह्यतामिदमुत्तमम् ॥

पुष्पमालां समर्पयामि नम:।

धूप, दीप

नैवेद्यं

शर्कराघृत संयुक्तं मधुरं स्वादुचोत्तमं।
उपहार समायुक्तं नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम् ॥

ऋतु फलानि समर्पयामि नम:।

शुद्ध जल से पांच बार आचमन करावें।

इसके बाद मुख शुद्धि के लिए पान समर्पित करें –

ताम्बूलं समर्पयामि नम:।

इसके बाद **चैतन्य माला** से निम्न मंत्र की एक माला जप सम्पन्न करें –

॥ ॐ ह्रीं ऐं परात्पराय परमहंसाय निखिलेश्वराय धीमहि ऐं ह्रीं ॐ नम: ॥

Om Hreem Ayeim Paraatparaay Paramhansaay Nikhileshwaraay Dheemahi Ayeim Hreem Om Namah

फिर गुरु आरती सम्पन्न करके पुष्पांजलि समर्पित करें। यह ३ माह की साधना है, इसमें नित्य उपरोक्त मंत्र की एक माला जप करना अनिवार्य है, नित्य पूजन सम्पन्न करने की आवश्यकता नहीं है। उपरोक्त पूजन को हर माह की २१ तारीख को दुहरा लें तथा प्रसाद घर में सभी को वितरित करें। ३ माह बाद सभी सामग्री को जल में विसर्जित कर दें।

इस साधना द्वारा शनै: शनै: साधक के अन्दर गुरुदेव की समस्त शक्तियां स्वत: ही उतरने लगती हैं, आवश्यकता है तो धैर्य और संयम की।

यदि साधक किसी कारणवश इस साधना को २१ अप्रैल को प्रारम्भ नहीं कर पाएं, तो किसी भी माह की २१ तारीख को प्रारम्भ कर सकते हैं। ऐसा करने में कोई न्यूनता नहीं क्योंकि साधकों के लिए प्रत्येक २१ तारीख सद्गुरुदेव का जन्म दिवस ही है। यदि साधना सामग्री नहीं मंगा सके हैं, तो किन्हीं दो व्यक्तियों को पत्रिका की सदस्यता धारण करवा कर इस सामग्री को नि:शुल्क प्राप्त कर सकते हैं। इसके लिए आप अपने किन्हीं दो परिचितों के डाक पते को पोस्टकार्ड क्रं ६ (पृष्ठ:५४, अप्रैल अंक) पर लिख कर जोधपुर कार्यालय भेज कर उन्हें पत्रिका का सदस्य बना दें। आपको ४३८/- की वी.पी. द्वारा साधना सामग्री भेज दी जाएगी तथा आपकी ओर से आपके परिचितों को वर्ष पर्यन्त पत्रिका भेजी जाती रहेगी।

(अतिरिक्त सन्दर्भ: मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान, मार्च-२०००, पृष्ठ:२८)

स्तोत्र शक्ति

प्रभु खिंचे हुए, बंधे हुए चले आयेंगे

गुरु आह्वान स्तोत्र

स्तोत्र स्वयं में मंत्र स्वरूप होते हैं-इस तथ्य से प्रत्येक साधक परिचित है किंतु मंत्रों की अपेक्षा एक अन्य विशिष्टता होती है किसी भी स्तोत्र में कि जहां मंत्र वर्णों का विशिष्ट संयोजन होता है वहीं किसी भी स्तोत्र में एक लयबद्धता भी होती है तथा इसी लयबद्धता के कारण यह सहज स्वाभाविक हो जाता है कि साधक के हृदय के भाव पूर्णता से प्रस्फुटित हो सकें। हृदय के भाव प्रस्फुटित हो सकें, यही तो समस्त साधनाओं का भी मर्म है। मात्र स्तोत्र पाठ से ही जीवन में कई प्रकार की अनुकूलताएं प्राप्त हो जाती हैं।

यह माह है पूज्यपाद गुरुदेव के अवतरण का माह और किसी भी शिष्य के लिए यह सम्पूर्ण माह उसी प्रकार से धन्यता और पवित्रता का माह है ज्यों किसी शिव-भक्त के लिए श्रावण का माह होता है।

यह सम्पूर्ण माह गुरु साधनाओं को सम्पन्न करने का माह है और जहां गुरुदेव की साधना की जाए वहां यह आवश्यक है कि उनका सम्पूर्ण गरिमा व पवित्रता के साथ आह्वान भी किया जाए। गुरु शब्द के साथ देव शब्द जोड़ने का अर्थ ही यही है कि गुरुदेव, व्यक्ति की संज्ञा से आगे बढ़ देवत्व की विशिष्टतम स्थिति होते हैं।

शिष्यगण, पूज्यपाद गुरुदेव का आह्वान यथोचित विधि से कर सकें इस हेतु इस मास में जिस गुरु आह्वान-स्तोत्र की प्रस्तुति की जा रही है वह एक दुर्लभ स्तोत्र है। इस स्वतन के पाठ अथवा श्रवण मात्र से गुरुदेव सूक्ष्म रूप में उपस्थित होते ही हैं, यह एक अनुभव जन्य प्रमाण है अनेकानेक साधकों व शिष्यों का अतः इस स्तवन का पाठ अत्यंत भावविह्वलता, शुद्धता एवं विगलित कंठ से करें।
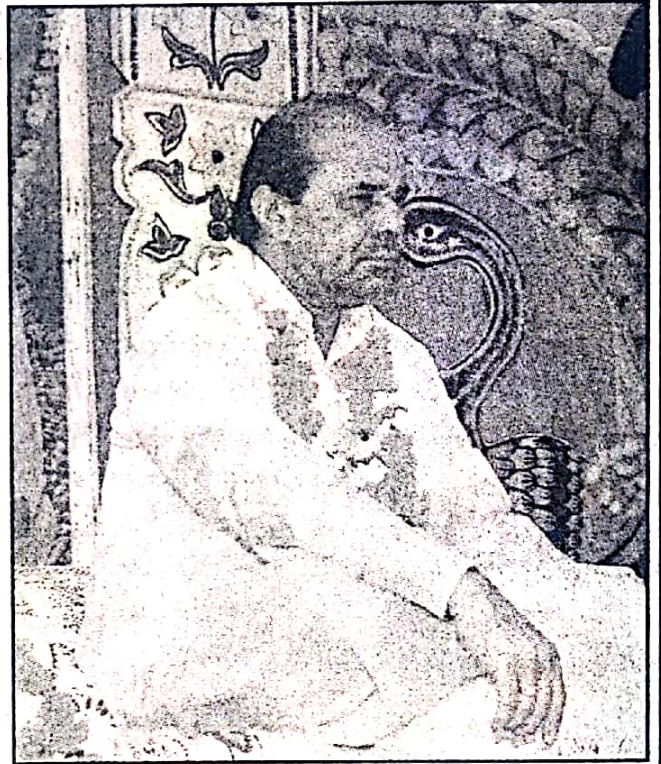
प्रयोग-विधि : जब कभी भी इस स्तवन का पाठ करने का भाव मन मे उमड़े तब शुद्ध वस्त्र धारण कर उत्तरमुख हो आसन पर बैठें, वातावरण को धूप अगरबत्ती के द्वारा सुगंधमय कर लें तथा अपने समक्ष किसी बाजोट पर वस्त्र बिछाकर पुष्प की पंखुड़ियों को गुरुदेव हेतु आसन के रूप में स्थापित करें।

सामूहिक अथवा व्यक्तिगत गुरु-पूजन/गुरु साधना के अवसर पर इस स्तोत्र का पाठ गुरुदेव का यथोचित विधि से पूजन करने के उपरान्त करें, मध्य में अथवा प्रारम्भ में नहीं– ऐसा सिद्धाश्रम गुरु-पूजन क्रम में उल्लिखित है।

मात्र परीक्षण के रूप में, किसी कौतूहल या किसी भी प्रकार से अगरिमामय रूप में इस स्तवन का पाठ करना सर्वथा वर्जित है। आगे इस स्तवन को जिस प्रकार से पूज्यपाद गुरुदेव ने स्पष्ट किया है, उसी रूप में प्रकाशित किया जा रहा है–

पूर्ण सतान्यै परिपूर्ण रूपं
गुरुवैं सतान्यं दीर्घो वदान्यम्।
आविर्वतां पूर्ण मदैव पुण्यं
गुरुवैं शरण्यं गुरुवैं शरण्यम् ॥१॥

त्वमेव माता च. . . .(श्लोक क्रं१६ पूरा पढ़ें)

न जानामि योगं न जानामि ध्यानं
न मंत्रं न तंत्रं योगं क्रियान्वै।
न जानामि पूर्णं न देहं न पूर्वं
गुरुवैं शरण्यं गुरुवैं शरण्यम् ॥२॥

त्वमेव माता च. . . .

अनाथो दरिद्रो जरा रोग युक्तो
महाक्षीण दीनं सदा जाड्य वक्त्रः।
विपत्ति प्रविष्टं सदाऽहं भजामि
गुरुवैं शरण्यं गुरुवैं शरण्यम् ॥३॥

त्वमेव माता च. . . .

त्वं मातृ रूपं पितृ स्वरूपं
आत्म स्वरूपं प्राण स्वरूपं।
चैतन्य रूपं देवं दिवन्त्रं
गुरुवैं शरण्यं गुरुवैं शरण्यम् ॥४॥

त्वमेव माता च. . . .

त्वं नाथ पूर्णं त्वं देव पूर्णं
आत्म च पूर्णं ज्ञानं च पूर्णम्।
अहं त्वां प्रपद्ये सदाऽहं भजामि
गुरुवैं शरण्यं गुरुवैं शरण्यम् ॥५॥

त्वमेव माता च. . . .

मम अश्रु अर्घ्यं पुष्पं प्रसूनं
देहं च पुष्पं शरण्यं त्वमेवम्।
जीवोऽ वदां पूर्ण मदैव रूपं
गुरुवैं शरण्यं गुरुवैं शरण्यम् ॥६॥

त्वमेव माता च. . . .

आवाहयामि आवाहयामि
शरण्यं शरण्यं सदाहं शरण्यं।
त्वं नाथ मेवं प्रपद्ये प्रसन्नं
गुरुवैं शरण्यं गुरुवैं शरण्यम् ॥७॥

त्वमेव माता च. . . .

न तातो न माता न बन्धुर्न भ्राता
न पुत्रो न पुत्री न भृत्यो न भर्ता।
न जाया नं वित्तं न वृत्तिर्ममेवं
गुरुवैं शरण्यं गुरुवैं शरण्यम् ॥८॥

त्वमेव माता च. . . .

आबध्य रूपं अश्रु प्रवाहं
धीयां प्रपद्ये ह्रदयं वदान्ये।
देहं त्वमेवं शरण्यं त्वमेवं
गुरुवैं शरण्यं गुरुवैं शरण्यम् ॥९॥

त्वमेव माता च. . . .

गुरुवैं शरण्यं गुरुवैं शरण्यं
गुरुवैं शरण्यं गुरुवैं शरण्यम्।
एको हि नाथं एको हि शब्दं
गुरुवैं शरण्यं गुरुवैं शरण्यम् ॥१०॥

त्वमेव माता च. . . .

कान्तां न पूर्वं वदान्यै वदान्यं
कोऽहं सदान्यै सदाहं वदामि।
न पूर्व पतिवैं पतिवैं सदाऽहं
गुरुवैं शरण्यं गुरुवैं शरण्यम् ॥११॥

त्वमेव माता च. . . .

न प्राणो वदावैं न देहं नवाऽहै
न नेत्रं न पूर्व सदाऽहं वदान्यै।
तुच्छं वदां पूर्व मदैव तुल्यं
गुरुवैं शरण्यं गुरुवैं शरण्यम् ॥१२॥

त्वमेव माता च. . . .

पूर्वो न पूर्व न ज्ञानं न तुल्यं
न नारि नरं वै पतिवैं न पत्न्यम्।
को कत् कदा कुत्र कदैव तुल्यं
गुरुवैं शरण्यं गुरुवैं शरण्यम् ॥१३॥

त्वमेव माता च. . . .

गुरुवैं गतान्यं गुरुवैं शतान्यं
गुरुवैं वदान्यं गुरुवैं कथान्यम्।
गुरुमेव रूपं सदाऽहं भजामि
गुरुवैं शरण्यं गुरुवैं शरण्यम् ॥१४॥

त्वमेव माता च. . . .

आत्रं वतां अश्रु वदैव रूपं
ज्ञानं वदान्यै परिपूर्ण नित्यम्।
गुरुवैं व्रजाहं गुरुवैं भजाहं
गुरुवैं शरण्यं गुरुवैं शरण्यम् ॥१५॥

त्वमेव माता च. . . .

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बंधुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देव देव ॥१६॥

त्वमेव माता च. . . .

सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त, पूर्ण स्वरूप वाले निश्चित रूप से जो सत् चित् स्वरूप हैं, अखण्ड स्वरूप हैं, संसार में आविर्भूत होने वाले सबसे अधिक पुण्यवान् हैं, ऐसे दिव्य गुणों से परिपूर्ण गुरु चरणों की मैं शरण ग्रहण करता हूं ...॥१॥

योग क्या है, मैं नहीं जानता हूं; न मैं ध्यान को जानता हूं, न मंत्र-तंत्र आदि क्रियाओं को ही जान पा रहा हूं। पूर्ण शक्ति स्वरूप ब्रह्म शक्ति को भी नहीं जानता हूं। इस शरीर के पूर्व और पश्चात की गति को भी नहीं जानता हूं। केवल मैं शरणागत हूं, यही मेरी एकमात्र चेतना है ...॥२॥

मैं अनाथ और दरिद्र हूं, जरा और रोग से ग्रस्त हूं, मैं बिल्कुल आश्रयहीन हूं तथा स्पष्ट रूप से बोल भी नहीं पाता हूं, निरन्तर विपत्तिग्रस्त हूं। आपकी आराधना करता हूं, हे गुरुदेव! आपकी शरणागत हूं, आप मेरी रक्षा करें ...॥३॥

हे गुरुदेव! आप ही मेरे माता, पिता, आत्मा और प्राण हैं। आप चैतन्य स्वरूप हैं, देवाधिदेव हैं। मैं सदैव आपकी शरणागत हूं, आप मेरी रक्षा करें ...॥४॥

हे गुरुदेव! आप पूर्ण स्वरूप हैं, देव स्वरूप हैं, आत्म स्वरूप एवं ज्ञानमय हैं, चैतन्य स्वरूप एवं दिव्य चेतनामय हैं। मैं सदैव आपकी शरणागत हूं, आप मेरी रक्षा करें ...॥५॥

हे प्रभु! मेरे अश्रुओं का अर्घ्य आपको अर्पित है, यह देह ही पुष्प है, आपके शरणागत हूं। बारम्बार देह धारण करके पूर्णता प्राप्त कर सकूं, क्योंकि मैं आपके चरण शरण हूं ...॥६॥

हे प्रभु! आप मेरे हृदय में स्थापित हों, आपका आवाहन करता हूं। हे नाथ! मेरी स्थिति से आप परिचित हैं, जीवन में मैं प्रसन्नता चाहता हूं, मुझे अपनी शरण में ले लें ...॥७॥

माता, पिता, भाई तथा कोई भी सम्बन्धी इस संसार में मेरे नहीं हैं। पुत्र, पुत्री, पति तथा सेवक आदि भी नहीं हैं। पत्नी, धन या जीवनयापन के किसी भी साधन को मैं अपना नहीं मानता हूं। हे गुरुदेव! मैं आपके शरणागत हूं ...॥८॥

अजस्र प्रवाहमान अश्रु ही मेरे हृदय में स्थापित हैं, और ये ही आप के विमल स्वरूप का प्रमाण है। यह मेरा शरीर भी आप का ही है, जिसे सेवा के लिये चाहें तो आप उपयोग करें। पुनः पुनः निवेदन है कि मैं आपकी शरण में ही रहूं ...॥९॥

मैं आपकी ही शरणागत हूं, आपके ही अधीन हूं, आप ही मेरे रक्षक हैं, पालक हैं, आपही मेरे एकमात्र आराध्य हैं, स्तुत्य हैं। आप सदा मुझे अपनी शरण में रखे रहें, ऐसी प्रार्थना करता हूं ...॥१०॥

कोई भी वस्तु इस संसार में ऐसी नहीं है, जिसकी मुझे आपके समक्ष कामना हो। मैं कौन हूं, यह भी नहीं जानता हूं। इससे पूर्व मेरा कोई स्वामी था भी या नहीं, मैं नहीं जानता हूं। मैं तो बस जानता हूं कि आप ही मेरे सर्वस्व हैं, और आपकी शरणागति की ही कामना करता हूं ...॥११॥

यह प्राण, देह तथा नेत्र आदि इन्द्रियां जिन्हें मैं अपना समझता था – ये अनित्य और तुच्छ हैं, नाशवान हैं, संसार में केवल आप ही सारभूत तत्व हैं। प्रभु! मैं आपकी ही शरण में हूं ...॥१२॥

सृष्टि की उत्पत्ति से पूर्व का मुझे कुछ भी ज्ञान नहीं है। ये नर, नारी, पत्नी और पति का भाव कैसे हुआ – यह भी नहीं जानता, मैं कौन हूं, कब से इस संसार चक्र में हूं, कब तक ऐसा चलता रहेगा, यह भी नहीं जानता, केवल आपकी शरणागत हूं, यही जानता हूं ...॥१३॥

गुरु ही गति है, गुरु ही शक्ति है, गुरु ही स्तुति योग्य है, गुरु ही कथा योग्य है, गुरु ही दर्शन योग्य है, उनका ही मैं सदा स्मरण करता हूं, उन्हीं की शरणागत चाहता हूं ...॥१४॥

मैं आर्त हूं, आंखों में अश्रु हैं, मैं प्रार्थना कर रहा हूं कि आपके स्वरूप का मुझे ज्ञान हो, मैं पूर्णता प्राप्त करूं, गुरु का ही भजन करूं, और एकमात्र उनकी शरण में रहूं ...॥१५॥

गुरुदेव! आप ही माता, पिता, बन्धु, सखा, विद्या और धन आपसे अलग न मेरा कोई भाव है और न मैं चाहता हूं, इसी रूप में आप मुझे पूर्णता प्रदान करें। हे प्रभु! आप ही मेरे सर्वस्व हैं, सर्वस्व हैं ...॥१६॥

सिद्धाश्रम प्रणीत यह स्तोत्र, मात्र एक स्तवन भर नहीं है। यह स्वयं में पूज्यपाद सद्गुरुदेव को सूक्ष्म रूप में उपस्थित कर लेने का प्राणों से किया गया एक आह्वान है, अतः इसका पठन-पाठन पूर्ण मर्यादा से किया जाना आवश्यक है। यूं भी कभी मस्ती में, बिस्तर में लेटे-लेटे, रास्ते चलते, बाथरूम में नहाते समय इसका उच्चारण किसी गीत की भांति करना अभद्र है और ऐसा करना विपरीत फलदायक भी हो सकता है। शिष्यगण इस बात का विशेष रूप से ध्यान रखें।

मनुष्य अपने आपमें अधूरा और अपवित्र है। वह अपने आपको पूर्ण कहता है, मगर पूर्ण है नहीं, क्योंकि उसके जीवन में कोई न कोई अधूरापन रहता ही है, धन है तो प्रतिष्ठा नहीं, प्रतिष्ठा है तो पुत्र नहीं है, पुत्र है तो सौभाग्य नहीं है, सौभाग्य है तो रोग-रहित जीवन नहीं है। यदि आधुनिक विज्ञान के अनुसार मानव जीवन शरीर की चीड़-फाड़ की जाय, तो उसमें से केवल मांस निकलेगा, हड्डियां निकलेंगी, रूधिर निकलेगा, मल-मूत्र निकलेगा।

इसके अलावा शरीर के अन्दर कुछ ऐसी चीज नहीं है, जिससे कि इस शरीर पर गर्व किया जा सके। हम भोजन करते हैं, वह भी मल बन जाता है। हम चाहे हलवा खायें, चाहे घी खायें, चाहे रोटी खायें, उसको परिवर्तित मल के रूप में ही होना है।

सामान्य मानव शरीर में ऐसी कोई क्रिया नहीं होती, जो कि भगवान के या गुरू के चरणों में चढ़ायें - हे भगवान! या हे गुरूदेव! यह शरीर आपके चरणों में समर्पित है, तो शरीर तो खुद अपवित्र है, जिसमें मल और मूत्र के अलावा है ही कुछ नहीं। ऐसे गन्दे शरीर को भगवान के चरणों में कैसे चढ़ा सकते हैं? ऐसे शरीर को अपने गुरू के चरणों में कैसे चढ़ा सकते हैं?

देवताओं का सारभूत अगर किसी में है, तो वह गुरू है, क्योंकि गुरू प्राणमय कोश में होता है, आत्ममय कोश में होता है। वह केवल मानव शरीर धारी नहीं होता। उसमें ज्ञान होता है, चेतना होती है, उसकी कुण्डलिनी जाग्रत होती है, उसका सहस्रार जाग्रत होता है। न उसे अन्न की जरूरत पड़ सकती है, न पानी की जरूरत हो सकती है, न तो उसे मूत्र त्याग की जरूरत होगी, न मल विसंर्जन की जरूरत होगी। जब भूख-प्यास ही नहीं लगेगी, तो मल-मूत्र विसर्जित करने की जरूरत ही नहीं होगी।

इसलिए उच्चकोटि के साधक न भोजन करते हैं, न पानी पीते हैं, न मल-मूत्र विसर्जन करते हैं, जमीन से छ:फुट की ऊंचाई पर आसन लगाते हैं और साधना करते हैं। जो इस

प्रकार की क्रिया करते हैं, वे सही अर्थों में मनुष्य हैं। जो इस प्रकार की क्रिया नहीं कर सकते, जो मलयुक्त हैं, जो गन्दगी युक्त हैं, वो मात्र पशु हैं।

इस जगह से उस जगह तक छलांग लगाने की कौन सी क्रिया है? कैसे वहां पहुंचा जा सकता है? जीवन में मनुष्य कैसे बना जा सकता है?

जीवन में वह स्थिति कब आयेगी, जब जमीन से छः फुट ऊंचाई पर बैठ करके साधना कर सकेंगे? जमीन का ऐसा कोई सा भाग नहीं है, जहां पर रूधिर न बहा हो। धरती का प्रत्येक इंच और प्रत्येक कण अपने आपमें रूधिर से सना हुआ है, अपवित्र है, उस भूमि में साधना कैसे हो सकती है?

बिना पवित्रता के उच्चकोटि की साधनाएं सम्पन्न नहीं हो सकतीं, हजारों वर्षो की आयु प्राप्त नहीं की जा सकती, सिद्धाश्रम नहीं पहुंचा जा सकता और जब नहीं पहुंचा जा सकता तो ऐसा जीवन अपने आप में व्यर्थ है, किसी काम का नहीं है, वह सिर्फ श्मशान की यात्रा ही कर सकता है।

ऐसा जीवन तो आपकी पिछली अनेक पीढ़ियां व्यतीत कर चुकी हैं और अब उनका नामोनिशान भी बचा नहीं है। आपको अपने दादा-परदादा के सब नाम तो मालूम हैं, लेकिन आपको यह नहीं मालूम, कि आपके परदादा के पिता कौन थे, उन्होंने क्या कार्य किया और किस प्रकार उन्होंने अपना जीवन बिताया, यदि आप भी ऐसा ही करना चाहते हैं, तो फिर आपको जीवन में गुरू की कोई जरूरत ही नहीं है।

यह शरीर कितना अपवित्र है, कि चार दिन भी बाहर के वातावरण को झेल नहीं सकता। यदि आप चार दिन स्नान नहीं करें, तो आपके शरीर से बदबू आने लगेगी, कोई आपके पास बैठना भी नहीं चाहेगा, बात भी करना नहीं चाहेगा। जबकि भगवान श्रीकृष्ण के शरीर से अष्टगंध प्रवाहित हुई, राम के शरीर से अष्टगंध प्रवाहित हुई, बुद्ध के शरीर से अष्टगंध प्रवाहित होती थी, उच्चकोटि के योगियों से अष्टगंध प्रवाहित होती है।

तो आपमें क्या कमी है, जो अष्टगंध प्रवाहित नहीं होती? आप जब निकलें, तो दुनिया वाले मुड़ कर देखें, कि पास में से कौन निकला? यह सुगन्ध कहां से आई? इसके व्यक्तित्व में क्या है?

और यदि ऐसा व्यक्तित्व नहीं बना, तो जीवन का मूल अर्थ, मूल लक्ष्य नहीं प्राप्त हो सकता, जिसके लिए देवता भी इस पृथ्वी लोक पर जन्म लेने के लिए तरसते हैं। राम के रूप में जन्म लेते हैं, कृष्ण के रूप में जन्म लेते हैं, बुद्ध के रूप में जन्म लेते हैं, महावीर के रूप में जन्म लेते हैं, ईसा मसीह के रूप मे जन्म लेते हैं, पैगम्बर मोहम्मद के रूप में जन्म लेते हैं।

इस शरीर को पवित्र बनाने के लिए, यह आवश्यक है कि हम देह तत्त्व से प्राण तत्त्व में चले जायें। जब प्राण तत्त्व में जायेंगे, तो फिर देह तत्त्व का भान रहेगा ही नहीं।

फिर जीवन के सारे क्रियाकलाप तो होंगे, मगर फिर मल-मूत्र की जरूरत नहीं रहेगी, फिर भोजन और प्यास की जरूरत नहीं रहेगी, फिर शून्य सिद्धि आसन लगा सकेंगे, फिर शरीर से सुगन्ध प्रवाहित हो सकेगी और एहसास हो सकेगा, कि आप कुछ हैं।

प्राण तत्त्व में जा कर आपमें चेतना उत्पन्न हो सकेगी, अन्दर एक क्रियमाण पैदा हो सकेगा, सारे वेद, सारे उपनिषद् कंठस्थ हो पायेंगे।

आप कितनी साधना करेंगे?, कितने मंत्र जपेंगे? कब तक जपेंगे?

ज्यादा से ज्यादा साठ साल की उम्र तक, सत्तर तक। लेकिन आपके जीवन का अधिकांश समय तो व्यतीत हो चुका है, जो बचा है, वह भी सामाजिक दायित्वों के बोझ से दबा हुआ है। फिर यह जीवन अद्वितीय कैसे बन सकेगा? और अद्वितीय नहीं बना, तो जीवन का अर्थ भी क्या रहा?

कृष्ण को कृष्ण के रूप में याद नहीं किया, कृष्ण को जगत् गुरू के रूप में याद किया जाता है। उनको गुरू क्यों कहा जाता है? इसलिए, कि उन्होंने उन साधनाओं को, उस चेतना को प्राप्त किया, जिसके माध्यम से उनके शरीर से अष्टगंध

परम पूज्य सद्गुरुदेव डॉ. नारायण दत्त श्रीमाली जी, जो हम सबके सद्गुरुदेव हैं एवं हमारे प्राणप्रिय हैं, उन्होंने अपनी क्रिया द्वारा यह भौतिक देह भले ही छोड़ दी हो, वे सिद्धाश्रम में पूज्य स्वामी परमहंस निखिलेश्वरानन्द स्वरूप में विराजमान हैं और आत्मिक रूप से हम सबके मध्य ही तो स्थित हैं।

मात्र शिष्यों के कल्याण के लिए वे आए और उनकी नजर में प्रत्येक शिष्य समान ही रहा, चाहे वह एक वर्ष से जुड़ा हो या दस वर्ष से या दस दिन से या अभी भी जुड़ने का मानस बना रहा हो, तभी तो करुणा से वशीभूत होकर वे यह साधना दे गए, जिसको सम्पन्न कर आप हर समय गुरु की सान्निध्यता अनुभव कर सकते हैं।

प्रवाहित हुई। उनका प्राण तत्त्व जाग्रत हुआ।

मैं आपको एक अद्वितीय साधना दे रहा हूं हजार साल बाद भी आप इस साधना को अन्यत्र प्राप्त नहीं कर पायेंगे, पुस्तकों से आपको प्राप्त नहीं हो पायेगा, गंगा किनारे बैठ करके भी प्राप्त नहीं हो पायेगा, रोज-रोज गंगा में स्नान करने से भी नहीं प्राप्त हो पायेगा। यदि गंगा में स्नान करने से कोई उच्चता प्राप्त होती, तो मछलियां तो उस जल में ही रहती हैं, वे अपने आप में बहुत उच्च बन जाती।

जीवन का अद्वितीय हो, यह जीवन धर्म है। हमारे जैसा कोई दूसरा हो ही नहीं। ऐसा हो, तब जीवन का अर्थ है। ऐसा जीवन प्राप्त करने के लिए बस एक ही उपाय है, कि हम ऐसे गुरू की शरण में जायें, जो अपने आप में पूर्ण प्राणवान हो, तेजस्विता युक्त हों, वाणी में गम्भीरता हो, आंख में तेज हो, वह जिस को देख ले, वह सम्मोहित हों, अपने आपमें सक्षम हों और पूर्ण रूप से ज्ञाता हो।

लेकिन आपके पास कोई कसौटी नहीं है, कोई माप-दण्ड नहीं है। आप उनके पास बैठ कर उनके ज्ञान से, चेतना से प्रवचन से एहसास कर सकते हैं। यदि आपको जीवन में समझ में आयेगा, तब आपको गर्व होगा, कि आप एक सद्‌गुरू के शिष्य हैं, जिनके पास हजारों-हजारों पाथियों से भी अधिक ज्ञान है। यदि व्यक्ति में जरा समझदारी है, यदि उसमें समझदारी का एक कण भी है, तो पहले तो उसे यह चिन्तन करना चाहिए, कि उसे ऐसा जीवन जीना ही नहीं है, जो मल-मूत्र युक्त है, क्योंकि ऐसे जीवन की कोई सार्थकता ही नहीं है और फिर उसे सद्‌गुरू को प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए, जो उसे तेजस्विता युक्त बना सके, जो उसे प्राण तत्त्व में ले जा सके, जो उसके शरीर को सुगन्ध युक्त बना सके।

यदि ऐसा नहीं किया, तो भी यह शरीर रोग ग्रस्तता और वृद्धावस्था को ग्रहण करता हुआ मृत्यु को प्राप्त हो ही जायेगा। फिर वह क्षण कब आयेगा, जब आप दैदीप्यमान बन सकेंगे? कब आपमें भावना आयेगी, कि मुझ को दैदीप्यमान बनना ही है, अद्वितीय बनना है, सर्वश्रेष्ठ बनना है?

ऐसा तब सम्भव हो सकेगा, जब आपके प्राण, गुरू के प्राण से जुड़ेंगे, जब आपका चिन्तन गुरूमय होगा, जब आपके क्रिया-कलाप गुरूमय होंगे। और इसके लिए एक ही क्रिया है - अपने शरीर में पूर्णता के साथ गुरू को स्थापित कर देना, जीवन में उतार देना।

शरीर में उनका स्थापना होते ही उनकी चेतान के माध्यम
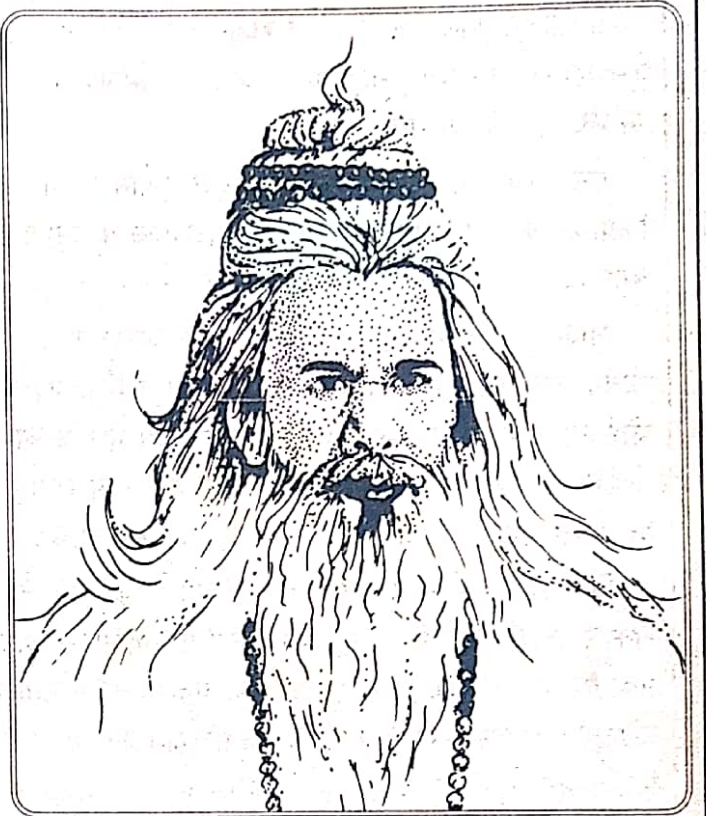
से यह शरीर अपने आपमें सुगन्ध युक्त, अत्यन्त दैदीप्यमान और तेजस्वी बन सकेगा, जीवन में अद्वितीयता और श्रेष्ठता प्राप्त हो सकेगी, जीवन में पवित्रता आ सकेगी, प्राण तत्त्व की यात्रा सम्भव हो सकेगी और उनका ज्ञान आपके अन्दर उतर सकेगा।

सद्‌गुरुदेव कहते हैं -

शिष्य जब समर्पण भाव में आ जाता है और वह गुरु के साथ एकाकार होने के लिए मन मस्तिष्क और हृदय से दृढ़ हो जाता है, तो गुरु शिष्य के साथ आत्म लीन होकर उसे अपना सम्पूर्ण प्यार उड़ेल देते हैं।

एकलव्य गुरु द्रोण के आश्रम से काफी दूर जंगलों में रहता था, उसने वहां गुरु की मूर्ति स्थापित कर अभ्यास जारी रखा। गुरु द्रोण सदैव उस मूर्ति में प्राण स्वरूप में विराजमान रहते थे और एकलव्य को प्रेरणा दिया करते थे, यह रहस्य केवल एकलव्य और गुरु द्रोण ही जानते थे। सशरीर रूप में कभी सामने न आकर भी एकलव्य को मात्र धनुर्विद्या में नहीं अपितु अपना सर्वस्व ज्ञान देकर पूर्ण कर दिया।

प्रस्तुत 'गुरु आत्म स्थापन साधना' पूज्य द्रोणाचार्य द्वारा एकलव्य को दी गई साधना का परिवर्द्धित रूप है, जिससे साधक गुरु कृपा प्राप्ति के लिए तीव्रता से अग्रसर हो सकें और उन्हें गुरुदेव के सानिध्य का एहसास होना प्रारम्भ हो जाए। एकलव्य ने भी साधना के द्वारा ही गुरु द्रोण की सूक्ष्म

उपस्थिति को साकार किया था, आवश्यकता है तो मात्र इस साधना को पूर्ण श्रद्धा एवं विश्वास से सम्पन्न करने की।

यह साधना 21 अप्रैल अथवा शुक्ल पक्ष के किसी भी गुरुवार, अथवा किसी भी मास की 21 तारीख, से प्रारम्भ की जा सकती है। स्नान आदि से निवृत्त होकर उत्तराभिमुख हो पूजा स्थल में एक श्वेत वस्त्र बिछाकर सद्गुरुदेव का चैतन्य चित्र स्थापित करें। चित्र ऐसा हो, जिसे आप स्नान करा सकें, विधिवत पूजन कर सकें, तिलक लगा सकें, ऐसा भव्य चित्र स्थापित रहे। इस चित्र के साथ ही सिद्धाश्रम चेतना युक्त '**गुरु आत्म यंत्र**' भी स्थापित करें। उसके बाद सद्गुरुदेव के ललाट, कान, कण्ठ, हृदय स्थान, नाभि, दोनों भुजाओं पर चन्दन से तिलक करें। यह तिलक बिन्दी स्वरूप हो, तत्पश्चात् गुरु चित पर सुगन्धित माल्यार्पण करें। तदनन्तर निम्न मंत्र का 108 बार उच्चारण करते हुए गुरु चित्र और यंत्र पर अक्षत चढ़ाते हुए गुरुदेव का आवाहन करें।

आवाहयामि आत्म स्वरूपं, आवाहयामि प्राण स्वरूपं।
आवाहयामि मम देह चिन्त्यं, गुरुत्वं शरण्यं गुरुत्वं शरण्यं॥

अब आप अपने सामने एक कटोरी में चन्दन लेकर उसे अपने शरीर के अंगों (ललाट, कान, कण्ठ, हृदय स्थान, नाभि, दोनों भुजाओं) पर लगाएं और निम्न मंत्र का उच्चारण करें। इन मंत्रों के उच्चारण के साथ ही गुरुदेव को अपने हृदय स्थान पर विराजमान होने का भाव रखें -

ॐ कूर्माय नमः, ॐ आधार शक्तये नमः, ॐ पृथिव्यै नमः, ॐ धर्माय नमः, ॐ ज्ञानाय नमः, ॐ सवित्रालाय नमः, ॐ ऐश्वर्याय नमः, ॐ विकारमकेशरेभ्यो नमः, पंचाशर्णाबीजाढ्या कर्णिकायै नमः, ॐ वैराग्याय नमः, ॐ अनेकश्वर्याय नमः, ॐ अनन्ताय नमः, ॐ सर्वतत्वात्मकाय नमः, ॐ आनन्दकन्द कन्दाय नमः, ॐ प्रकृतमयपत्रेभ्यो नमः।

चूंकि आप दीक्षित शिष्य हैं, और नित्य गुरु मंत्र का जप करते हैं, अतः मंत्र जप से पूर्व जिस माला से गुरु मंत्र जप करते हैं, उस माला से गुरु मंत्र की 4 माला जप करें, इसके बाद गुरु आत्म स्थापन मंत्र की '**गुरु सिद्धि माला**' से 21 माला जप करें।

॥ॐ ह्रीं क्लीं गुरुत्व आत्मैक्यं ह्रीं फट्॥

यह 21 दिन की साधना है, और इसे प्रातः काल अथवा रात्रि में ही सम्पन्न करना चाहिए। मंत्र जप के बाद साधक को
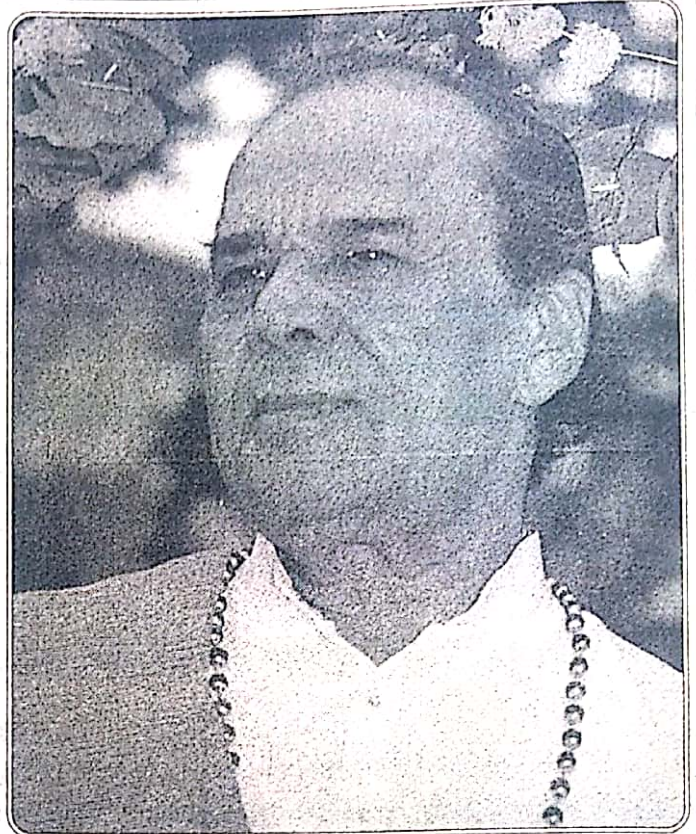
दस मिनट तक शवासन में लेट जाना चाहिए। ऐसा करने से मनोरम प्रकृतिक दृश्य दिखाई दे सकते हैं। इस साधना से अनेक प्रकार के अनुभव होते हैं।

21 दिन के बाद माला को जल में प्रवाहित कर दें तथा यंत्र को पूजा स्थान में स्थापित कर दें। बाद में भी इस मंत्र का नित्य पन्द्रह-बीस मिनट तक जप करने के पश्चात् शवासन करें। धीरे-धीरे साधक को गुरुदेव की उपस्थिति का अनुभव होने लगेगा, आपके मन में उमड़ रहे प्रश्नों का उत्तर भी मिलने लगेगा, जीवन में साहस और निडरता आ जाएगी।

विशेष : आपको हर साधना लाभ जानने में विशेष रूचि रहती है और अपने जीवन की तराजु में लाभ-हानि की तराजु पर प्रत्येक साधना को तौलते हो, गुरु हृदय स्थापन साधना तो ऐसी महान् साधना है जो प्रत्येक दीक्षित शिष्य को अवश्य ही सम्पन्न करनी चाहिए जिससे वह निरन्तर आत्म भाव से सद्गुरु से जुड़ा रहे और उसे अपने जीवन में निरन्तर नया जोश, उत्साह, उमंग प्राप्त होता रहे क्योंकि यह बात सदैव याद रखिये कि संसार की सबसे बड़ी शक्ति गुरु ही है और हर स्थिति में गुरु ही आपके साथ रहते हैं - *सम्पादक*

मंत्र सिद्ध प्राण प्रतिष्ठा युक्त साधना सामग्री - 380/-

से समस्त सिद्धियों के द्वार खुल जाते हैं

गुरु हृदयस्थ वशीकरण साधना

गुरुतत्व धारण की बीजाक्षरी साधना

गुरु साधना केवल कुछ मंत्र जप कर लेने की क्रिया ही नहीं होती, वरन् अपने सम्पूर्ण अस्तित्व को बदलने की क्रिया होती है। अपने दुष्चिन्तनों, कुसंस्कारों को पहचानते हुए, निरन्तर उनसे संघर्ष करते हुए अपने आपको एक नवीन व्यक्तित्व में परिवर्तित करने की क्रिया ही यथार्थतः 'गुरु साधना' है।

प्रत्येक शिष्य एवं साधक की यही हार्दिक इच्छा होती है, कि वह अपने जीवन में कम से कम एक बार पूर्णता के साथ गुरु साधना अवश्य करे। साधक के पूर्वजन्मकृत संस्कार उसे किसी देवी या देवता के प्रति भी आकृष्ट करते ही रहते हैं। इसी को साधना के जगत में 'इष्ट' की संज्ञा दी गई है और इसी पूर्वजन्मकृत संस्कार के फलस्वरूप ही कोई साधक शिवभक्त होता है, तो कोई कृष्ण भक्त; किसी को देवी साधना में आन्तरिक तृप्ति मिलती है, तो किसी को गणपति साधना ही सारभूत साधना प्रतीत होती है।

अनेक मतमतान्तरों से भरे हिन्दू धर्म में सबको ही समुचित सम्मान दिया गया है, और जब साधक वास्तव में ही अपने इष्ट से तादात्म्य स्थापित करने की स्थिति में आ जाता है, तभी वह समझ जाता है, कि वस्तुतः भेद तो कहीं है ही नहीं। केवल ऐसा ही साधक इष्ट को अपने गुरु में साक्षात् अनुभव कर सकता है।

इसी कारणवश गुरु साधना केवल एक प्राथमिक साधक के ही जीवन की आवश्यकता नहीं, वरन् उच्च स्तर तक पहुंच गए साधक की भी प्रथम आवश्यकता है। प्राथमिक साधक गुरु का अवलम्बन इस कारण से लेता है, क्योंकि उसे अपने इष्ट तक पहुंचने का उपाय प्राप्त करना होता है, और उच्च स्तर पर पहुंच गया साधक उसे (गुरु साधना को) इस कारणवश सम्पन्न करना चाहता है, क्योंकि गुरु साधना का तात्पर्य केवल गुरु की भक्ति ही न होकर जीवन के उन आयामों को प्राप्त करना होता है, जो कि केवल साधना के द्वारा ही प्राप्त

किये जा सकते हैं। गुरु की आत्मा एवं प्राण साधना में ही निवास करते है और साधक किसी भी रूप में किसी भी साधना का अवलम्बन क्यों न ले, वास्तव में उसे गुरु साहचर्य की ही प्राप्ति होती है।

गुरु साधना करने की आवश्यकता ही क्या है?

इसका कदाचित सबसे अधिक उपयुक्त उत्तर यही हो सकता है, **कि गुरु साधना के माध्यम से व्यक्ति स्वयं ही अपने अन्दर गुरुत्व धारण करने की वह क्रिया करता है, जिसके द्वारा वह कालान्तर में किसी भी सिद्धि अथवा लक्ष्य तक पहुंच सकता है।**

गुरु साधना का अर्थ गुरुदेव को प्रसन्न करना भी नहीं होता, क्योंकि वे तो अपने 'सदाशिव' स्वरूप में सदैव प्रसन्न रहते ही हैं। शिष्य के कल्याणर्थ वे उसके विषों का सहर्ष पान करते ही रहते हैं, किन्तु जब वे अनुभव करते हैं, कि उनके शिष्य ने स्वयं को 'साधित' करने की अपेक्षा उनकी भक्ति ही प्रारम्भ कर दी है, तो उन्हें क्लेश अवश्य होता है, क्योंकि गुरु से यह सूक्ष्म भेद नहीं छुप सकता, कि उनका कौन सा शिष्य, किस भावना से वशीभूत होकर, उनसे क्या निवेदन कर रहा है?

इसी कारणवश आदर्श साधक तो वही है, जो प्रत्येक स्थिति में साधना का अवलम्बन लिए ही रहे, नित-नूतन पद्धतियों का ज्ञान प्राप्त करता ही रहे। केवल साष्टांग रूप से गुरुदेव के समक्ष बिछ जाना ही समर्पण नहीं होता, वरन् उनके मानस से तादात्म्य स्थापित करने का प्रयत्न करते हुए उन्हीं के अनुरूप कार्य करने की चेष्टा करना भी 'समर्पण' होता है और गुरुदेव इसी समर्पण को अधिक प्रसन्नता से स्वीकार करते हैं।

हमारी पात्रता ऐसी नहीं है, कि हम गुरुदेव के विचारों को उनके ही अनुरूप समझ सकें, क्योंकि विविध वासनाएं एवं संस्कार हमें विचलित करते ही रहते हैं। इस दशा में साधना ही वह मार्ग विशेष रह जाता है, जो मार्ग के ऐसे संस्कार रूपी कंकड़ों को हटा सके और साधक को अधिक तीव्रता से अपने लक्ष्य तक ले जा सके - 'गुरु सेवा' करते हुए।

'गुरु सेवा' साधना का सर्वोच्च स्वरूप अवश्य है, किन्तु यह ध्यान में रखना आवश्यक है, कि केवल वही व्यक्ति गुरु सेवा कर सकता है, जो 'शिष्यता' से युक्त हो, क्योंकि वही गुरु की इच्छा को समझने की पात्रता रखता है।
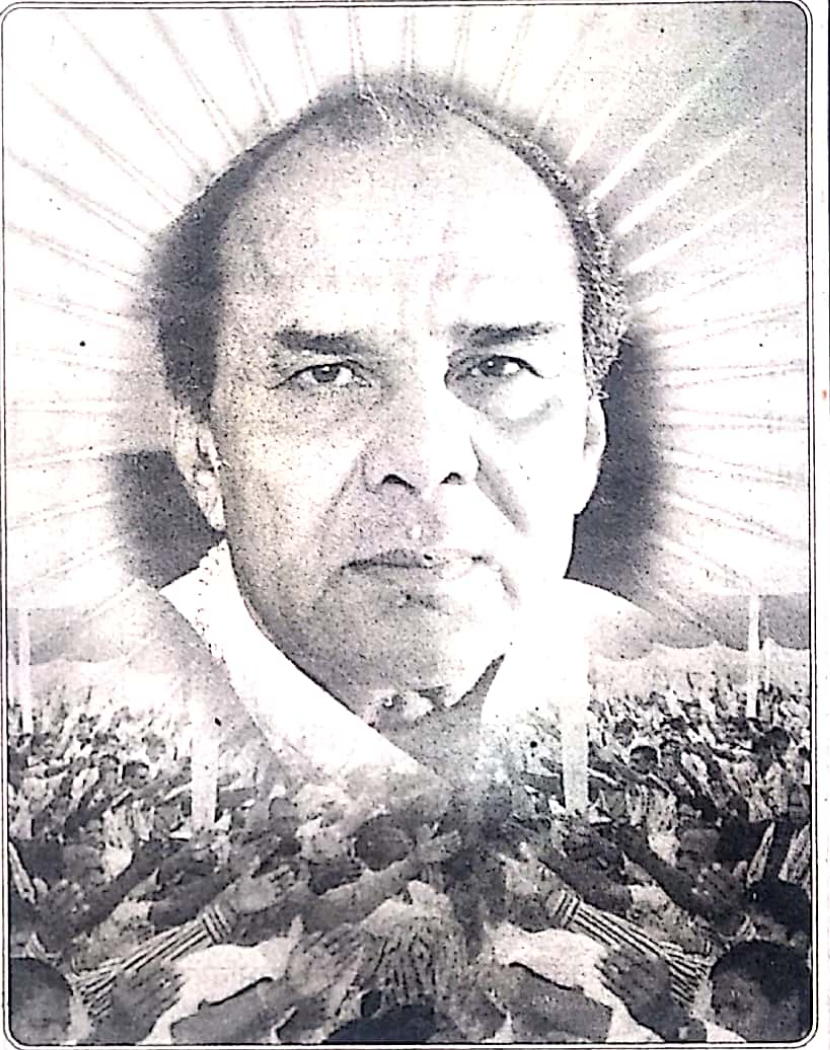
यज्ञो दानं जपस्तीर्थं व्रतं धर्मपरं च यत्।
गुरु तत्त्वमविज्ञाय मूढास्तेऽन्यपरा जनाः॥

- (गुरु गीता)

अर्थात् - **'मूढ़ लोग ही गुरुतत्त्व को न जानकर यज्ञ, दान, तपस्या, तीर्थ, व्रत एवं अन्य धर्मों का आश्रय लेते हैं' (उनका पारायण करते हैं)।**

वस्तुतः गुरुदेव तो किसी भक्ति को प्रश्रय देते ही नहीं हैं, किन्तु यह हमारे देश की विशेषता रही, कि जब-जब उसने किसी आचरण को ग्रहण करने में कठिनाई अनुभव की, तब-तब बड़ी सूक्ष्मता से उस आदर्श या आचरण की वन्दना ही प्रारम्भ कर दी। साधक को इस दुर्गुण से सावधान रहना चाहिए और केवल आत्मोन्नति की दृष्टि से ही नहीं, वरन् गुरुदेव की प्रियता प्राप्त करने की दृष्टि से भी साधना का अवलम्बन निरन्तर ग्रहण किये रहना चाहिए।

पूज्यपाद गुरुदेव के सहस्रों शिष्यों में से ऐसे अनेक शिष्य हैं, जो अपनी क्षमता भर प्रयास करते ही रहते हैं, कि वे किस प्रकार से पूज्यपाद गुरुदेव की संतुष्टि का हेतु बन सकें, उन्हें

प्रसन्न कर सकें, उनके तनाव के क्षणों में कुछ कमी ला सकें।

यह लेख एवं साधना ऐसे ही श्रेष्ठतम शिष्यों को समर्पित है, जो यह समझ सके हैं, कि वे गुरु की सेवा तभी कर सकेंगे, जब वे स्वयं किसी 'गुरुत्व' से आपूरित होंगे।

गुरु साधना केवल कुछ मंत्र जप कर लेने की क्रिया ही नहीं होती, वरन् अपने सम्पूर्ण अस्तित्व को बदलने की क्रिया होती है। अपने दुष्चिन्तनों, कुसंस्कारों को पहचानते हुए, निरन्तर उनसे संघर्ष करते हुए अपने आपको एक नवीन व्यक्तित्व में परिवर्तित करने की क्रिया ही यथार्थतः 'गुरु साधना' है।

मंत्र विशेष इसी कार्य में सहयोग देते हैं, साधना विशेष इसी आंतरिक भावना को तीव्रता देने के साथ ही साथ उन उपायों को भी सुलभ करती है, जिससे साधक अल्प समय में ही अपने लक्ष्य तक पहुंच सकें।

जो साधक गुरु साधना को ही अपने जीवन का आधार बना लेते हैं, उनके सौभाग्य की तो कोई उपमा ही नहीं दी जा सकती, क्योंकि ऐसे साधक पर गुरुदेव की सीधी दृष्टि होती है, और जब वे स्वयं अनुभव कर लेते हैं, कि मेरे इस विशेष साधक का लक्ष्य केवल आत्मोन्नति के माध्यमं से जन सामान्य के लिए हितकारी बनता है, तो वे ऐसी अनेक विभूतियां स्वयं प्रदान कर देते हैं, जिनका शिष्य को ज्ञान तक नहीं होता है।

साधना जगत के विषय में हमारा ज्ञान है ही कितना?

हम तो कुछ सिद्धियों एवं धन आदि को ही साधना का फल मान बैठे हैं, जबकि साधना के तो इतने अधिक आयाम हैं, जिनकी सामान्यतः कल्पना भी नहीं की जा सकती है। एक

जो साधक गुरु साधना को ही अपने जीवन का आधार बना लेते हैं, उनके सौभाग्य की तो कोई उपमा ही नहीं दी जा सकती, क्योंकि ऐसे साधक पर गुरुदेव की सीधी दृष्टि होती है और जब वे स्वयं अनुभव कर लेते हैं, कि मेरे इस विशेष साधक का लक्ष्य केवल आत्मोन्नति के माध्यम से जन सामान्य के लिए हितकारी बनता है, तो वे ऐसी अनेक विभूतियां स्वयं प्रदान कर देते हैं, जिनका शिष्य को ज्ञान तक नहीं होता है।

सम्पूर्ण योगी ही सम्पूर्ण रूप से ऐश्वर्याधिपति हो सकता है, और वही भगवान शिव की भांति सर्वथा निर्लिप्त रह सकता है। जिस प्रकार भगवान शिव कुबेर के भी स्वामी होते हुए केवल बाघाम्बर एवं राख लपेटे रहते हैं, ठीक वही क्रिया किसी श्रेष्ठ साधक की भी होती है। जिसका भंडार भरा होता है वह प्रदर्शन नहीं करता।

गुरु-साधना की भी यही सार्थकता है।

गुरु साधना के माध्यम से साधक के 'भंडार' इस प्रकार भरते चले जाते हैं, कि उसे अनुभव भी नहीं होता; और जब वह किसी वस्तु की कामना करता है, तो पीछे मुड़कर देखने पर आश्चर्यचकित रह जाता है, कि उसके पास तो भंडार ही भंडार भरे पड़े हैं। यद्यपि गुरु साधना का प्रथम पुष्प तो विरक्ति, पीड़ा व तनाव होता ही है...

– और इस तथ्य को छुपाया भी नहीं जाना चाहिए, क्योंकि जो साधक गुरु साधना में प्रवेश करने की इच्छा रखें, उन्हें यह बात स्पष्ट होनी ही चाहिए।

गुरु साधना में प्रवेश करने का अर्थ है – 'प्रेम के घर में प्रवेश कर जाना', और कबीरदास के ही शब्दों में... इसके लिए तो बहुत कुछ त्यागने की मनोवृत्ति एवं साहस होना आवश्यक ही होता है –

कबीरा यह घर प्रेम का, खाला का घर नाहिं।
सीस उतारे भुई धरे, सो पैठे धर माहिं।।

अपने लक्ष्य को अपने मन में स्पष्ट रखना 'लिप्सा' नहीं होती, क्योंकि प्रत्येक साधक किसी न किसी 'प्राप्ति' के लिए ही तो गुरु-अवलम्बन ग्रहण करता है, किन्तु जहां वह कुछ मंत्र जप करके यह आशा करने लगता है, कि शीघ्र ही सभी सिद्धियां और वैभव उसकी झोली में स्वतः आकर गिर जायेंगे, वहां वे अपने जीवन में बड़ी भूल करते हैं। वे गुरु को अपने जीवन की कुछ कामनाओं की पूर्ति का माध्यम मानते है। वे निष्काम रूप से गुरु साधना कैसे करेंगे?

गुरु साधना तो एक प्रकार से आत्मीयता प्रगाढ़ करने की क्रिया है। शिष्य मानसिक रूप से जितना अधिक दृढ़ चिंतन युक्त होता जाता है, गुरुदेव के आदर्शों एवं लक्ष्यों की पूर्ति हेतु स्वयं को सक्षम बनाने में सफल होता जाता है, उतनी ही तीव्रता से गुरुदेव स्वयं उसके जीवन के अन्य पक्षों को सफल बनाने की क्रिया को सम्पन्न करते जाते हैं।

दुर्भाग्य से हमने साधना का अर्थ केवल 'सिद्धि' प्राप्त करना और उस 'सिद्धि' का मनमाना उपयोग करना ही समझ लिया है, किन्तु गुरु तो गुरु होते हैं। वे 'सिद्ध' हो ही नहीं सकते, यद्यपि 'रीझ' अवश्य सकते हैं। उनको 'रिझा' लेना ही इस साधना की सर्वोच्च उपलब्धि है।

गुरु साधना तो मुख्य रूप से एक आन्तरिक तालमेल को सम्पन्न करने की क्रिया है, नित्य आत्मविवेचन कर स्वयं को सन्नद्ध एवं सबल करने की युक्ति है, जिसे हम साधना कहते हैं। वह वास्तव में इन सभी बातों को पुष्ट करने का एक प्रकार ही होती है। केवल आन्तरिक चिन्तन से ही गुरु साधना में सफलता नहीं पाई जा सकती, न ही केवल मंत्र जप के माध्यम से गुरु साधना में सफलता पाई जा सकती है।

इसी मूल रहस्य को ध्यान में रख कर पत्रिका में समय-समय पर गुरु साधना की अनेक विधियां प्रकाशित की जाती रही हैं। **'मांत्रोक्त गुरु साधना'**, **'तांत्रोक्त गुरु साधना'**, **'शक्तियुक्त गुरु साधना'** आदि इसी क्रम में आने वाली कुछ दुर्लभ पद्धतियां हैं।

'मांत्रोक्त पद्धति' जहां साधना मार्ग में प्रवेश करने वाले साधकों के लिए उपयुक्त विधि है, वहीं 'तांत्रोक्त पद्धति' उन साधकों के लिए अनुकूल है, जो साधना मार्ग में कुछ आगे बढ़ गए हैं। दस महाविद्या साधनाओं में प्रवेश करने के इच्छुक साधकों हेतु सर्वाधिक उपयुक्त पद्धति - 'शक्तियुक्त गुरु साधना' होती है।

इसके उपरांत भी गुरु साधना की इतिश्री नहीं हो जाती, अपितु अनेक आयाम शेष रह जाते हैं, जो न केवल प्राथमिक स्तर के साधक के लिए, वरन् उच्च स्तर के साधकों के लिए भी महत्वपूर्ण होते हैं। जिस प्रकार एक वायुयान... वह भले ही कितनी ही ऊंचाई तक उड़ने में सक्षम क्यों न हो, उसे पुनः-पुनः धरती पर आकर ईंधन प्राप्त करना ही होता है, ठीक उसी प्रकार साधनाओं के माध्यम से 'ईंधन' प्राप्त करते ही रहना पड़ता है, जिससे चित्त उन्मुक्त होकर उस आकाश में विचरण कर सके, जिसे आनन्द का आकाश कहा जाता है।
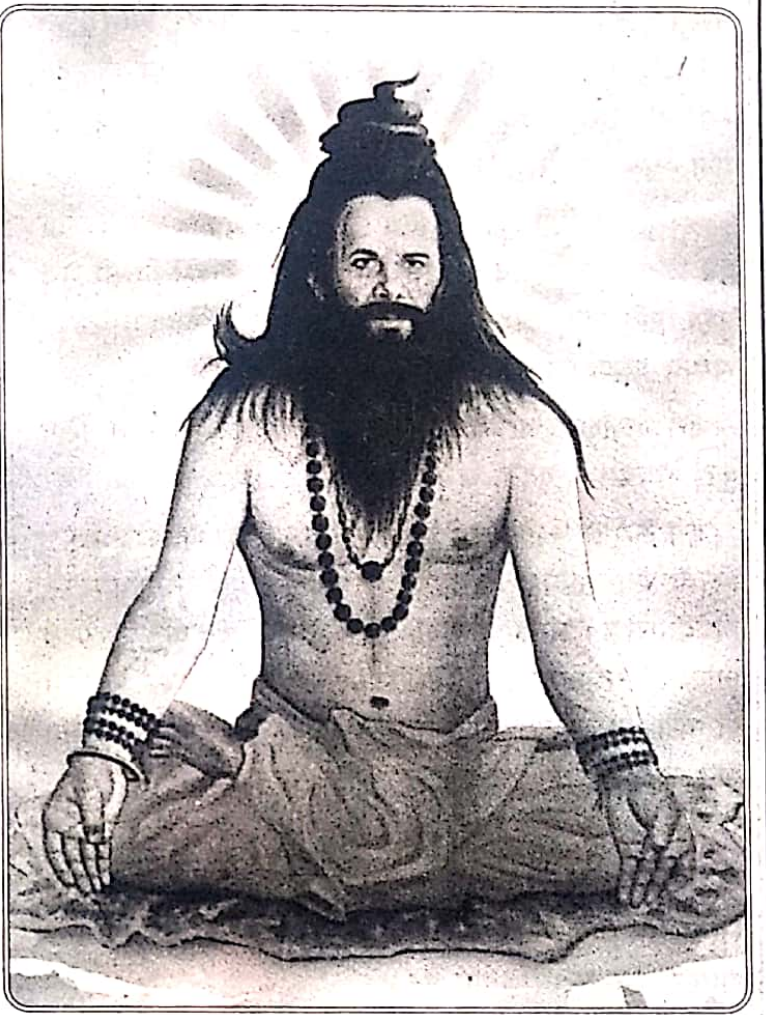
प्रस्तुत साधना, इसी श्रेणी की साधना है तथा इसे विशिष्ट साधकों के मध्य **'गुरु हृदयस्थ वशीकरण साधना'** से जाना जाता है। इस साधना पद्धति में गुरु की उपासना केवल बीज रूप में की जाती है, अर्थात् उन्हें भौतिक स्वरूप में न मानकर एक पुञ्ज के रूप में देखा जाता है और उनसे सम्बन्धित स्वरूप वही होता है, जो कि उस बीज मंत्र विशेष का होता है।

बीज मंत्र केवल अक्षर नहीं होते वरन् सम्पूर्ण स्वरूप ही होते हैं तथा साधक, साधना के मध्य, अपनी पात्रता के अनुसार किसी क्रम पर इनका वास्तविक साक्षात् भी कर लेता है।

वस्तुतः बीज मंत्र का यही 'साक्षात्- ही उसके सम्बन्धित देवी-देवता का वास्तविक स्वरूप होता है। गुरुदेव भी 'देव स्वरूप' ही तो हैं, अतः यह स्वाभाविक ही है, कि उनका भी मूल स्वरूप किसी बीज मंत्र के माध्यम से स्पष्ट हो।

प्रस्तुत साधना गुरु साधना के क्रम में एक अत्यन्त तीव्र एवं विस्फोटक प्रभाव की साधना है, जिसे केवल किसी गुरु पुष्य, रवि पुष्य, अमृतसिद्ध योग अथवा गुरु-पूर्णिमा को ही सम्पन्न किया जा सकता है।

इस विलक्षण साधना को पूर्णता से सम्पन्न करने के लिए कुछ नियमों का दृढ़ता से पालन करना आवश्यक ही होता है।

इस साधना को सम्पन्न करने के इच्छुक साधक को चाहिए, कि वह साधना के निश्चित दिवस से लगभग तीन दिन पहले ही यथासंभव मौन व्रत का आश्रय ले ले, केवल अत्यन्त आवश्यकता होने पर ही वार्तालाप करे, ब्रह्मचर्य का कठोरता से पालन करे, भूमि शयन करे तथा यथा संभव एक ही समय अन्न ग्रहण करता हुआ निरन्तर तीन दिनों तक प्रतिदिन कम से कम चार माला गुरु मंत्र तो जप कर ही ले।

योग्य साधक पन्द्रह दिन की अवधि निर्धारित कर, सवा लाख मंत्र जप का एक पुरश्चरण करके अपने आपको इस साधना हेतु सक्षम बनाते हैं।

साधना-विधान

- ✤ नियत साधना दिवस पर साधक ब्रह्म मुहूर्त में उठें अथवा रात्रि के तीसरे प्रहर में इस साधना को सम्पन्न करें।
- ✤ इस साधना हेतु उनके पास ताम्र पत्र पर अंकित **'गुरु बीज यंत्र'** होना अति आवश्यक है, जो इस साधना का सर्वस्व है। इसके अतिरिक्त उसके पास चार **'लघु नारियल'** एवं एक **'कमल गट्टे की माला'** होनी भी शास्त्रोचित मानी गई है।
- ✤ साधक श्वेत वस्त्र एवं श्वेत आसन अथवा गहरे लाल रंग के वस्त्र एवं लाल आसन का प्रयोग करें। गुरु पीताम्बर अवश्य ओढें।
- ✤ दिशा उत्तर ही उचित मानी गई है।
- ✤ सर्वप्रथम यंत्र का पंचोपचार (गंध, पुष्प, धूप, दीप एवं नैवेद्य) पूजन करें तथा यंत्र के चारों कोनों पर एक-एक लघु नारियल स्थापित कर उन पर कुंकुम का टीका लगाएं।
- ✤ यंत्र पर दृष्टि एकाग्र रखते हुए भी निम्न ध्यान का उच्चारण करें -

ध्यान

ॐ बन्धूककांचननिभं रुचिराक्षमालां,
पाशांकुशैश्च वरदां निजबाहुदण्डैः।
बिभ्राणमिन्दुसकलाभरणं त्रिनेत्र;
मर्धाम्बिकेश मनिशं वपुराश्रयामि।।

- ✤ ध्यान मंत्र के उच्चारण के बाद उसी प्रकार यंत्र पर त्राटक करते हुए **कमलगट्टे की माला** से निम्न **'गुरु बीज मंत्र'** की कम से कम पांच माला जप अवश्य करें। केवल एक ही अक्षर का बीज मंत्र होने के कारण साधक इसे सरलतापूर्वक सम्पन्न कर सकते हैं -

गुरु बीज मंत्र

।। श्रौं ।।

- ✤ मंत्र जप के उपरांत मूल गुरु मंत्र की भी एक माला सम्पन्न करें तथा पहले से प्राप्त किये गए पूज्यपाद गुरुदेव के चित्र के समक्ष आरती प्रज्वलित कर पूर्ण भाव से, अपनी त्रुटियों की क्षमा मांगते हुए आरती सम्पन्न करें।
- ✤ यही साधना क्रम तीन दिन दोहरायें।
- ✤ जब भी गुरु पुष्य, रवि पुष्य योग अथवा अमृत सिद्ध योग आये, यह साधना अवश्य सम्पन्न करें।
- ✤ तीसरे दिन साधना समाप्ति के पश्चात् समस्त साधना सामग्री को एक पीले वस्त्र में बांधकर अपने पूजा स्थान में रख दें।
- ✤ **वास्तव में इस प्रकार की साधना को सम्पन्न करने से साधक उस लाभ को और भी अधिक तीव्रता एवं सम्पूर्णता से ग्रहण कर पाता है, जो साधना शिविरों में पूज्यपाद गुरुदेव के शक्तिपात द्वारा प्राप्त होते हैं।**

साधना के किसी भी स्तर पर खड़े साधक के लिए यह गुरु साधना एक नवीनता ही लेकर आयेगी, जिसका कुछ ही दिनों में साधक स्वयं अनुभव कर सकेगा।

इस साधना में स्वतः ही लक्ष्मी तत्त्व का समावेश है, जिससे यह जीवन के भौतिक पक्षों को भी समुचित सम्पन्न करने में सहायक साधना है।

साधना सामग्री - 360/-

आगे आने वाले गुरु पुष्य, रवि पुष्य एवं अमृत सिद्ध योग जब यह साधना सम्पन्न कर सकते है - अमृत सिद्ध योग - 25 जुलाई/25 अगस्त/22, 25 सितम्बर/18 अक्टूबर। गुरु पुष्य - 28 अगस्त।

गुरु से साक्षात् मिलन जीवन का सौभाग्य है

गुरु पूर्णिमा- शिष्य पूर्णिमा

जब शिष्य सद्गुरु का साक्षात् पूजन करता है

विशिष्ट गुरु पूर्णिमा समर्पण पूजन

जो शिष्य गुरु चरणों में गुरु पूर्णिमा के शुभ अवसर पर उपस्थित होता है वह धन्य है, लेकिन कई शिष्य मन में पूर्ण बलवती इच्छा होते हुए भी सांसारिक क्रिया-कलापों के बंधन के कारण गुरु पूर्णिमा के दिन गुरु के पास नहीं पहुंच पाते हैं, वे साधक शिष्य पूर्ण विधि विधान सहित नीचे दी गई विधि अनुसार गुरु पूजन करें तथा अपने जीवन में विशेष संकल्प लें।

गुरु पूर्णिमा प्रत्येक साधक साधिका के लिए ऐसा महान् उत्तम दिवस है, जिस दिन वे अपने गुरु की पूजा अर्चना साधना कर, अपने जीवन में ज्योति आलोकित कर सकते हैं। माता-पिता स्थूल शरीर को जन्म देते हैं, परन्तु गुरुदेव उस स्थूल शरीर में ज्ञान, चेतना, पुरुषार्थ की अग्नि भरते हैं, इसीलिए शास्त्रों में गुरु का स्थान माता-पिता, सभी देवताओं से उच्च माना गया है।

गुरु पूर्णिमा के दिन गुरु की पूजा अर्चना कर साधक गुरु के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करता है, शिष्यगण का हित इसी में है कि वे अपने गुरु से निरन्तर सम्पर्क बनाये रखें, अतः जहां तक सम्भव हो सके गुरु पूर्णिमा के शुभ दिवस पर गुरु की साक्षात् पूजा करनी चाहिए, क्योंकि गुरु ही परब्रह्म, गुरु ही परम गति हैं, गुरु ही पराकाष्ठा हैं, गुरु ही परम धर्म हैं, गुरु ही सब कुछ दे सकने में समर्थ होने के कारण श्रेष्ठ से भी श्रेष्ठ हैं।

जो साधक साधिका गुरु पूर्णिमा के दिन उपस्थित न हो सकें, उन्हें अपने निवास स्थान पर प्रसन्न मन से परिवार के साथ पूर्ण विधि से गुरु-पूजा करनी चाहिए।

गुरु-पूजन

प्रातः स्नानादि नित्य क्रिया को समाप्त कर शुद्ध भावनाओं से पूजा स्थल में, जो पहले से स्वच्छ कर लिया गया हो, पूर्व या उत्तर दिशा की ओर आसन बिछा कर बैठें। अपने सामने एक चौकी पर सफेद वस्त्र बिछा कर उसमें पूज्य, गुरुदेव का प्राण प्रतिष्ठित चित्र स्थापित करें।

सामग्री - 'निखिलेश्वरानन्द दिव्य चैतन्य सिद्धि यंत्र', 'गुरु प्रत्यक्ष दर्शन गुटिका', 'गुरु प्राण संजीवनी माला'।

पूजन से पूर्व शुद्ध घी का दीपक जला लें, घी का दीपक पूजन काल में सदैव अपने दाहिनी ओर रखें। निम्न मंत्र से दीपक का पूजन मौली एवं अक्षत से करें -

ॐ दीप ज्योतिषे नमः

ॐ दीपस्थ देवतायै नमः

फिर प्रार्थना करें -

भो दीप! देव रूपस्त्वं कर्म साक्षी ह्यविघ्नकृत।
यावत् कर्म समाप्तिः स्यात् तावदत्र स्थिरो भवः॥

इसके बाद दोनों हाथ जोड़ कर अपने इष्टदेव का पूर्ण श्रद्धा

ॐ ऐं गुरुभ्यो नमः
ॐ ऐं परम गुरुभ्यो नमः
ॐ परात्पर गुरुभ्यो नमः
ॐ ऐं पारमेष्ठि गुरुभ्यो नमः

जीवन्यास

अपने हृदय पर दाहिना हाथ रखकर अपनी प्राण प्रतिष्ठा करें -

आं हीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः
मम प्राणाः इह प्राणाः ।
आं हीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः
मम जीव इह स्थितः ।
आ हीं क्रो यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः
मम सर्वाणि इन्द्राणि, वांग मनः चक्षुःत्वक श्रोत्र घ्राण जिह्वा इहैव आगत्य सुखं चिरं तिष्ठतु ।

गणपति का ध्यान करें -

ॐ तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि तन्नो दन्ति प्रचोदयात् ।
ॐ गं इदं स्नानं गणेशाय नमः
ॐ गं एष गंधः सचन्दनं सपुष्पं गणेशाय नमः
ॐ गं एष धूपः साक्षातं गणेशाय नमः
ॐ गं एष दीपः नैवेद्येन सहितं गणेशाय नमः ।

दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम कर लें।

गुरु-ध्यान

अथातः प्रातरुत्थाय शय्यास्थः सुसमाहितः ।
शिरस्थ कमले ध्यायेत् स्व गुरुंब्रह्म रूपिणम ।।

अर्थात् सिर स्थित सहस्रदल कमल के मध्य में हंस पीठ के ऊपर गौर शरीर, प्रसन्न मुखमण्डल, शांत मूर्ति, सुर शक्ति सहित, शिव स्वरूप गुरुदेव आपका शिष्य ध्यान कर रहा है।

ध्यायेच्छिरशि शुक्लाब्जे द्विनेत्रं द्विभुजं गुरुं ।
श्वेताम्बरं परिधानं श्वेत माल्यानुलेपनं ।।
वराभय करं शान्तं करुणामय विग्रहं ।
वामेनोत्पल धारिण्यां शक्त्यालिंगित विग्रहं ।।

ब्रह्मरंध्र के मध्य में श्वेत वर्ण, द्विभुज, द्विनेत्र गुरु स्थित हैं उनके वस्त्र श्वेत हैं, श्वेत माला पहने हुए, श्वेत चंदन लगाये हैं, उनके एक हाथ में वर तथा दूसरे हाथ में अभय है, उनकी मूर्ति शांत और करुणामय है, उनके बायीं ओर रक्त-वर्ण शक्ति है, इस प्रकार ध्यान करें।

के साथ स्मरण करें -

सर्वमंगल मांगल्यं वरेण्यं वरदं शुभम् ।
नारायण नमस्कृत्यं सर्वकर्माणि कारयेत् ।।

पवित्रीकरण

बाएं हाथ में जल लेकर दाहिने हाथ की अंगुली से अपने ऊपर जल छिड़कें -

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वास्थांगतोऽपिवा ।
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं सः बाह्याभ्यन्तरः शुचिः ।।

संकल्प

अपने दाहिने हाथ में जल लेकर संकल्प करें कि आज आषाढ़ मास शुक्ल पक्ष पूर्णिमा, शुक्रवार को अपने इष्ट एवं देवताओं को साक्षी रखते हुए यह विशेष निखिलेश्वरानन्द गुरु पूंजन सम्पन्न कर रहा हूं। मेरे जीवन में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की प्राप्ति हो, सद्गुरुदेव का आशीर्वाद सदैव मुझे प्राप्त होता रहे।

गुरु प्रणाम

दोनों हाथ जोड़ें -

फिर दाहिना हाथ अपनी नाभि पर रख कर उस पर बायां हाथ रख कर नाभि स्थल में गुरुदेव का ध्यान करें -

ॐ वराभय करं शान्तं, शुक्लवर्णं स शक्तिकम्।
ज्ञानानन्द मयं साक्षात्, सर्व ब्रह्म स्वरूपकम्॥

शुक्ल वर्ण वाले गुरुदेव साक्षात् ब्रह्म एवं ज्ञान स्वरूप हैं, वे अपनी साधनात्मक शक्ति सहित सहस्रार में स्थित होकर शिष्य को एक हाथ से वर तथा दूसरे हाथ से अभय प्रदान कर रहे हैं।

इसके बाद गुरु का आह्वान करें -

ॐ ऐं परम गुरवे सशक्तिकम श्री नारायणाय गुरवे आवाहनं समर्पयामि ।

ॐ स्वरूप निरूपण हेतवे नारायणाय श्री गुरवे नमः।

ॐ स्वच्छ प्रकाश विमर्ष हेतवे नारायणाय श्री गुरवे नमः।

ॐ स्वात्मारामं पंजर विलीन तेजसे श्री परमेष्टि नारायणाय गुरवे नमः आवाहनं समर्पयामि पूजयामि।

गुरु चित्र को स्नान करावें -

ॐ गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु।

चित्र को पोंछ दें।

ॐ ऐं इदं स्नानं श्री गुरु चरणेभ्यो नमः। (स्नान)

ॐ ऐं एष गन्धः श्री गुरुचरणेभ्यो नमः। (तिलक करें)

ॐ ऐं इदं पुष्पं श्री गुरुचरणेभ्यो नमः। (पुष्प चढ़ावें)

ॐ ऐं एष धूपः श्री गुरुचरणेभ्यो नमः। (धूप दिखाएं)

ॐ ऐं एष दीपः श्री गुरुचरणेभ्यो नमः। (दीप दिखाएं)

ॐ ऐं इदं नैवेद्यं समर्पयामि। (नैवेद्य अर्पित करें)

गुरु चित्र के सामने एक थाली रखें। अष्ट गंध या कुंकुम से त्रिकोण बना लें। मध्य में ॐ लिखकर **'निखिलेश्वरानंद दिव्य चैतन्य सिद्धि यंत्र'** को स्थापित करें। **'गुरुत्व प्रत्यक्ष गुटिका'** दाहिनी ओर स्थापित करें।

यंत्र को स्नान करावें।

स्नानं समर्पयामि श्री गुरु चरणेभ्यो नमः

इसके बाद निम्न मंत्र बोलते हुए कुंकुम से चावल रंग कर बाएं हाथ में लेकर यंत्र पर चढ़ावें।

ॐ गुं गुरवे नमः।
ॐ गुं परम गुरवे नमः।
ॐ गुं परात्पर गुरवे नमः।
ॐ गुं पारमेष्ठि गुरवे नमः।
ॐ गुं अनन्तात्मने नमः।
ॐ गुं परमात्मने नमः।
ॐ गुं ज्ञानात्मने नमः।
ॐ गुं अनन्ताय नमः।
ॐ गुं पारिजाताय नमः।
ॐ गुं ऐश्वर्याय नमः।
ॐ गुं पद्माय नमः।
ॐ गुं आनन्दकन्दाय नमः।
ॐ गुं संविल्लाभाय नमः।
ॐ गुं प्रकृतिप्रियाय नमः।
ॐ गुं ज्ञानाय नमः।
ॐ गुं आधार शक्तये नमः।

ॐ ऐं एष सांगाय सपरिवाराय सर्वशक्ति मयाय गुरुदेवाय निखिलेश्वराय नमः।

इसके बाद गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य और ताम्बूल (सुपारी) इन छः उपकरणों से निखिलेश्वरानन्द दिव्य चैतन्य यंत्र का विशेष पूजन करना चाहिए।

1. पृथ्वी को गन्ध स्वरूप मानें, 2. आकाश को पुष्प स्वरूप मानें, 3. वायु को धूप स्वरूप मानें, 4. अग्नि को दीप स्वरूप मानें, 5. अमृत को नैवेद्य स्वरूप मानें, 6. वातावरण को ताम्बूल (सुपारी) स्वरूप मानें।

गन्ध - दोनों हाथों के अंगुष्ठ और कनिष्ठा उंगलियों के योग से गुरुदेव को गन्ध समर्पित करें -

ऐं कनिष्ठिकाभ्यां लं पृथिव्यात्मकं गन्धं स शक्तिकं श्री गुरवे समर्पयामि नमः।

धूप- दोनों हाथों की तर्जनी और अगुंष्ठ के सहयोग से धूप समर्पित करें -

ऐं तर्जनीभ्यां यं वागात्मकं धूपं स शक्तिकं श्री गुरवे समर्पयामि नमः।

दीप - दोनों हाथों की मध्यमा और अगुंष्ठ के योग से दीप दिखायें -

ऐं मध्यमाभ्यां रं बह्नात्मकं दीपं स शक्तिकं श्री गुरवे समर्पयामि नमः।

नैवेद्य - दोनों हाथों की अनामिका और अंगुष्ठ के योग से नैवेद्य समर्पित करें -

ऐं अनामिकाभ्यां अमृतात्मकं नैवेद्यं स शक्तिकं श्री गुरवे समर्पयामि नमः।

ताम्बूल - दोनों हाथ जोड़कर ताम्बूल (सुपारी) प्रदान करें -

ऐं करतलकर पृष्ठाभ्यां सर्वात्मकं ताम्बूलं स शक्तिकं श्री गुरवे समर्पयामि नमः।

इस प्रकार छः उपकरणों से गुरुदेव का पूजन करें। यदि ये पदार्थ उपलब्ध हों तो वे पदार्थ **यंत्र** के आगे समर्पित करें, और न हों तो मानसिक रूप से ऊपर लिखे अनुसार मानसिक उपकरण पूजन समर्पित करें, इसके बाद करन्यास करें –

करन्यास	अंगन्यास
ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः	*हृदयाय नमः*
ॐ तर्जनीभ्यां नमः	*शिरसे स्वाहा*
ॐ मध्यमाभ्यां नमः	*शिखायै वषट्*
ॐ अनामिकाभ्यां नमः	*कवचाय हुं*
ॐ कनिष्ठिकाभ्यां नमः	*नेत्रत्रयाय वौषट्*
ॐ करतलकर पृष्ठाभ्यां नमः	*अस्त्राय फट्*

कर न्यास में सभी उंगलियों को तथा अंगन्यास में सारे शरीर का स्पर्श करना चाहिए।

पीठ पूजा

निम्न मंत्र बोल कर **निखिलेश्वरानन्द दिव्यं चैतन्य सिद्धि यंत्र** एवं **गुरु प्रत्यक्ष दर्शन गुटिका** पर गंध और पुष्प चढ़ावें।

ॐ ह्रीं एते गंध पुष्पे पीठ देवताभ्यो नमः।
ॐ ह्रीं एते गंध पुष्पे पीठ शक्तिभ्यो नमः।
ॐ ऐं इदं पुष्पं ब्रह्माण्डस्वरूपाय निखिलेश्वराय नमः।
ॐ ऐं एष धूपः ब्रह्माण्डस्वरूपाय निखिलेश्वराय नमः।
ॐ ऐं एष दीपः ब्रह्माण्डस्वरूपाय निखिलेश्वराय नमः।
ॐ ऐं इदं नैवेद्यं ब्रह्माण्डस्वरूपाय निखिलेश्वराय नमः।
ॐ ऐं इदं आचमनीयं श्री निखिलेश्वराय नमः।
ॐ ऐं इदं ताम्बूलं श्री निखिलेश्वराय नमः।

आवरण पूजा

निम्न मंत्रों से यंत्र पर सुगन्धित पुष्प चढ़ावें।

ॐ ऐं एष गंध पुष्पे निखिलेश्वरानन्द देवताभ्यो नमः
ॐ ऐं एष गंध पुष्पे परम गुरुभ्यो नमः
ॐ ऐं एष गंधपुष्पे परात्पर गुरुभ्यो नमः
ॐ ऐं एष गंध पुष्पे पारमेष्ठि गुरुभ्यो नमः

यदि शिष्य अथवा शिष्या दीक्षित हो तो गुरु मंत्र '***ॐ परम तत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः***' मंत्र का जप करें, यह मंत्र जप एक माला अर्थात् 108 बार उच्चारण करें।

गुरु पंक्ति नमस्कार – इसके बाद गुरु पंक्ति नमस्कार करें–

ॐ गुरुभ्यो नमः।
ॐ परम गुरुभ्यो नमः।
ॐ परापर गुरुभ्यो नमः।
ॐ सर्व गुरुभ्यो नमः।

इसके बाद **गुरु प्राण संजीवनी माला** से 11 माला मंत्र जप करें –

मंत्र

॥ ॐ निं निखिलेश्वराय नमः ॥

तदन्तर पांच माला मंत्र जप गुरु मंत्र का करें –

॥ ॐ परम तत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः॥

फिर गुरु को प्रणिपात होकर नमस्कार करें –

अखण्ड मंडलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः॥
न गुरोरधिकं तत्वं न गुरोरधिकं तपः।
तत्व ज्ञानं परं नास्ति तस्मै श्री गुरवे नमः॥
अज्ञान तिमिरान्धस्य ज्ञानांजन शलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः॥
नमोऽस्तु गुरवे तस्मै इष्ट देव स्वरूपिणे।
यस्य वागमृतं हन्ति विषं संसार संज्ञकम॥
भव पाश विनाशाय ज्ञान दृष्टि प्रदर्शिने।
नमः सद्गुरवे तस्मै भुक्ति मुक्ति प्रदायिने॥
नराकृति परब्रह्मरुपायाज्ञान हारिणे।
कुलधर्म प्रकाशाय तस्मै श्री गुरवे नमः॥

इस प्रकार गुरुदेव को नमस्कार कर वाग्भव बीज मंत्र 'ऐं' द्वारा तीन बार प्राणायाम करें, गुरु को अपने सामर्थ्य अनुसार दक्षिणा अर्पित करें। नियमित रूप से गुरु स्तोत्र तथा गुरु स्तवन का पाठ करने से समस्त कार्य गुरुमय हो कर सफलतादायक फलित होते हैं।

जप समर्पण

ॐ गुह्यातिगुह्य गोप्ता त्वं गृहाणास्मत कृतं जपं सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत प्रसादान्महेश्वर।

इसके बाद आरती करें तथा प्रसाद वितरण करें। साधना समाप्ति के बाद यंत्र को अपने पूजा स्थान में ही स्थापित रखें तथा हर माह की 21 तारीख को पूजन करें और गुरु प्राण संजीवनी माला को किसी विशेष कार्य पर जाते समय अपने गले में धारण करें। इस माला का उपयोग केवल गुरु मंत्र जप में ही करना है। नित्य पूजन के पश्चात् माला गुरु चित्र के आगे रख दें। **'गुरु प्रत्यक्ष दर्शन गुटिका'** को तीन दिन पश्चात् जल में विसर्जित कर दें।

साधना सामग्री – 450/-

प्रातः स्नानादि नित्य क्रिया से निवृत्त होकर पूजा स्थान में शुद्ध धोती पहन कर आसन पर बैठें। सामने चौकी पर श्वेत या पीत वस्त्र बिछा कर सुन्दर गुरु चित्र स्थापित करें। अपने समीप ही साधना सामग्री – **'गुरु हृदय स्थापन यंत्र'**, **'चेतना माला'**, **'रुद्राक्ष'** एवं **'गुरु गुटिका'** तथा अन्य पूजन सामग्री रखें। गुरु चित्र के सामने किसी थाली में कुंकुम से स्वस्तिक बनाकर उस पर **'गुरु हृदय स्थापन यंत्र'** को स्थापित करें। यंत्र के दाहिनी ओर गुटिका तथा बाईं ओर रुद्राक्ष को रख कर धूप, दीप प्रज्ज्वलित करें। पहले पवित्रीकरण और आचमन करके दोनों हाथ जोड़ कर गुरु-प्रार्थना करें।

प्रार्थना

ॐ सर्व मंगल मांगल्यैं चैतन्यं वरदं शुभम्।
नारायणं नमस्कृत्यं गुरु पूजां समाचरेत्॥

अपने सामने किसी पात्र में थोड़ा जल लेकर उसमें कुंकुम, अक्षत और पुष्प की पंखुड़ियां मिला लें, उसके बाद उसमें सभी तीर्थों का आह्वान करें -

ॐ गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु॥

भूतापसारण

बाएं हाथ में अक्षत लेकर दाएं हाथ से ढक दें तथा निम्न मंत्र बोलते हुए सभी दिशाओं में अक्षत छिड़कें -

अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भुवि संस्थिताः।
ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया॥

इसके बाद ***'सर्व विघ्नान् उत्सादय - हूं फट् स्वाहा'*** का उच्चारण करते हुए दाएं पैर की एड़ी से 3 बार भूमि पर आघात करें। इसके बाद गुरु को हाथ जोड़कर प्रणाम करें -

ॐ ऐं गुरुभ्यो नमः।

ॐ ऐं परम गुरुभ्यो नमः।

ॐ ऐं परात्पर गुरुभ्यो नमः।

ॐ ऐं पारमेष्ठि गुरुभ्यो नमः।

गुरु पंक्ति को प्रणाम करने के बाद अपने हृदय में गुरु तत्व को स्थापित करें -

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौ हंसः श्री निखिलेश्वरानन्द देवतायाः प्राणा इह प्राणाः।

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौ हंसः श्री निखिलेश्वरानन्द देवतायाः जीव इह स्थितः।

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौ हंसः श्री निखिलेश्वरानन्द देवतायाः सर्वेन्द्रियाणि।

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौ हंसः श्री निखिलेश्वरानन्द देवतायाः वाङ्मनश चक्षु श्रोत्र जिह्वा घ्राण पाणिपाद इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

अब अपने को गुरुत्व चेतना से सम्पन्न अनुभव करें।

मातृका न्यास (विनियोग)

दाहिने हाथ में जल लेकर विनियोग करें -

ॐ अस्य मातृका मंत्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, गायत्री छन्छः, मातृका सरस्वती देवता, ह्रीं बीजानि, स्वरा शक्तयः अव्यक्तं कीलकं सर्वाभीष्ट सिद्धये मातृका न्यासे विनियोगः।

अब अपने को गुरुत्व चेतना से सम्पन्न अनुभव करें।

मातृका न्यास (विनियोग)

दाहिने हाथ में जल लेकर विनियोग करें -

ॐ अस्य मातृका मंत्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, गायत्री छन्दः, मातृका सरस्वती देवता, ह्रीं बीजानि, स्वरा शक्तयः अव्यक्तं कीलकं सर्वाभीष्ट सिद्धये मातृका न्यासे विनियोगः।

इसके बाद निम्न मंत्र का उच्चारण करते हुए विभिन्न अंगों को दाएं हाथ से स्पर्श करें -

ॐ ब्रह्मणे ऋषये नमः	- सिर
ॐ गायत्रीच्छन्दसे नमः	- हृदय
ॐ मातृका सरस्वत्यै देवतायै नमः	- मुख
ॐ हल्भ्यो बीजेभ्यो नमः	- मूलाधार
ॐ स्वरेभ्यः शक्तिभ्यो नमः	- दोनों पैर
ॐ अव्यक्त कीलकाय नमः	- सभी अंग

गुरुदेव का दोनों हाथ जोड़कर आह्वान करें -

आह्वयामि रक्षार्थं पूजार्थं च मम क्रतोः।
इहागत्य गृहाण त्वं पूजां यागं च रक्षये॥

आसन

पुष्प का आसन दें -

ॐ सर्वभूतान्तरस्थाय सर्वभूतान्तरात्मने।
कल्पयाम्युपवेशार्थमासनं ते नमो नमः।
इदं पुष्पासनं समर्पयामि नमः।

पाद्यं

दो आचमनी जल चढ़ावें -

यत् भक्तिलेश सम्पर्कात् परमानन्द संभवः।
तस्मै ते परमेशान पाद्यं शुद्धाय कल्पये॥
इदं पाद्यं समर्पयामि नमः।

अर्घ्यं

दुर्वाक्षत समायुक्तं बिल्व पत्रं तथा परम्।
शोभनं शंख पात्रस्थं गृहाणार्घ्यं महेश्वरः॥
अर्घ्यं समर्पयामि नमः।

आचमन

मन्दाकिन्यास्तु यदवारि सर्व पापहरं शुभम्।
गृहाणाचमीनं त्वं मया भक्त्या निवेदितम्॥
आचमनीयं समर्पयामि नमः।

सर्वोच्च अनुभूतिः

अनुभूतियों की बात कितनी भी करें...

परंतु जब बछड़ा दौड़ कर अपनी मां के थन से दूध पीने लगता है, तो उसे क्या अनुभूति होती है?

जब गौरैया का छोटा बच्चा अपनी मां के डैनों में दुबक कर अपने को सुरक्षित महसूस करने लग जाता है, तो उसे क्या अनुभूति होती है?

और जब शिष्य गुरु चरणों में पहुंच कर अपने आप में आत्म-विभोर हो जाता है, तो उसे क्या अनुभूति होती है?

क्या इसे शब्दों में बांधा जा सकता है?

क्या इसे किसी मापदण्ड पर नापना संभव है?

जिसने गुरु प्रेम में अपने को रंग लिया, उसे इससे बड़ी अनुभूति और कौन सी चाहिए?

गुरुदेव की एक प्यार भरी नजर के सामने सभी अनुभूतियां बौनी हैं, क्योंकि सद्गुरु की एक नजर के लिए तो देवता भी तरसते हैं। यही सर्वोच्च अनुभूति है।

स्नान

इदं सुशीतलं वारि स्वच्छं शुद्धं मनोहरम्।
स्नानार्थं ते मया भक्त्या कल्पितं प्रतिगृह्यताम्।।
स्नानं समर्पयामि नमः।

यंत्र के साथ रुद्राक्ष एवं गुरु गुटिका का भी पूजन करें।

वस्त्र

मायाचित्र पटाच्छन्नं निजगुह्योप तेजसे।
मम श्रद्धा भक्ति वासं युग्मं गृह्यताम्।।
वस्त्रोपवस्त्रं समर्पयामि नमः।

तिलक

महावाक्योत्थ विज्ञानं गन्धाढ्यं सुमनोहरम्।
विलेपनं सुरश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम्।।
चन्दनं समर्पयामि नमः। सकुंकुमं अक्षतान् समर्पयामि नमः।

चन्दन एवं अक्षत चढ़ाएं।

पुष्पमाला

तुरीयं वन सम्पन्नं नानागुण मनोहरम्।
आनन्द सौरभं पुष्पं गृह्यतामिदमुत्तमम्।।
पुष्पमालां समर्पयामि नमः।

धूप, दीप

धूपम् आघ्रापयामि नमः। दीपं दर्शयामि नमः।

नैवेद्यं

शर्कराघृत संयुक्तं मधुरं स्वादुचोत्तमं।
उपहार समायुक्तं नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम्।।
ऋतु फलानि समर्पयामि नमः।

शुद्ध जल से पांच बार आचमन करावें।

ताम्बूल

इसके बाद मुख शुद्धि के लिए पान समर्पित करें -

ताम्बूलं समर्पयामि नमः।

गुरु मंत्र

मूल मंत्र जप से पूर्व एक माला गुरु मंत्र का जप करें।

।।ॐ परम तत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः।।

इसके बाद **चैतन्य माला** से निम्न मंत्र की एक माला जप सम्पन्न करें -

।।ॐ ह्रीं ऐं परात्पराय परमहंसाय निखिलेश्वराय धीमहि ऐं ह्रीं ॐ नमः।।

फिर गुरु आरती सम्पन्न करके पुष्पांजलि समर्पित करें। यह 3 माह की साधना है, इसमें नित्य उपरोक्त मंत्र की एक माला जप करना अनिवार्य है, नित्य पूजन सम्पन्न करने की आवश्यकता नहीं है। उपरोक्त पूजन को हर माह की 21 तारीख को दोहरा लें तथा प्रसाद घर में सभी को वितरित करें। 3 माह बाद सभी सामग्री को जल में विसर्जित कर दें।

इस साधना द्वारा शनैः शनैः साधक के अन्दर गुरुदेव की समस्त शक्तियां स्वतः ही उतरने लगती हैं, आवश्यकता है तो धैर्य और संयम की।

मेरे सद्गुरुदेव निखिल तो वह शक्ति है जो मुझे निरन्तर शाश्वत रूप से चेतना देते रहते हैं, जो अपने शांत स्वरूप के अनुरूप शांति प्रदान करते हैं। जो आकाश से भी परे हैं, अर्थात् किसी लोक में स्थित न होकर के अपने शिष्यों के हृदय में स्थित हैं, जिन्हें किसी बिन्दु द्वारा, किसी कला द्वारा व्यक्त नहीं किया जा सकता क्योंकि उनका स्वरूप तो शिष्यों के तेज में व्याप्त है। ऐसे ही प्रिय सद्गुरुदेव मेरे निखिल हैं।

जो परम तत्व को बोध कराने वाले हैं, जिनके जीवन में आने से अंधकार, आर्त, विषाद समाप्त हो जाते हैं और मन में परम तत्व का परमानन्द जाता है और जो हर समय यही कहते हैं -

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवाव शिष्यते।।

अर्थात् जो स्वयं तो पूर्ण हैं ही, अपने शिष्य को भी पूर्णता प्रदान करते हुए उसे सम्पूर्ण अर्थात् पूर्णतायुक्त व्यक्ति बनाते हैं, जो शिष्य रूपी श्रेष्ठ रचना का निर्माण करते हैं, वे ही तो मेरे प्रिय सद्गुरु निखिल हैं, जिनके बारे में केवल और केवल इतना ही कहा जा सकता है -

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्व मम देव देव।।

इस अवसर पर आप किसी कारणवश लखनऊ शिविर में नहीं पहुंच सके तो भी आप नीचे दी गई विधि के अनुसार पूरे परिवार सहित यह दिव्य गुरु हृदय स्थापन पूजन अवश्य करें। जहां-जहां सिद्धाश्रम साधक परिवार की गतिशील शाखाएं हैं वहां सामूहिक पूजन अवश्य सम्पन्न करें

शक्तिमय

गुरु साधना

गुरु साधना के तीन प्रकार हैं-

मांत्रोक्त, तांत्रोक्त एवं शक्तिमय। प्रथम दो क्रम भली-भांति सम्पन्न कर लेने पर ही साधक या शिष्य इस तीसरे क्रम में प्रवेश पाने का अधिकारी होता है। पूर्व में मांत्रोक्त एवं तांत्रोक्त गुरु साधना प्रकाशित की जा चुकी है और इसी क्रम में गुरु-शक्ति की साकार स्वरूपा 'श्री भुवनेश्वरी सपर्या' के आधीन शक्तिमय गुरु साधना प्रकाशित की जा रही है। इन तीनों चरणों के पूर्ण होने के बाद ही शिष्य यथार्थ में 'साधक' बनने की ओर अग्रसर हो पाता है, जहां समस्त प्रकृति उसके समक्ष हाथ बांध कर खड़ी हो।

गुरु जीवन में न प्राप्त करने की वस्तु है न खोने की। न अर्जित करने की और न खर्च कर देने की। रोज-रोज की व्यापार बुद्धि हमारे ऊपर इतनी अधिक हावी हो चुकी है, हमारी आंखों में इतनी अधिक व्यवसायिकता उतर आई है कि हमने उन्हें भी एक व्यापारिक दृष्टि से देखने के प्रयास किए, लेकिन इससे जो सत्यता है उस पर कोई अन्तर नहीं पड़ता।

इन सामान्य चर्म चक्षुओं से तो हम अपने घर-परिवार और सगे सम्बन्धियों को ही नहीं पहचान सकते। हमारे प्रति उनके मन में क्या भावना है, कितना प्रेम है इसको ही नहीं आंका जा सकता, फिर एक विभूति को कैसे समझा जा सकता है? यद्यपि यह ईश्वर की हम पर असीम कृपा है, क्योंकि व्यक्ति इस जगत के छद्म और कपट व्यापार को यदि सही-सही जान ले तो उसका सारा हृदय ही घुट कर रह जाय कि ***वह जिसे अपनी पत्नी कहता है, जिसे पुत्री कहता है, मां कहता है या भाई कह कर भाव-विभोर रहता है, वे सभी उससे कितनी अधिक दूरी पर खड़े हैं।*** व्यक्ति इन सभी रहस्यों को कुछ तो न समझते हुए और कुछ जानबूझकर अनजान बनते हुए एक भूल-भुलैया में भटक कर चला जाता है। अपने सारे अस्तित्व को दो मुट्ठी राख में बदल जाता है और जीवन में जो ऊंचाई प्राप्त कर सकता था, जो अनोखा आनन्द खुद प्राप्त कर सकता था और दूसरों को भी आनन्दित कर सकता था, वह अस्तित्व वर्षों के पृष्ठ बदलने के साथ गुमनामी में चला जाता है।

इस सम्पूर्ण यात्रा में, उसके जन्म से लेकर मृत्यु तक और मृत्यु के उपरान्त अनन्त ब्रह्माण्ड में जाकर लाखों-करोड़ों आत्माओं के बीच में विलीन अस्तित्व को सद्गुरु अपनी दृष्टि की सीमा में निरन्तर बांधे रखते हैं। उसके पुर्नजन्म की प्रतीक्षा करते रहते हैं और उचित समय आने पर कभी किसी घटना के माध्यम से, कभी किसी व्यक्ति के माध्यम से, कभी पत्रिका के माध्यम से, कभी किसी अन्य चैतन्य माध्यम से चेतना देकर जगाने का प्रयास करते हैं। अपने और उसके शाश्वत सम्बन्धों की याद दिलाना चाहते हैं, आघात देते हैं और स्नेह भी देते हैं लेकिन मनुष्य पुनः एक 'मैं' में खोया रहकर उसी स्थान पर चला जाता है, जहां तक पिछले जन्म में गया होता है। ***जिस शरीर और सौन्दर्य का वह इतना भ्रम पाल कर रखे होता है वह तो मृत्यु के बाद उस मृत पशु से भी गया बीता होता है जिसकी चमड़ी तक मरने के बाद किसी काम नहीं आती।***

गुरु की तुलना वैद्य से की गयी है। सामान्य वैद्य दवा देने के बाद अपनी फीस लेकर अलग हो जाता है, मध्यम श्रेणी का वैद्य दवा देने के बाद भी यदा-कदा मिलने पर हालचाल पूछ लेता है, लेकिन उत्तम वैद्य रोगी के सीने पर चढ़कर उसको बिना कड़ी दवा पिलाए और स्वस्थ किए मानता ही नहीं। ठीक इसी प्रकार सामान्य गुरु, जिनकी आजकल बहुतायता दिखती है, वे कान में मंत्र फूंक कर देने के बाद अपनी दक्षिणा लेकर अलग हो जाते हैं। मध्यम श्रेणी का गुरु कभी-कभी शिष्य का हालचाल पूछ भी लेता है, लेकिन सद्गुरु अपने शिष्य के सीने पर चढ़कर उसे कड़वी दवा पिलाए बिना, उसे मुक्त किए बिना विश्राम लेते ही नहीं। जाहिर है ऐसा करने में शिष्य के अहं को भी चोट पहुंचेगी, उसे कष्ट और वेदना होगी लेकिन सद्गुरु जानते हैं कि यदि मेरे इस शिष्य ने अपने को छलावे में रखा और मैंने भी इसे आघात नहीं दिया तो इसका एक जन्म और व्यर्थ चला जाएगा।

और शिष्य को भी इसी आपा-धापी से भरे जीवन में एक क्षण रूकना ही होगा, सद्गुरु की ऊंगली पकड़ कर उस मार्ग पर चलना होगा जहां अपने आत्म को चैतन्यता मिल सके, तृप्ति मिल सके। शीतलता मिल सके और सुखद छांव भी मिल सके। ऊंचे पर्वतों की यात्रा करने पर प्रारम्भ में बहुत से रंग-बिरंगे फूलों की घाटियां मिलती है लेकिन ठेठ ऊंचाई पर जाकर अकेले देवदारू ही मिलते हैं। ***घाटियों के फूलों के रंग लुभावने होते हैं, लेकिन उनमें छांव नहीं होती। छांव उसी देवदारु के नीचे मिलती है जो आठ हजार फीट से नीचे उगता ही नहीं। तभी उसे देवताओं का वृक्ष कहा गया है और ऊँचाई पर जाकर ही देवत्व के दर्शन व प्राप्ति सम्भव होती है।***

इसमें कर्तव्यों की उपेक्षा नहीं है और इस गुरु मार्ग में घर-परिवार से अलग हटकर एकान्त में धूनी भी नहीं रमाना है। वह तो एक दूसरे किस्म का छलावा हो जाएगा, लेकिन सहारा लेना है, जिससे अपनी अन्तश्चेतना को भी पूर्णता मिल सके। यह जीवन, अगला जीवन और उससे भी अगला जीवन निरन्तर एक अन्तश्चेतना की ही यात्रा है। ऐसी अन्तश्चेतना जो शुद्ध व निर्मल होकर ईश्वर से मिलने को आतुर है और इसी चेतना को कहीं ***'आत्मा'*** कहा गया है तो कहीं ***'जीव'*** और कहीं ***'प्राण'***। लेकिन मूल रूप में यह एक अभिव्यक्ति ही है उसी विराट तेजपुंज की, जिसका बोध होता है, ***गुरु साधना के माध्यम से और व्यक्ति शनैः शनैः अपने अन्दर जागृत होते गुरुत्व का साक्षात् करता है। पूर्ण गुरुत्व से साक्षात्कार कर, उससे एकाकारिता प्राप्त कर सुख व सन्तोष का लाभ प्राप्त करने लगता है*** और तब उसके सामने जीवन की घटनाएं चलचित्र की तरह घटने वाली मात्र हो जाती है, जिन्हें वह एक ओर खड़े-खड़े देखता रहता है। फिर व्यक्ति स्वयं ***'कर्ता'*** भी बन जाता है, अर्थात ऐसी क्षमता प्राप्त कर लेता है कि जीवन की स्थितियां उसकी इच्छानुसार ही बने और बिगड़े और वही वास्तविक ***'अकर्त्ता'*** व उदासीन भी हो जाता है। क्योंकि कर्ता बनते ही, शक्तिमय होते ही उसमें यह समझ भी आ जाती है कि इस नित्य जगत-कार्यों और दैनिक प्रपन्चों से अलग हटकर वास्तविक शांति तो कहीं और है।

इसी से गुरु-मार्ग व गुरु धर्म न तो संसार से अलग करता है न संसार में लिप्त करता है। बस व्यक्ति का आत्मबोध करा देता है। जिस मझिम्म पतिपदा अर्थात् मध्यम वर्ग का संकेत भगवान बुद्ध ने किया था, गुरु धर्म उसी मार्ग पर चलने का व्यवहारिक और साधनात्मक मार्ग प्रस्तुत करता है।

श्री गुरुदेव अपने स्वरूप में शिवमय भी है और शक्तिमय भी। इसीसे पूर्ण हैं। वे दोनों के समन्वित स्वरूप ही हैं। **गुरु-साधना की अनेक विधियां हैं। जहां गुरुदेव की शक्तिमयता और शिवमयता की समन्वित साधना होती है, वहीं वास्तव में पूर्णता निर्मित होती है।** इस अंक में हम एक ऐसी ही साधना प्रस्तुत कर रहे हैंजो शिवमयताकी और शक्तिमयता की सम्मिलित साधना है। गुरु तंत्र में इसे ***'मिथुन-चक्र साधना'*** की संज्ञा से जाना गया है क्योंकि श्री गुरुदेव के विग्रह में शिव व शक्ति स्वरूप परस्पर इस प्रकार घुले-मिले हैं जिनका विभेद कर पाना अत्यन्त कठिन है और जिनकी यह संयुक्त साधना ही फलप्रद भी होती है।

साधक को अपने जीवन में प्रत्येक वर्ष २१ अप्रैल से गुरुपूर्णिमा के बीच यह साधना अवश्य सम्पन्न करनी चाहिए। जहाँ २१ अप्रैल सद्गुरुप्रगटीकरण दिवस है, जिस दिन इस धरा पर पधार कर संसार में ज्ञान का प्रकाश बिखेरना प्रारम्भ किया वहीं गुरु पूर्णिमा तो शिष्य के लिये समर्पण दिवस है, जिस दिन शिष्य पूर्ण श्रद्धा से यह आशीर्वाद प्राप्त करता है कि आपने मुझे इसी जन्म में चेतना दी अतः मैं अपने आपको पूर्ण समर्पण कर रहा हूँ।

किसी सोमवार अथवा शुक्रवार की रात्रि में दस बजे के पश्चात् वातावरण शांत हो तब निश्चित भाव से इस साधना में संलग्न हों। पूजन की सभी आवश्यक सामग्री पहले से ही

साथ लेकर बैठें क्योंकि बीच में उठना साधना में विघ्न माना जाता है जिससे फल प्राप्ति में न्यूनता आती है। वस्त्र, आसन आदि शुद्ध श्वेत हों। अपने सामने एक चांदी या तांबे की बड़ी प्लेट रखें अथवा इनके अभाव में सफेद वस्त्र पर ही केसर से निम्न मिथुन-चक्र का निर्माण करें।
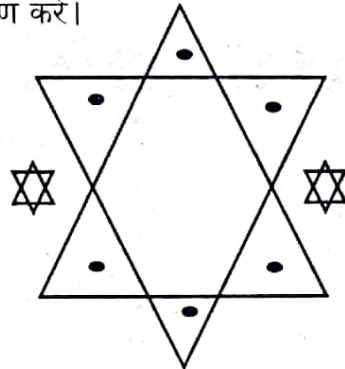
उपरोक्त मिथुन चक्र के अगल-बगल में जहां दो अन्य लघु मिथुन-चक्र चिन्हित किए गए हैं, वहां पूज्य गुरुदेव की **चरण पादुका** स्थापित करनी है। साधक के दाएं हाथ की ओर पूज्यपाद गुरुदेव की दांयी पादुका तथा वाम हस्त की ओर वाम पादुका स्थापित होनी चाहिए। अब इस मिथुन चक्र के मध्य में सफेद फूलों, श्वेत चन्दन व अक्षत से पूजन कर निम्नलिखित ध्यान का उच्चारण करें-

सहस्रारे महापद्मे किञ्जल्क-गण-शोभिते,
पद्म-राग-समाभासां रक्त-वस्त्र-सुशोभिताम्।
रक्त-कंकण-पाणिं च रक्त-नूपुर-शोभिताम्,
शरदिन्दु-प्रतीकाश-रक्तोद्भासित-कुण्डलाम्।
तरुणारूण-कल्पाभां करुणा-पूर्ण-लोचनाम्,
वराभय-करां शान्तां स्मरामि नव - गौरवीम्।
स्व-नाथ-वाम भागस्थां प्रफुल्ल-पद्म-पत्राक्षीम्,
प्रसन्न-वदनां क्षीण मध्यांध्याये शिवां गुरुम्॥

उपरोक्त ध्यान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है जिसमें गुरुदेव का शक्ति स्वरूप में (स्त्री रूप में) ध्यान किया गया है अर्थात् उनसे निरन्तर अभिन्न रहने वाली शक्ति का ही ध्यान किया गया है। इस ध्यान के उच्चारण के बाद श्वेत चन्दन व केसर की पंखुड़ियों से संक्षिप्त गुरु पादुका पूजन करें तथा निम्न गुरु पादुका मंत्र का ११ बार उच्चारण करें-

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौ हंसः
शिवः सोऽहं हंसः स्वरूप निरूपण
हेतवे श्री गुरुवे नमः ॥

अब उपरोक्त मिथुन चक्र में सबसे नीचे के त्रिभुज में एक शक्तिचक्र चढ़ाते हुए तीन की दशा में अर्थात् बांयी ओर से दाहिनी ओर बढ़ते हुए क्रमशः प्रत्येक त्रिभुज में (त्रिभुज का स्थान मिथुन चक्र में बिन्दु से प्रदर्शित है) एक शक्ति चक्र चढ़ाते हुए निम्न प्रकार से क्रमशः उच्चारण करें-

ह्रीं गायत्री सहितं ब्रह्म-श्री पादुकां
पूजयामि तर्पयामि नमः
ह्रीं सावित्री सहितं विष्णु- श्री पादुकां
पूजयामि तर्पयामि नमः
ह्रीं सरस्वती सहितं रुद्र - श्री पादुकां
पूजयामि तर्पयामि नमः
ह्रीं लक्ष्मी सहितं धनपति - श्री पादुकां
पूजयामि तर्पयामि नमः
ह्रीं रति सहितं काम - श्री पादुकां
पूजयामि तर्पयामि नमः
ह्रीं पुष्टि सहितं गणपति-री पादुकां
पूजयामि तर्पयामि नमः

इस षटकोण पूजन के पश्चात् मिथुन चक्र के दोनों ओर स्थापित गुरु चरण पादुकाओं का संक्षिप्त पूजन कर दायीं ओर की पादुका पर एक श्वेत पुष्प निम्न मंत्र के साथ चढ़ायें-

ह्रीं वसुमति सहितं पद्मनिधि श्री
पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः

इसी प्रकार बांयी ओर की पादुका पर भी निम्न मंत्र क द्वारा एक श्वेत पुष्प चढायें-

ह्रीं वसुधारा सहितं शंखनिधि श्री
पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः

पूज्य गुरुदेव के शिव-शक्तिमय स्वरूप का संयुक्त पूजन पूर्ण हो जाने के पश्चात् **शुद्ध स्फटिक माला** से निम्न मूल मंत्र की एक माला मंत्र जप करें-

ऐं ह्रीं स्वयम्भू लिंगमाश्रितायै कामकलान्विते स्वाहा॥

मंत्र जप के उपरान्त सभी **शक्ति चक्र** संभाल कर एक डिब्बी में रख लें, जिससे यह शक्तियां घर में चिरस्थायी बनी रह सकें। विशेष अवसरों पर, गुरु पुष्य नक्षत्र के दिवस पर इस साधना को पुनः सम्पन्न कर लेना चाहिए। गुरु पादुकाओं को पूजा स्थान में स्थापित कर उनके समक्ष गुरु पादुका मंत्र का नित्य प्रातः ११ बार उच्चारण कर लेना सौभाग्यदायक माना गया है और व्यक्ति धीमे-धीमे अपने दैनिक जीवन में, मानसिक चिन्तन में, साधनाओं में आने वाले अनुकूल परिवर्तनों को स्वयं समझने लगता है जिससे अपूर्व मानसिक शांति की प्राप्ति होती है, गुरु साधना के सभी लाभ हस्तगत होने लगते हैं।

साधना सामग्री-३६०/-

गुर्वष्टकम्
श्री सद्गुरवे नमः

शरीरं सुरूपं तथा वा कलत्रं यशश्चारु चित्रं धनं मेरुतुल्यम्।
गुरोरङ्घ्रिपद्मे मनश्चेन्न लग्नं ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम्॥
कलत्रं धनं पुत्रपौत्रादि सर्वं गृहं बान्धवाः सर्वमेतद्धि जातम्।
गुरोरङ्घ्रिपद्मे मनश्चेन्न लग्नं ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम्॥
षडंगादि वेदो मुखे शास्त्रविद्या कवित्वादि गद्यं सुपद्यं करोति।
गुरोरङ्घ्रिपद्मे मनश्चेन्न लग्नं ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम्॥
विदेशेषु मान्यः स्वदेशेषु धन्यः सदाचारवृत्तेषु भक्तो न चान्यः।
गुरोरङ्घ्रिपद्मे मनश्चेन्न लग्नं ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम्॥
क्षमामण्डले भूपभूपालवृन्दैः सदा सेवितं यस्य पादारविन्दम्।
गुरोरङ्घ्रिपद्मे मनश्चेन्न लग्नं ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम्॥
यशो मे गतौ दिक्षु दानप्रतापाज्जगद्वस्तु सर्वं करे मत्प्रसादात्।
गुरोरङ्घ्रिपद्मे मनश्चेन्न लग्नं ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम्॥
न भोगो न योगो न वा वाजिराजौ न कान्तामुखे नैव वित्तेषु चित्तम्।
गुरोरङ्घ्रिपद्मे मनश्चेन्न लग्नं ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम्॥
अरण्ये न वा स्वस्य गेहे न कार्ये न देहे मनो वर्तते मे त्वदन्ये।
गुरोरङ्घ्रिपद्मे मनश्चेन्न लग्नं ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम्॥
अनर्घ्याणि रत्नानि भुक्तानि सम्यक् समालिङ्गिता कामिनी यामिनीषु।
गुरोरङ्घ्रिपद्मे मनश्चेन्न लग्नं ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम्॥
गुरोरष्टकं यः पठेत् पुण्यदेही यतिर्भूपतिर्ब्रह्मचारी च गेही।
लभेद्वांछितार्थं पदं ब्रह्मसंज्ञं गुरोरुक्तवाक्ये मनो यस्य लग्नम्॥

(इति श्रीमच्छंकराचार्य कृतं गुर्वष्टकं सम्पूर्णम्)

श्री सद्गुरु को नमस्कार है ! आचार्य शंकर कहते हैं कि यदि शरीर सुन्दर, स्त्री भी सुन्दर, अद्भूत, विशद यश और सुमेरु पर्वत के समान विपुल धन प्राप्त है, पर मन श्रीसद्गुरु के चरण कमल में नहीं लगा तो उससे क्या लाभ? जिसे स्त्री, धन, पुत्र-पौत्र आदि सारी कुटुम्ब, गृह, बान्धव - ये सब भले ही प्राप्त हो गए, जिसके मुख में छहों अंगों सहित वेद तथा छहों शास्त्रों की विद्या विद्यमान है और सुन्दर गद्य-पद्यवाली कविता भी करता है, जिसका विदेशों में भारी सम्मान है, स्वदेश में भी जो धन्य माना जाता है तथा जिसके समान दूसरा कोई सदाचारी भक्त नहीं है, भूमण्डल के सभी राज समूहों द्वारा जिसके चरण कमल सदा सेवित हैं, दान के प्रताप से दिशाओं में यश व्याप्त है, सारी वस्तुएं करतलगत हैं, चित्त न भोग में लगता है, न योग में, न धन में आसक्त होता है, फिर भी उसका मन यदि श्री सद्गुरु के चरणों में नहीं लगा तो उससे क्या लाभ? यद्यपि मेरा मन न वन में न अपने घर में, न कार्य में और न बहुमूल्य शरीर में ही लगता है, फिर भी यदि वह श्री सद्गुरु के चरण कमल में न लगा तो उससे क्या लाभ? जिसका मन गुरु के समोचित वाक्यों में लगा हुआ है, जो पवित्रकाय, सन्यासी, राजा, ब्रह्मचारी या गृहस्थ इस गुर्वष्टक स्तोत्र का पाठ करेगा, उसे अभीप्सित 'ब्रह्म' नाम पद की प्राप्ति होगी।

यह संसार भी विष का सागर ही है, जो छल, झूठ, कपट, हिंसा, व्यभिचार, समस्या रूपी, विष की बूंदों से भरा हुआ है... प्रत्येक मनुष्य चाहे - अनचाहे इनका पान करता ही रहता है और इसमें उलझ कर उत्साह, उमंग और जीवन का अर्थ भूल कर मृत्यु की ओर अग्रसर हो जाता है और तब अमृत्यु की ओर कोई ले जा सकता है, तो वे गुरु ही होते हैं, जो कि शिव का साकार रूप होते हैं।

विपत्ति उद्धारक

सद्गुरु निखिल स्वरूपेण

शिव सायुज्य साधना

मन ही मनुष्यों के लिए बन्धन और मोक्ष का कारण है। व्यक्ति का मन अर्थात् चित्त जैसी इच्छा करता है, उसे वैसा ही प्राप्त होता है। मन के साथ ही मान, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, भय, पीड़ा, कष्ट की स्थितियां संलग्न हैं, अतः प्रत्येक मनुष्य इन स्थितियों का अनुभव करता है। **मन पर नियन्त्रण हुए बिना पूर्णता सम्भव नहीं होती। मन जब कामासक्त होता है तो उसे कामान्ध बना देता है। जब मन क्रोधयुक्त होता है तो व्यक्ति क्रोध में कुछ नहीं देख पाता ओर अनिष्ट कर बैठता है। जब मन में लालच समा जाता है, तो अच्छे बुरे का ज्ञान समाप्त हो जाता है।** जब मन आलस्य से ग्रस्त होता है, तो व्यक्ति को कर्महीन बना देता है। जब मन नियंत्रित हो सकेगा, तभी वह साधनाओं में या यौगिक क्रियाओं में पूर्णता प्राप्त कर सकेगा, तभी वह शिवत्व प्राप्त कर सकेगा, तभी वह गुरु में निमग्न हो सकेगा।

गुरु को परब्रह्म कहा गया है, उसी विराट गुरु तत्व की ही तीन शक्तियां हैं - ब्रह्मा, विष्णु और महेश। ब्रह्मा को जिस प्रकार सृष्टि का निर्माता कहा गया है, उसी प्रकार शिव को संहारक कहा गया है। **गुरु की शिव रूप में साधना करने से वे संहार ही तो करते हैं, शिष्य के संसार (उसकी आंतरिक पीड़ाएं) का, शिष्य के अंतः में चल रहे द्वन्द्वों का, उसके मन के विकारों का, वासनाओं का, तृष्णाओं का, दुःख, विषाद और चिन्ताओं का अपने त्रिनेत्र से वे शिष्य के पाप, संशय, काम, क्रोध, अहंकार, आलस्य, भय आदि व्याधियों को भस्म कर स्वयंवत ही तो बना लेते हैं।**

योगीजन और देवगण तो अमृत प्राप्त कर उसी में निमग्न हो जाते हैं, जबकि भगवान शिव योग-अमृत और आनन्द में लीन होकर विष अर्थात जीवन की विषमताओं में लीन हो जाते हैं। इसी कारण वे देवाधिदेव हैं। यही स्वरूप सद्गुरु का भी होता है। इसी कारणवश उन्हें भगवान शिव का प्रकट रूप कहा जाता है। स्वयं अमृतमय होते हुए भी विष में निमग्न रहना - यह लक्षण केवल किसी विराट सत्ता में ही हो सकता है।

सद्गुरु के इस संहारक स्वरूप द्वारा शिष्य के जीर्ण मन व चिन्तायुक्त चित्त का जहां नाश होता है तो वही एक नवीन शिष्य का प्रादुर्भाव होता है, जिसमें गुरु पूर्ण शिवस्वरूप में उसके रोम-रोम में विद्यमान होते हैं, जहां फिर चिन्ता नहीं होती, जहां तनाव नहीं होता, जहां वैभव तो होता है, जहां सम्पन्नता तो होती है, परन्तु किसी प्रकार की कोई लिप्सा नहीं होती, व्यक्ति के पास सब कुछ होते हुए भी वह निर्लिप्त

रहता है और यही तो इस साधना का सार है, और पूर्णता का यही तो सोपान है।

जब हम भगवान शिव के मन्दिर में जाते हैं, तो दोनों हाथ जोड़कर, दसों उंगलियों को परस्पर जोड़कर के अपने सिर को झुकाकर प्रणाम करते हैं। यह इस बात का चिन्तन है, कि मैं अपनी पांच कर्मेन्द्रियों और पांच ज्ञानेन्द्रियों - इन दसों इन्द्रियों को आबद्ध करके और अपने सिर में जो बुद्धि है, जो अहंकार है, उसको गिराता हुआ मैं आपको प्रणाम करता हूं। यह प्रणाम करने की वृत्ति विनीत होने की वृत्ति है, यह समर्पण का प्रतीक है।

यदि हमें उस परमात्मा में लीन होना है, सद्गुरु के चरणों में निमग्न होना है, तो हमें समर्पण होने की क्रिया सीखनी पड़ेगी। समर्पण होने के लिए अपनी पांच कर्मेन्द्रियों और पांच ज्ञानेन्द्रियों को एक साथ आबद्ध करना पड़ेगा, ज्ञान को कर्म पर हावी करना पड़ेगा। इसलिए जब हाथ जोड़ते हैं, तो पांच ज्ञानेन्द्रियां पांच कर्मेन्द्रियों पर हावी होती हैं, दोनों परस्पर जुड़ जाती है और फिर जुड़ कर हम दोनों हाथ को सिर पर टिका देते हैं, तो इसका अर्थ है कि हम अपनी बुद्धि को ज्ञानेन्द्रियों के हवाले कर देते हैं।

'अब मेरे पास कोई तर्क नहीं है, मेरे पास किसी प्रकार का संशय नहीं है, मैं अपने आप में झुकने की क्रिया कर रहा हूं, मैं अपने आप में प्रणिपात होने की क्रिया कर रहा हूं।' जब ऐसी क्रिया होती है, तब ज्ञान का उदय होता है।

संसार में जो कुछ है, उसे तोड़ना-मरोड़ना नहीं है, तुम्हें उसके अनुरूप बनना है, तुम्हें अपने अहंकार को समाप्त करना

> **परम शाश्वतं नीलकण्ठं गुरुत्वं**
>
> *भगवान शिव ने जिस प्रकार सृष्टि की रक्षा करने के लिए हलाहल को अपने कण्ठ में धारण कर देवताओं को अमृत का पान कराया... ठीक वही क्रिया तो गुरु को करनी पड़ती है, शिष्य के अन्तरनिहित अज्ञान, अहंकार, पाप, छल आदि दोष रूपी हलाहल को अपने अन्दर धारण कर उसे ज्ञान रूपी अमृत का पान कराते है... शिव और गुरु की क्रियाओं में साम्य होते हुए भी भिन्नता है। शिव ने केवल एक बार ही विष को कण्ठ में धारण किया था किन्तु गुरु को तो प्रतिदिन, प्रतिपल समस्त शिष्यों के विष को अपने अन्तर में धारण करना पड़ता है।*

है, और सारी चित्त वृत्तियों को, सारी कर्मेन्द्रियों और ज्ञानेन्द्रियों को एकत्र कर उस संसार के प्रवाह में निमग्न कर देता है। गुरु के शिवस्वरूप को समझना है, तो धारा के अनुरूप बहकर समुद्र में लीन होना होगा, अपने को समाप्त करना है और सारी चित्त वृत्तियों को सारी कर्मेन्द्रियों और ज्ञानेन्द्रियों को एकत्र कर उस संसार के प्रवाह में निमग्न कर देना है। गुरु के शिवस्वरूप को समझना है, तो धारा के अनुरूप बहकर समुद्र में लीन होना होगा, अपने को समाप्त करना होगा।

चित्त की तीन प्रवृतियां -

प्रथम वृति - पहली यह कि जब हमें कोई दुःखद समाचार मिलता है, तो हम दुखी हो जाते हैं, जब हमें कोई सुखद समाचार मिलता है, तो हम खुश हो जाते हैं। यदि कहीं थोड़ी सी परेशानी आती है, तो हम परेशान हो जाते हैं। यदि कुछ प्राप्त हो जाता है, तो हम बहुत आनन्द अनुभव करने लग जाते हैं, यह अनुभव करना अलग चीज है और अनुभव युक्त होना अलग चीज है। भगवान शिव आनन्दयुक्त हैं। पहले तल पर व्यक्ति सुख में सुखी होता है, दुख में दुखी होता है, जैसा जीवन चल रहा है, उसे वैसे ही जीता है। जीवन के अनुरूप बनने की कोशिश करता है। शिवत्व प्राप्त करने के लिए हमें पूर्ण रूप से नमन युक्त और समर्पण युक्त होना पड़ेगा, तभी शिव के उस आनन्द में लीन हुआ जा सकता है।

भगवान शिव तीनों लोकों के स्वामी हैं, कुबेराधिपति हैं, फिर भी श्मशान में बैठे हुए हैं, निर्लिप्त हैं, वे धन सम्पदा को भोगने में लगे हुए नहीं है, धन सम्पदा तो उनके सामने बिखरी हुई है, पर वे समझते हैं कि जीवन में अनुरक्त होने से अनुकूलता प्राप्त नहीं हो सकती। भगवान शिव भगवती शक्ति के पति हैं, फिर भी कोई अंहकार नहीं है, बिल्कुल निश्चिन्त, निर्भिक बैठे है। संसार की घटनाओं से प्रभावित नहीं है। उनके चेहरे पर जो मस्ती है, जो आनन्द है वह प्राप्त हो। **जीवन तो वही है, जहां मृत्यु नहीं आ सकती, लोभ, क्रोध और मोह जिसे स्पर्श नहीं कर सकता। निरन्तर मुस्कुराहट की वर्षा होती रहती है।**

जीवन के उस तथ्य को केवल शिव के माध्यम से ही समझा जा सकता है और कोई देवता इतना निर्द्वन्द्व और निश्चिन्त नहीं है। इतनी धन सम्पदा कुबेरवत होने के बाद भोग में लिप्त हुआ जा सकता है लेकिन यह बस होते हुए भी निर्लिप्त तटस्थ होना केवल शिव द्वारा ही सम्भव है।

द्वितीय वृति - ज्ञान का **'दूसरा तल'** गुरु है। शिवतत्व को प्राप्त करने का मतलब मृत्यु पर विजय प्राप्त करना, हम निश्चिन्त हो सकें, रोगमुक्त हो सकें। परन्तु यह तब सम्भव है जब

विनीत भाव होकर गुरु चरणों में पहुंचा जाए, जो मार्गदर्शन कर सकता है, जो शिवत्व प्रदान कर सकता है। *'शिवोऽहं गुरुर्वै गुरुर्वै शिवोऽहं'* शिव को गुरु के रूप में ही देखा जा सकता है, गुरु के माध्यम से ही शिवत्व प्राप्त किया जा सकता है। गुरु में ही शिव के दर्शन किया जा सकता है, परन्तु उसके लिए नम्रता होना आवश्यक है।

यदि अहंकार है, तो गुरु तुम्हें स्वीकार नहीं कर सकता। यदि पूर्ण नम्र भाव से शिष्य उपस्थित हो, तभी गुरु शिष्य को शिवत्व दे सकता है। *'गुरुर्देवो महेश्वरः'* गुरु स्वयं महेश्वर है, हमारे सामने शिव तो नहीं हैं, पर शिव का मूर्तिमंत स्वरूप गुरु के रूप में हमारे सामने है, इसी लिए गुरु को शिव कहा गया है।

मैं नमस्कार करता हूं उस कुबेर के अधिपति शिव स्वरूप गुरु को, उस अमृतमय शिवरूप गुरु को, उस मृत्युंजयी शिव स्वरूप निखिलेश्वर को, परन्तु अभी मैं उनके इस स्वरूप को पहिचान नहीं सका हूं। यदि हम शिव तक पहुंचे ही नहीं तो हम मृत्यु पर विजय प्राप्त कर ही नहीं सकते, संसार में शिव के अलावा कोई दूसरा देवता है नहीं जो मृत्यु पर विजय प्रदान कर सकता है।

जीवन की अष्ट बाधाएं है -

1. मृत्यु, 2. रोग, 3. ऋण,
4. कुटुम्ब क्षय, 5. बुद्धिहीनता, 6. शत्रु आक्रमण,
7. गृहस्थ न्यूनता 8. ज्ञान की न्यूनता।

आठों प्रकार की बाधाओं से मुक्ति को गुरु की शिव स्वरूप साधना द्वारा ही सम्भव है। शास्त्र इस बात को स्वीकार करता है, भगवान शिव कोई अलग सत्ता नहीं है, गुरु को ही भगवान शिव माना गया है।

जिस समय शिष्य में यह भावना आ जाती है, कि जब मैं बैठूं तो गुरु का बिम्ब मेरे सामने स्पष्ट हो, जब मैं चिन्तन करूं तो केवल गुरु शब्द ही मेरे चिन्तन में हो, गुरु में पूर्णतः लीन हो सकूं। गुरु कहते हैं - **'मैं शिव हूं और जब मेरे पास चिन्ता नहीं है, तो तुम्हें भी चिन्ता नहीं होनी चाहिए, तुम्हारी जो चिन्ताएं हैं, वह तो मुझे अर्पित कर देनी है, तुम्हें तो मस्ती से निश्चिन्त हो जाना है, तुम्हें तो अपना हाथ गुरु के हाथों में सौंप देना है।'**

गुरु दो टूक शब्दों में समझा रहा है, कि शिष्य कोई अलग सत्ता नहीं हैं, अलग रह कर तुम तो समाप्त हो जाओगे, चिन्तायुक्त हो जाओगे, तुम्हें तो पूर्ण समर्पण होना है, गुरु इस शरीर का क्या उपयोग करे यह गुरु जाने। तब शिष्य गुरु से दूर नहीं रह सकता। फिर गुरु का कर्त्तव्य है, कि वह शिष्य को कैसे अग्रसर करे। शिष्य को समर्पण सिखाया नहीं जाता, कोयल को सिखाया नहीं जाता कि कैसे कूकना है, नदी को सिखाया नहीं जाता, कि कैसे समुद्र में विसर्जित हुआ जाता है। फिर गुरु का सारा ज्ञान अपने आप में शिष्य में आ जाता है।

तृतीय वृत्ति - तीसरा तल है पूर्ण रूप से शिवमय, आनन्दमय होने की क्रिया, पूर्ण रूप से निश्चिन्त और निर्भीक होने की क्रिया। रोम-रोम में गुरु को अंकित कर देने की क्रिया। फिर शिष्य का अलग कुछ नहीं है, फिर वह पूर्ण रूप से गुरुमय, पूर्णरूप से शिवमय हो जाता है। तब उसमें नया ज्ञान, नया चिन्तन प्राप्त हो पाता है, तब अकेले बैठे हुए भी हवा में मंत्रों को सुन सकेंगे, अकेले बैठे हुए भी आनन्दमग्न हो सकेंगे, रोम-रोम से कोई आवाज उठ रही है, उसे सुन सकेंगे।

इसके लिए शरीर के रोम-रोम को चेतनायुक्त बनाना पड़ेगा और यह हो सकता है इस साधना से। **तब चित्त में किसी प्रकार की व्याकुलता नहीं आती,** तब बुढ़ापा नहीं आ सकता। पंच विकारों एवं अष्ट बाधाओं का संहार करता हुआ शिष्य प्रथम तल से तीसरे तल की यात्रा सम्पन्न कर सके, इसी हेतु यह **'गुरु शिव सायुज्य साधना'** प्रस्तुत है।

साधना विधान

इस साधना को **किसी भी सोमवार** को सम्पन्न किया जा सकता है। शुद्ध भाव से मन के सभी विकारों एवं विचारों को दूर रखते हुए एकाग्रचित्त होकर उत्तर दिशा की ओर मुख कर शुद्ध वस्त्र धारण कर बैठें। सामने गुरु चित्र को स्थापित कर धूप, दीप, पुष्प, कुंकुम, अक्षत से संक्षिप्त पूजन करें। फिर **'निखिल चैतन्य मंत्रों से सिद्ध पारद गुरु यंत्र'** को किसी पात्र में पुष्पासन देते हुए स्थापित करें। यंत्र के पास **'अघोर गुटिका'** को स्थापित करें। हाथ में जल लेकर साधना में प्रवृत्त होने का संकल्प लें।

अंगन्यास

ॐ हृदयाय नमः	(हृदय)
ॐ भूः शिरसे स्वाहा	(सिर)
ॐ भुवः शिखायै वषट्	(चोटी)
ॐ स्वः कवचाय हुं	(दोनों बाहें)
ॐ भूर्भुवः स्वः नेत्रत्रयाय वौषट्	(दोनों नेत्र, आज्ञा चक्र)
ॐ भुर्भूवः स्वः अस्त्राय फट्	(3 बार ताली बजाएं)

इसके बाद गुरुदेव का शिव रूप में ध्यान करें -

ॐ नमः शिवाय गुरवे सच्चिदानन्द मूर्तये।
निष्प्रपञ्चाय शान्ताय निरालम्बाय तेजसे॥

देवाधिदेव सर्वज्ञ सच्चिदानन्द लक्षण।
उमा रमण भूतेश प्रसीद करुणानिधे॥
ॐ गुरुदेवाय तत्पुरुषाय नमः।

निम्न संदर्भ बोलते हुए यंत्र, गुटिका को स्नान कराएं।

ॐ आपो हिष्ठा मयो भुवस्तान ऊर्जे दधातन महेरणाय चक्षसे। यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयते हनः उशतीरिव मातरः तस्मा अरङ्ग मामव यस्य क्षयाय जिन्वय आपो जनयथा च नः।

श्री गुरुदेवाय स्नानं समर्पयामि नमः।

वस्त्रं समर्पयामि नमः। तिलकं समर्पयामि नमः। अक्षतान् समर्पयामि नमः। धूपं दीपं दर्शयामि नमः।

नैवेद्यं

भालचन्द्र नमस्तुभ्यं विघ्नहृत मंगलप्रद,
नानाविधं गृहाणेदं नैवेद्यं कृपया प्रभो।
श्रीगुरुदेवाय नैवेद्यं निवेदयामि नमः।

फिर आचमन कराएं एवं दक्षिणा द्रव्य अर्पित करें -

इदं आचमनीयं, दक्षिणा द्रव्यं समर्पयामि श्री गुरु चरणकमलेभ्यो नमः।

अपने जीवन की समस्त बाधाओं एवं मन के विकारों, दोषों, पापों की समाप्ति व आनन्द की स्थिति प्राप्त करने हेतु कुंकुम एवं अक्षत को निम्न मंत्र बोलते हुए यंत्र पर चढ़ाएं -

ॐ अघोराय नमः। ॐ पशुपतये नमः। ॐ शर्वाय नमः। ॐ विरूपाक्षाय नमः। ॐ विश्वरूपिणे नमः। ॐ त्र्यम्बकाय नमः। ॐ कपर्दिने नमः। ॐ भैरवाय नमः। ॐ शूलपाणये नमः। ॐ ईशानाय नमः। ॐ सच्चिदानन्दाय नमः। ॐ निखिलेश्वराय नमः।

फिर **'सफेद हकीक माला'** से निम्न मंत्र की 1 माला 14 दिन तक करें -

॥ ॐ शं शंकराय लोकरञ्जनाय निखिलेश्वराय नमः॥

मंत्र जप के पश्चात् नीचे दिए स्तोत्र का पाठ करें।

मनो बुद्ध्यहंकार चित्तानि नाहं,
न च श्रोत्रजिह्वे न च घ्राणनेत्रे।
न च व्योम भूमिर्न तेजो न वायुः
निखिल सत्य रूपः शिवोऽहं शिवोऽहं ॥१॥

न च प्राणसंज्ञो न वै पंचवायु
र्न वा सप्तधातुर्न वा पंचकोशः।
न वाक् पाणिपादं न चोपस्थापायू,
निखिल सत्य रूपः शिवोऽहं शिवोऽहं ॥२॥

न मे द्वेष रागौ न मे लोभं मोहौ,
मदो नैव मे नैव मात्सर्य भावः।
न धर्मो न चार्थो न कामो न मोक्षः
निखिल सत्य रूपः शिवोऽहं शिवोऽहं ॥३॥

न पुण्यं न पापं न सौख्यं न दुःखं
न मंत्रो न तीर्थं न वेदा न यज्ञः।
अहं भोजनं नैव भोज्यं न भोक्ता
निखिल सत्य रूपः शिवोऽहं शिवोऽहं ॥४॥

न मृत्युर्न शंका न मे जाति भेदः,
पिता नैव मे नैव माता च जन्म।
न बन्धुर्न मित्रं गुरुर्नैव शिष्यः,
निखिल सत्य रूपः शिवोऽहं शिवोऽहं ॥५॥

अहं निर्विकल्पो निराकार रूपो,
विभुत्वाच्च सर्वत्र सर्वेन्द्रियाणाम्।
न चासंगतं नैव मुक्तिर्न मेयं,
निखिल सत्य रूपः शिवोऽहं शिवोऽहं ॥६॥

दो सप्ताह तक इस क्रम को नित्य करें, फिर यंत्र को पूजा स्थान में स्थापित कर अन्य सामग्री को जल में विसर्जित कर दें।

साधना सामग्री - 360/-

गुरू हमारी आतमा गुरू हमारी जाति

विश्व में सर्वश्रेष्ठ चित्रकार चीन देश के माने गए हैं और आज से सैकड़ों वर्ष पहले भी उन्होंने केवल कूची और रंगों से जिस प्रकार के सजीव प्राकृतिक चित्र बनाए थे, उनकी बराबरी तो शायद आज के अतिविकसित सूक्ष्म फोटोग्राफिक कैमरे भी नहीं कर सकते। एक-एक चित्र देख कर ऐसा लगता है, कि मानों हम किसी चित्र के सामने नहीं खड़े हैं, वरन् उसी वातावरण में खड़े हैं।

इसका रहस्य उन चित्रकारों की कूची में नहीं वरन् उनके चिन्तन में छिपा है। प्राचीन समय में एक चीनी चित्रकार को केवल कूची और रंग देकर ही चित्रकारी नहीं सिखाई जाती थी, अपितु उस चित्रकार को उसके गुरु किसी भी एक वस्तु (यथा पेड़, फूल आदि के समक्ष बैठा देते थे और कहते थे, कि वह भी वही वस्तु है। जिन क्षणों में चित्रकार को अपने व उस वस्तु (object) में भेद समाप्त होता प्रतीत होता था, उसी क्षण वह कूची उठाकर 'निर्माण' कर देता था। यही उनकी विलक्षणता का रहस्य है। इसका मर्म उनके धर्म अर्थात बौद्ध धर्म में मिलता है, जहां 'ध्यान' को ही जीवन की सर्वोच्चता माना गया।

यही मर्म किसी भी सृजन का आधार हो सकता है। यही साधना का मर्म भी है और ईश्वर से एकाकार होने का भी। निहारते रहना और तब तक निहारते रहना जब तक कि 'स्व' का बोध लुप्तप्राय न हो जाए, इसके बिना किसी भी साधना में सफलता मिल ही नहीं सकती, न ही 'गुरु' से साक्षात हो सकता है।

योगीजन आंख बंद कर इसी स्थिति को तो प्राप्त करने की चेष्टा में निरन्तर रत रहते हैं। इसी को शास्त्रों में तद्रूपावस्था (किसी वस्तु के अनुसार हो जाना) कहा गया है और यही चैतन्य समाधि की पूर्णता भी है।

साधक निरन्तर इसी अवस्था को प्राप्त करने के लिए चेष्टारत रहता है, क्योंकि यह तो एक स्वतः स्फूर्त क्रिया है। साधना के मार्ग में प्रवेश करने के बाद वह कुछ ऐसा अनोखा स्वाद चख लेता है, कि निरन्तर उसी की प्राप्ति के लिए सचेत हो जाता है। इसके लिए उसे किसी प्रकार से बताने की आवश्यकता नहीं, किन्तु व्यावहारिक रूप से न तो यह सम्भव है, कि कोई साधक घर-परिवार छोड़कर केवल गुरु चरणों में ही बैठा रह जाए और न ही यही सम्भव है, कि वह उनका चित्र सामने रख कर उसे घण्टों निहारता रहे।

पूज्यपाद गुरुदेव ने सदैव ऐसी अति भावुकता पर आघात किया है और इसे जीवन की सर्वोच्चता नहीं माना है। किन्तु साधक, साधना पथ पर प्राथमिक सोपान पूर्ण करने के बाद एकाएक जब 'अमृत' को चख लेता है, तो अपने आप पर नियन्त्रण रख ही नहीं पाता और दिन-रात उसी खुमारी में डूबे रहना चाहता है। उसका लक्ष्य होता है, कि वह ऐसे अमृतत्व की पहचान कर शीघ्रातिशीघ्र उसमें विलीन हो जाए।

साधना की दृष्टि से यह स्थिति श्रेष्ठ भी मानी गई है, क्योंकि यही तो जीवन का लक्ष्य भी है, किन्तु अव्यावहारिक होने के कारण प्रश्रय योग्य भी नहीं मानी गई है। ये द्वन्द्वात्मक विचार साधक को इस प्रकार ग्रसित कर लेते हैं, कि उसका खिन्न रहना प्रारम्भ हो जाता है तथा बात-बात में क्रोधित होकर अपना आन्तरिक सन्तुलन ही नष्ट कर देता है।

बाह्य जगत एवं आन्तरिक जगत का यह द्वन्द्व उसे उसकी प्रगति में बाधित करना प्रारम्भ कर देता है और फलस्वरूप कभी तो साधक साधना के मर्म को ढूंढ़ने के लिए दौड़ता है, तो कभी व्यावहारिक जीवन को सफल बनाने के लिए, और इस उहापोह में वह कहीं का भी नहीं रह जाता। उसे समझ में ही नहीं आता, कि सत्य क्या है और श्रेष्ठ क्या है तथा इसी अज्ञानता के कारण वह कभी साधना को ही गलत ठहराने लगता है, तो कभी अपने भाग्य को दोष देना प्रारम्भ कर देता है।

किन्तु साधना का पथ कोई अंधा पथ नहीं होता, जिसमें केवल अनुमानों एवं समीकरणों के आधार पर लक्ष्य निश्चित किया जाए। इसी मर्म में सांसारिक जीवन की ही भांति जोड़-तोड़ से कुछ भी नहीं प्राप्त हो सकता अपितु स्थिर मन से, शांत चित्त से प्रत्येक स्थिति की विवेचना करनी पड़ती है और वह मार्ग ढूंढ़ना पड़ता है, जो सामञ्जस्य युक्त हो। इसी सामञ्जस्य को भगवान बुद्ध ने 'मज्झिम पतिपदा' अर्थात 'मध्यम मार्ग' की संज्ञा दी थी। प्रत्येक गृहस्थ साधक को भी 'मध्यम मार्ग' का ही अनुसरण करना होता है, क्योंकि उसके सामने संन्यासी शिष्यों की भांति केवल एक लक्ष्य ही नहीं अपितु कई लक्ष्य होते हैं।

एक गृहस्थ साधक भी अपने दैनिक एवं नियमित जीवन को व्यवधान में डाले बिना 'गुरु' को उसी प्रकार निहारने का अधिकारी होता है, जिस प्रकार एक संन्यासी शिष्य और इसी प्रकार 'निहारते-निहारते' वह भी अपने जीवन को वही परिपूर्णता प्रदान कर सकता है, जो कि अन्यथा संन्यासी शिष्यों के प्रारब्ध की विषय वस्तु समझी जाती है।
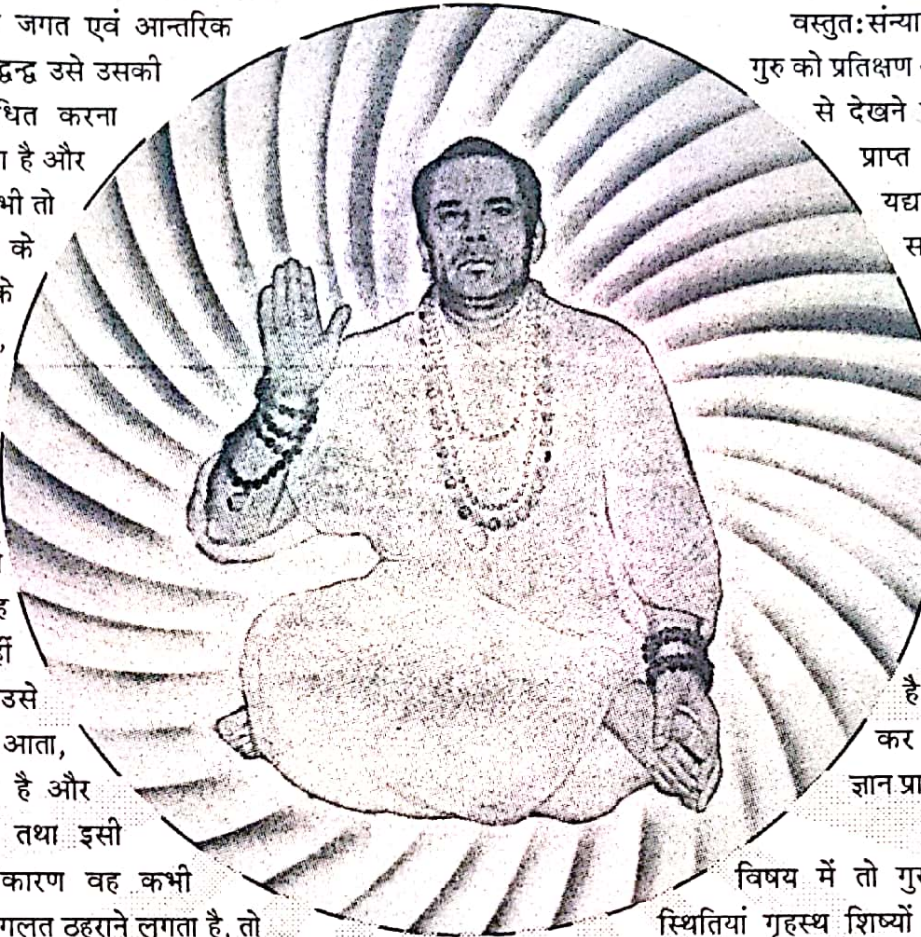
वस्तुतः संन्यासी शिष्य भी अपने गुरु को प्रतिक्षण अपने चर्म चक्षुओं से देखने का सौभाग्य नहीं प्राप्त कर सकता है, यद्यपि उसके विषय में सामान्य धारणा यही होती है, कि वह अन्य सभी दायित्वों से मुक्त रहने के कारण निर्द्वन्द्व होकर जब चाहे, जिस प्रकार से चाहे अपने गुरु के समीप बैठ सकता है, उनसे वार्तालाप कर सकता है अथवा ज्ञान प्राप्ति कर सकता है। संन्यासी शिष्यों के विषय में तो गुरु की आज्ञा एवं स्थितियां गृहस्थ शिष्यों की अपेक्षा कहीं अधिक कठोर होती हैं और गृहस्थ शिष्य तो फिर भी सौभाग्यशाली हैं, कि उन्हें कुछ विशेष अवसरों पर साधना शिविरों आदि के माध्यम से गुरु के समक्ष उपस्थित होने का सौभाग्य मिल जाता है, किन्तु संन्यासी शिष्यों के भाग्य में ये अवसर भी सुलभ नहीं होते। उन्हें पूज्यपाद गुरुदेव के समक्ष उपस्थित होने का अवसर तो कई-कई वर्षों में एक बार ही मिल पाता है।

इसके पीछे गुरुदेव का अत्यन्त गूढ़ चिन्तन होता है, जिसे सार्वजनिक नहीं किया जा सकता, किन्तु फिर भी वे शिष्य, जैसा कि पूज्य गुरुदेव ने स्वयं कहा है— "...अनोखी मस्ती में भरे प्रतिक्षण नृत्ययुक्त ही रहते हैं, उन्होंने आनन्द का अनोखा अमृत चख लिया होता है।"

यह स्थिति तब ही आ पाती है, जब शिष्य को 'गुरु को निहारने' की कला का ज्ञान हो गया हो।

'निहारना' ही तो साधना का मर्म है। यह स्थिति जीवन में सौभाग्य से तब आ पाती है, जब शिष्य या साधक ज्ञान के सभी चरण पूर्ण कर चुका होता है, साधना से भी ऊपर उठ चुका होता है तथा उस तत्त्व को ज्ञात कर चुका होता है,

जो केवल आत्मचक्षुओं से दर्शन करने योग्य हो।

यदि इसे और स्पष्ट शब्दों में कहें, तो यह देह से ऊपर उठकर प्राण तत्त्व में जाने की स्थिति है तथा शिष्य स्वयं प्राण स्वरूप बनता हुआ पूज्य गुरुदेव के प्राणमय स्वरूप को पहचानने की स्थिति में आने लगता हैं।

गुरुदेव का प्राणमय स्वरूप ही तो समस्त ब्रह्माण्ड में विस्तृत है, देह तत्त्व से तो वे भी सामाजिक मर्यादाओं में बंधे हैं।

हमने गुरु से
जीना सीखा है,
पैरों में लिपट कर
उनके चरणों को आंसुओं से
भिगो देने की क्रिया सीखी है,
पूरे आकाश में छा जाने की विद्या सीखी है,
रोम रोम में बस जाने की युक्ति अपनाई है . . .
क्योंकि 'गुरु तत्व साधना'
मात्र साधना नहीं . . .
एक स्वर्णिम अवसर है
इस जीवन का,
सिद्धाश्रम प्राप्त कर लेने का
एक क्षण है
और सब कुछ प्राप्त कर लेने की पवित्रता है,
श्रेष्ठता है,
दिव्यता है
सर्वोच्चता है
और
सम्पूर्णता है . . .

हुए भी वे वस्तुतः सूक्ष्म और 'प्राण' ही हैं, किन्तु साधक को स्वयं प्राणमय बनना होता है, तभी वे उसे आभासित हो पाते हैं। जिस प्रकार पूज्य गुरुदेव ने अपने एक प्रवचन में स्पष्ट किया है — ''केवल जल में ही जल मिल पाता है''। ठीक उसी प्रकार गुरु के प्राणमय स्वरूप को देखने के लिए स्वयं भी प्राणमय हो जाना पड़ता है।

जीवन की यह कला वास्तव में स्थूल से सूक्ष्म की ओर अग्रसर होने की क्रिया है तथा इस प्रकार की क्रियाएं केवल तत्त्व-ज्ञान से ही समझी जाने योग्य हैं। जिन्हें केवल स्थूल में ही रहने की आदत पड़ गई हो, जो ज्ञान की कोई भी बात चलते ही उपेक्षा से मुंह बिचका देते हों अथवा जिन्हें गुरुदेव के स्थूल स्वरूप (या भौतिक स्वरूप) के समक्ष ही तथाकथित रूप से आत्मनिवेदन करने में संतुष्टि मिलती हो, यह साधना ऐसे साधकों या भक्तों की अपेक्षाओं पर खरी नहीं उतर सकती और न ही उन्हें इस साधना में प्रवेश कर किसी चमत्कार की आशा करनी चाहिए।

ईश्वर अपने विशाल (विराट) स्वरूप में धरती से आकाश तक लम्बे नहीं हो जाते, जैसा कि अनेक चित्रित करते हैं, वरन वे प्रत्येक स्थान पर ही आभासित होने प्रारम्भ हो जाते हैं। यही हमारी प्राचीन मान्यता, कि 'ईश्वर कण-कण में निवास करते हैं' का मर्म है।

गुरुदेव तो प्रत्येक दशा में प्राणमय स्वरूप में अवस्थित हैं ही। यहां तक कि स्थूल देह से आवद्ध प्रतीत होते

प्राणमय होने का अर्थ प्रायः साधक यह लगा लेते हैं, कि 'अन्नमय कोश का त्याग' अर्थात् भोजन-जल छोड़कर ही प्राणमय स्वरूप में अवस्थित हुआ जा सकता है। किन्तु यह धारणा सर्वथा असत्य है, क्योंकि प्राणमयता की दशा तो मानस की एक दशा विशेष होती है, जब कि स्थूल देह रहते हुए भी सूक्ष्म का आभास किया ही जा सकता है। प्राणमयता प्राप्त करने के लिए भोजन-जल छोड़ने की आवश्यकता नहीं होती, अपितु उचित व श्रेष्ठ साधना का अवलम्बन लेना होता है। भोजल-जल जब छूटना होता है, तब स्वतः ही छूट जाता है। उसके पहले इस प्रकार की चेष्टा करने का अर्थ है, केवल अपना विध्वंस।

वस्तुतः तत्त्व साधना ही वह प्रकार होता है, जिसके माध्यम से साधक न केवल अपने गुरुदेव का वरन किसी भी देवी अथवा देवता का भी साक्षात करने में समर्थ हो पाता है।

प्रारम्भ में प्रत्येक साधना को उसकी मूल साधना विधि के रूप में करना होता है, तत्पश्चात उसकी 'तत्त्व साधना' सम्पन्न करनी होती है तथा सबसे अंत में 'प्रत्यक्षीकरण की साधना' सम्पन्न करनी होती है। यह एक सम्पूर्ण क्रम है और इसका उल्लंघन सम्भव ही नहीं।

गुरु साधना के विषय में महत्त्वपूर्ण बात यह है, कि

इसमें गुरुदेव प्रारम्भ से ही 'प्रत्यक्ष' रहते हैं और तत्त्व साधना करने के उपरान्त प्राय: प्रत्यक्षीकरण साधना करने की आवश्यकता शेष नहीं रह जाती। कम से कम इस युग के साधकों को तो 'प्रत्यक्षीकरण साधना' करने की आवश्यकता नहीं है, किन्तु तत्त्व साधना करने की नितान्त आवश्यकता तो है ही। यह आवश्यकता क्यों है, इस बात का विवेचन इस लेख के प्रारम्भ में किया ही गया है।

गुरु तत्त्व साधना करने के उपरान्त ही साधक और विशेष रूप से गृहस्थ साधक उस दशा में आ सकता है, जहां उसके मन से विविध द्वन्द्व एवं भ्रम समाप्त हो सकें। गुरु तत्त्व साधना करने के उपरान्त ही उसे प्रथम बार गुरुदेव की उपस्थित का प्रतिक्षण आभास होना प्रारम्भ होता है तथा उसके आत्मचक्षुओं के समक्ष उसके गुरु का बिम्ब प्रतिक्षण इस प्रकार से एक आनन्दमयता के साथ उपस्थित रहता है, कि वह (साधक) प्रतिक्षण निश्चिन्त व निर्भिक रहते हुए भी अपने कर्त्तव्यों की पूर्ति में संलग्न हो जाता है। जब तक साधक को इस प्रकार का 'आभास' नहीं होता, केवल तभी तक वह संतप्त, दु:खी, खिन्न, उदास एवं पीड़ित बना रहता है। इस 'आभास' के बाद यह सम्भव ही नहीं, कि साधक को कोई क्लेश रह जाए।

मैंने यहां जानबूझ कर 'आभास' शब्द का प्रयोग किया है, क्योंकि इस साधना के द्वारा शिष्य को अपने गुरु की उपस्थिति विविध उपायों से प्रतिक्षण अपने समीप अनुभव मात्र ही होती है, अत: जो 'अनुभूति' प्राप्त करने के इच्छुक साधक हों अर्थात् जो समझते हों, कि गुरुदेव 'साक्षात' उपस्थित हो जायेगें, उन्हें इस साधना में निराशा ही अनुभव होगी। इसका सहज कारण केवल यही है, कि प्राणमय स्वरूप की तो केवल इसी 'आभास' के माध्यम से प्रतीति की जा सकती है। स्थूल नेत्रों के माध्यम से तो केवल स्थूल रूप ही देखा जा सकता है।

गुरु तत्त्व साधना का महत्त्व बाह्य नहीं अपितु आन्तरिक ही अधिक है। जब साधक आन्तरिक पक्ष को परिपूर्ण कर लेता है, तभी बाह्य लाभ को प्राप्त करने का भी अधिकारी बन पाता है।

यथार्थ साधक तो वही है जो गुरुदेव से सम्बन्धित कोई भी साधना प्राप्त होते ही सम्पन्न कर डालता है, क्योंकि अन्य साधनाओं के रहस्य तो फिर भी सहज उपलब्ध हो सकते हैं, किन्तु गुरु साधना के रहस्य उपलब्ध होना सौभाग्य की ही बात होती है।

अनेक कसौटियों पर कसने के बाद, अनेक रूप से सुनिश्चित करने के बाद ही वे इस प्रकार के साधना रहस्यों को सार्वजनिक करने की अनुमति कृपा पूर्वक प्रदान करते हैं, क्योंकि जिसने गुरु साधना ही सम्पन्न कर ली, उसी में दक्षता भी प्राप्त कर ली, उसके लिए फिर असम्भव रह भी क्या गया?

इसी कारणवश जहां इस प्रकार की साधनाओं से जीवन के अनेक पक्षों की पूर्णता सम्भव है, वहीं अनेक गम्भीर परिणाम भी तो सम्भव हैं, क्योंकि गुरु तत्त्व साधना सम्पन्न करने के बाद साधक का 'तृतीय नेत्र' जाग्रत होने की अवस्था में आ जाता है, फलत: वह किसी के भी भूत-भविष्य-वर्तमान को इस प्रकार से 'पढ़' सकता है मानों उसके सामने लिखी कुछ पंक्तियां हों।

साधक स्वयं ही कल्पना कर सकते हैं, कि

'गुरु' एक शब्द नहीं . . .
कुछ अक्षर नहीं . . .
एक सम्पूर्णता है,
जीवन की मिठास है,
देह को ऊपर उठाने की क्रिया है,
जहर को अमृत बना देने का गोपनीय रहस्य है . . .
अगर शरीर में से
प्राण ही चला जाय
तो फिर पीछे रहेगा ही क्या?
और अगर हमारे श्वांस में से
'गुरु' शब्द ही मिट गया,
तो फिर हमारे जीवन में
रहा ही क्या?

ऐसी स्थिति प्राप्त कर कितना अधिक कल्याण किया जा सकता है। अपने ढंग से निश्चित कर लेने के बाद भी इस साधना को प्रकट करने का तात्पर्य कदाचित पूज्य गुरुदेव की दृष्टि में इतना ही है, कि इस संक्रमण काल में उनकी ओर से कोई न्यूनता न रह जाए अन्यथा अपवादों का सामना तो युग पुरुष आद्य शंकराचार्य जैसे व्यक्तियों तक को करना पड़ा है।

'गुरु तत्त्व साधना' मूलतः **किसी भी एक गुरुवार से अगले गुरुवार तक** की जाने वाली साधना है, किन्तु साधक इसे **पुष्य नक्षत्र (गुरु पुष्य), गुरु पूर्णिमा अथवा गुरु जन्म दिवस (21 अप्रैल 97)** से भी प्रारम्भ कर सकता है।

इस विशेष अलौकिक साधना में मुख्य स्थान साधक की आंतरिकता का है। वह जितनी भावनापूर्वक और जितनी एकाग्रता से इस साधना को सम्पन्न करेगा, उतनी ही जल्दी इसमें सफलता भी प्राप्त कर लेगा। एकाग्रता के अतिरिक्त आंतरिक व बाह्य पवित्रता का भी विशेष महत्त्व है।

साधक इन सात दिनों में यथासम्भव कम वार्तालाप करें, ब्रह्मचर्य का पालन हो तथा भोजन आदि के विषय में पर्याप्त संयम की स्थिति रहे।

साधना सामग्री के रूप में इस साधना विशेष के रूप में केवल '**पारद गुरु यंत्र**' का ही प्रयोग किया जाता है, अन्य किसी भी सामग्री की आवश्यकता नहीं होती।

साधक उचित दिवस पर श्वेत वस्त्र धारण कर श्वेत आसन पर पूर्व मुख होकर बैठें। इस दुर्लभ यंत्र को अपने समक्ष किसी श्वेत वस्त्र पर चावलों की ढेरी बनाकर स्थापित करें। यदि साधक को आम की लकड़ी का बाजोट मिल सके, तो वह उस पर ही वस्त्र बिछा कर चावलों की ढेरी पर इसे स्थापित करें एवं घी का दीपक प्रज्वलित कर लें। उसके पास **पूज्यपाद गुरुदेव का चित्र** होना आवश्यक है, जिसे वह यंत्र के पीछे स्थापित कर दे।

यह प्रातःकाल ब्रह्म मुहूर्त की साधना है और शान्त भाव से यंत्र पर त्राटक करते हुए अनुमान से आधा घंटा निम्न मंत्र का जप करना होता है—

गुरु तत्त्व मंत्र

।। ॐ मम् आत्मप्राण चिन्त्य जाग्रय दर्शय गुं स्फोटय फट्।।

OM MAM AATMAPRAN CHINTYA JAGRAY DARSHAY GUM SPHOTAY PHAT

मंत्र जप को अत्यन्त मधुरता के साथ एवं गुंजरण के रूप में करें। प्रत्येक मंत्र दूसरी बार के उच्चारण के साथ एक प्रकार से जुड़ा ही रहे। अटक-अटक कर, हिल-डुल कर, जोर-जोर से बोल कर अथवा आलस्य के साथ मंत्र जप करने का कोई अर्थ नहीं होता।

साधना की समाप्ति पर यंत्र को किसी स्वच्छ कपड़े से ढंक दें एवं अगले सात दिनों तक यही क्रम बनाए रखें। ध्यान रखें, प्रथम दिन जिस समय पर साधना प्रारम्भ की है, अन्य सभी दिनों में भी उसी समय पर साधना प्रारम्भ करें। यदि इसमें चूक हो जाए, तो साधना को खण्डित मान कर पुनः नये ढंग से प्रारम्भ करें।

साधना के प्रारम्भ एवं अंत में श्वेताभ माला से गुरु मंत्र का जप करके उसी माला को गले में धारण करने से फल द्विगुणित हो जाता है। पारद गुरु यंत्र को संभाल कर रख लें। यह विसर्जित नहीं किया जाता। न्यौछावर—300/-

गुरु तो एक धड़कन है...
एक मस्ती है...
एक तरंग है...
एक स्रोत है सम्पूर्णता का...
ब्रह्माण्ड को पा लेने का
रहस्य है...
और मल-मूत्र से भरी हुई
देह को प्राणमय...
सुगन्धमय
बना लेने की क्रिया है...
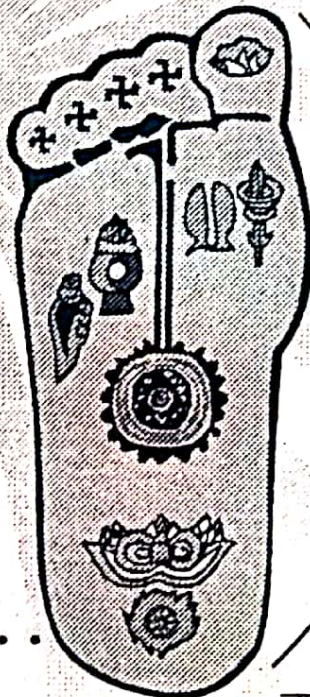
अथर्ववेद में वर्णित
तांत्रोक्त गुरु साधना

समस्त दोषों का निवारण होता है अथर्ववेद में वर्णित तंत्र की इस गुरु साधना से। पत्रिका में समय-समय पर गुरु साधना से सम्बन्धित लेख एवं रहस्य प्रकाशित किए जाते रहे हैं, जिनका सजग पाठकों ने उपयोग कर यह अनुभव किया कि वास्तव में अनेक उपायों को अपनाने की अपेक्षा यदि केवल गुरु साधना ही सम्पन्न कर ली जाए तो जीवन में भोग व मोक्ष दोनों सहज ही प्राप्त हो जाते हैं।

प्रस्तुत है अथर्ववेद में वर्णित ऐसी ही एक गोपनीय तांत्रोक्त गुरु साधना . . .

गुरु शब्द जितना पावन है उतना ही प्राचीन भी। प्रारम्भिक साहित्य से ही श्री गुरु सम्बन्धित उल्लेख एवं सम्बन्धित दुर्लभ साधनाएं मिलनी प्रारम्भ हो जाती हैं। हमारे प्रारम्भिक ग्रंथ वेदों में भी श्री गुरु से सम्बन्धित विस्तृत विवरण प्राप्त होते हैं। **भावनोपनिषद्** में स्पष्ट उल्लेख है -

श्रीगुरुः सर्वकारणभूता शक्तिः तेन नवरन्ध्ररूपो देहः।।

अर्थात् समस्त क्रियाओं की कारणभूत शक्ति श्री गुरुदेव ही हैं और उनके साथ नवरंध्र रूप देह अभिन्न है।

तंत्र शास्त्र में गुरु को तीन स्वरूपों में माना गया है। **१. दिव्य २. सिद्ध ३. मानव**। मनुष्य के शरीर में स्थित नवरंध्र श्री गुरुदेव के इन्हीं तीन रूपों से संबंधित हैं, अर्थात् मनुष्य की देह में स्थित नवरंध्र ही श्रीगुरु देव के दिव्यौघ, सिद्धौघ एवं मानवौघ रूप में स्थित हैं। इसका और सूक्ष्म विवेचन इस प्रकार है कि वास्तव में श्री गुरुदेव प्रत्येक जीव के शरीर में अव्यक्त रूप में स्थित हैं ही, आवश्यकता है तो केवल सही साधना के द्वारा उनको जाग्रत कर अपने जीवन को सभी प्रकार से आध्यात्मिक उन्नति की

ओर अग्रसर कर लेने की।

प्रत्येक साधना के लिए कुछ न कुछ दिवस निर्धारित होते ही हैं और ऐसे ही दिवसों में प्रमुख दिवस है पाप मोचन दिवस जो इस वर्ष १८.०२.९४ को पड़ रहा है। मानव अपने जीवन में बहुत प्रयास करता है भौतिक रूप से कोई कोर कसर बाकी नहीं रहने देता, लेकिन पूर्व जन्म कृत दोष और वर्तमान जीवन के दोष उसे उन्नति नहीं करने देते। इन सभी दोषों और पापों को समाप्त करने के लिए गुरु साधना के अतिरिक्त कोई अन्य साधना है ही नहीं। क्योंकि जिस ब्रह्मतेज के अंश के द्वारा व्यक्ति का समस्त जीवन प्रकाशित हो सकता है, समस्त पापों की कालिमा धुल सकती है वह ब्रह्मतेज का साकार पुंज केवल श्री गुरुदेव के माध्यम से ही व्यक्ति के जीवन में स्पष्ट होता है और फिर व्यक्ति सहज ही वह सब कुछ प्राप्त कर लेता है, जो उसके जीवन में भी हो। एक बात निश्चित है कि बिना आध्यात्मिक उन्नति के, भौतिक उन्नति की कल्पना करना ही व्यर्थ है। जब तक हमारा यह आध्यात्मिक जीवन नहीं संभलेगा तब तक भौतिक रूप से श्रेष्ठता प्राप्त करने की बात ही बेमानी है। इन सभी तथ्यों का निचोड़ है अथर्ववेद में वर्णित तंत्र की यह दुर्लभ गुरु साधना।

तांत्रिक ग्रंथों में गुरु देव के नौ रूप वर्णित किए गए हैं- **१. श्री उन्मनाकाशानंदनाथ, २. श्री समनाकाशानंदनाथ, ३. श्री व्यापकानंद नाथ, ४. श्री शक्त्याकाशानंदनाथ, ५. श्रीध्वन्याकाशानंदनाथ, ६. श्री ध्वनिमात्राकाशानंदनाथ, ७. श्री अनाहताकाशानंदनाथ, ८. श्री बिन्द्वाकाशानंदनाथ और ९. श्री इन्द्वाकाशानंदनाथ**। इनमें से प्रथम तीन श्री गुरुदेव के दिव्यौघ स्वरूप, द्वितीय तीन सिद्धौघ स्वरूप एवं अंतिम तीन मानवौघ स्वरूप के रूप में वर्णित किए गए हैं। इन्हीं नौ स्वरूपों की साधना से सम्पूर्ण रूप से श्री गुरुदेव का प्रकटीकरण एवं उनकी दिव्य व अलौकिक शक्तियों का प्रादुर्भाव अपने जीवन में किया जा सकता है। यह हमारा सौभाग्य है कि हमें वर्ष के प्रारम्भ में ही एक ऐसा श्रेष्ठ अवसर मिल रहा है जबकि हम ऐसी अद्वितीय साधना सम्पन्न कर, केवल

वेदों तथा उपनिषदों का सारभूत तथ्य ही है गुरु के साथ "एक प्राणता" और गुरु कृपा की प्राप्ति ही 'गुरु साधना' में सिद्धि प्रदायक है. . .

--हिमालय का सिद्ध योगी

वर्ष को ही नहीं अपितु अपने सम्पूर्ण जीवन को सफल बना सकते हैं।

श्री गुरु साधना जीवन की आधारभूत साधना है। तांत्रोक्त रूप से गुरु साधना करने के पश्चात् किसी अन्य साधना की आवश्यकता शेष रह ही नहीं जाती। गुरु साधना अपने आप में केवल एक सिद्धि नहीं, वरन स्वयं में ५१ सिद्धियों को समाहित किए एक सम्पूर्ण जीवन पद्धति है।

श्री गुरु साधना को इस पापमोचनी दिवस के दिन साधक को हर हालत में सम्पन्न कर, अपने आगामी जीवन के लिए एक श्रेष्ठ आधारशिला रखनी ही चाहिए। प्रातः उठकर अपने सामने सफेद वस्त्र बिछा कर, उस पर सफेद धोती पहन कर बैठें और ताम्र पत्र पर अंकित पूज्य गुरुदेव के चित्र युक्त गुरु यंत्र को स्थापित करें। इस विशेष यंत्र को अथर्ववेद के सूक्तों द्वारा प्राण-प्रतिष्ठित किया गया हो। उसमें जहां एक ओर मानव रूप में पूज्यगुरुदेव का चित्र अंकित होता है, वहीं सिद्ध रूप में गुरु यंत्र अंकित होता है एवं उनके संयुक्त प्रभाव से दिव्य स्वरूप अव्यक्त रूप से स्पष्ट होता है। यंत्र को तांबे के पात्र अथवा चावलों की ढेरी अथवा सुगन्धित पुष्प की पंखुड़ियों पर सम्मान पूर्वक स्थापित करें। इसके आगे एक रेशमी वस्त्र पर नवनाथ गुटिकाएं स्थापित करें। सामने घी का दीपक जला दें एवं वातावरण को सुगन्धित द्रव्यों धूप आदि से पवित्र कर तीन बार ॐकार ध्वनि कर अन्तः व बाह्य को पवित्र कर लें। हाथ में जल लेकर संकल्प करें कि मैं अमुक (अपना नाम), अमुक गोत्र का साधक पापमोचन दिवस के दिन अपने पूर्वजन्म कृत और इस जन्म कृत समस्त ज्ञात व अज्ञात दोषों की शांति के लिए और जीवन में नया अध्याय प्रारम्भ करने के लिए श्री गुरुदेव को साक्षीभूत रखते हुए यह महत्वपूर्ण तांत्रोक्त साधना सम्पन्न कर रहा हूं -- ऐसा कह कर जल भूमि पर छोड़ दें तथा यंत्र पर हाथ रख उसका अपने प्राणों से निम्न मंत्र के द्वारा संपर्क एवं सम्बन्ध स्थापित करें, जिससे श्री गुरुदेव की शक्तियां जीवन पर्यन्त प्राप्त होती रहें --

मंत्र

ॐ ह्रीं मम समस्त दोषान् निवारय ह्रीं फट्

इस मंत्र का २१ बार उच्चारण करें। उपरोक्त प्राण प्रतिष्ठाकरण एवं सम्पर्क के पश्चात् सामने जो नव

गुटिकाएं स्थापित की हैं, उनका केशर व चंदन से पूजन करें। और क्रम से उच्चारण करें।

ॐ श्री उन्मनाकाशानंदनाथ - जलं समर्पयामि
श्री समनाकाशानंदनाथ - गंगाजलं स्नानं समर्पयामि
व्यापकानंदनाथ - सिद्धयोगा जलं समर्पयामि
शक्त्याकाशानंदनाथ - चंदनं समर्पयामि
ध्वन्याकाशानंदनाथ - कुंकुमं समर्पयामि
ध्वनिमात्राकाशानंदनाथ - केशरं समर्पयामि
अनाहतकाशानंद नाथ - अष्टगन्धं समर्पयामि
विन्द्वाकाशानंदनाथ - अक्षतं समर्पयामि
द्वन्द्वाकाशानंदनाथ - सर्वोपचारार्थे समर्पयामि

उपरोक्त नवनाथ पूजन के उपरान्त पूज्यगुरुदेव का ध्यान करें-

द्विदल कमलमध्ये बद्धसंवित्समुद्रं धृतशिवमयगात्रं साधकानुग्रहार्थम् श्रुतिशिरसि विभान्तं बोधमार्तण्डमूर्तिम् शमिततिमिरशोकं श्रीगुरुं भावयामि हृदंबुंजे - कर्णिकमध्यसंस्थितं सिंहासने संस्थित दिव्यमूर्तिम्। ध्यायेद् गुरुं चंद्रशिलाप्रकाशं चित्पुस्तकाभीष्टवरं दधानम्।। श्री गुरुवे नमः ध्यानं समर्पयामि।।

उपरोक्त ध्यान के पश्चात् गुरु यंत्र का पूजन गंध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य और ताम्बूल इन छः उपचारों से करें तथा पुनः गुरुदेव से मानसिक रूप से प्रार्थना करते हुए निम्न मूल मंत्र का जप स्फटिक अथवा रुद्राक्ष की माला से करें --

मंत्र -

ॐ परम तत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः

उपरोक्त मंत्र का इस दिवस पर विधान ५१ माला मंत्र जप करने का है और जो साधक एक बार में मंत्र जप न कर सके वे २१ माला के बाद विश्राम ले सकते हैं। मंत्र जप के उपरान्त एक आचमनी में जल लेकर पूज्य गुरुदेव के श्री चरणों में अर्पित करने की भावना रखते हुए निम्न मंत्र जप के साथ भूमि पर छोड़ दे।

मंत्र

ॐ गुह्यातिगुह्य गोप्ता त्वं गृहाणास्मत् कृतं जपं। सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत् प्रसादान्महेश्वर।।

तंत्र के विधान में उपरोक्त मंत्र और यह पूजन अत्यन्त श्रेष्ठ और तुरंत फलदायक माना गया है। कई बार मंत्र जप के मध्य साधक को अपना शरीर ऐंठता हुआ लग सकता है। मन में विरोधी विचार आ सकते हैं, झुझंलाहट और एकदम से पूजन छोड़कर उठ जाने की भावन मन में आने लगती है किंतु भयभीत होने की अथवा विचलित होने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि शरीर स्थित पाप व दोष जब निकलेंगे तब वे विरोध तो प्रकट करेंगे ही। सम्पूर्ण पूजन के उपरांत कम से कम पांच माला मूल गुरुमंत्र का भी जप अवश्य करें।

।। ॐ परम तत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः।।

अंत में हाथ जोड़कर कृतज्ञता ज्ञापित करें कि मुझे पूज्य गुरुदेव की कृपा से ही एक ऐसा श्रेष्ठ प्रयोग प्राप्त हुआ तथा यह सम्पूर्ण पूजन उन्हीं को समर्पित है --

देवनाथ गुरौस्वामिन् देशिक स्वात्म नायकम् त्राहि त्राहि कृपासिन्धु पूजां पूर्णतराम् कुरु अनयापूजया श्री गुरुः प्रीयन्ताम् ॐ तत्सत् ब्रह्मार्पणम् अस्तु।

यह कह कर एक आचमनी जल अथवा श्रेष्ठ पुष्प, पूजन के समक्ष प्रदान करें तथा गुरु आरती सम्पन्न कर इस दिन का विशेष पूजन सफल समझें।

यह साधना केवल पूर्वजन्म कृत एवं इह जन्म कृत दोषों को समाप्त करने वाली साधना ही नहीं वरन जीवन के तीन प्रमुख ऋणों, मातृ ऋण, पितृ ऋण एवं गुरु ऋण को समाप्त करने की क्रिया भी है। इन ऋणों के हट जाने के उपरान्त व्यक्ति सहज रूप से अपने आप को दबावों से मुक्त समझता है। आज के युग में व्यक्ति जिस तरह तनाव और अनावश्यक रूप से चिंतित होने की बात कहता है अथवा जिनमें उलझ कर वह भटकता रहता है, इसका मूल कारण ये ऋण ही होते हैं। जिनका उपचार औषधियां या मनोवैज्ञानिक उपाय नहीं अपितु साधना की ऐसी श्रेष्ठ पद्धतियां ही होती हैं।

श्री गुरु-पूजन

अस्थि चर्म युक्त देह को ही गुरु नहीं कहते, अपितु इस देह में जो ज्ञान समाहित है, उसे 'गुरु' कहते हैं। इस ज्ञान-प्राप्ति के लिए उन्होंने जो तप और त्याग किया है, हम उन्हें नमन करते हैं, इस ऊर्ध्वमुखी ज्ञान-प्राप्ति से जो तेजस्विता प्राप्त हुई है, हम उसका अभिनन्दन करते हैं।

हमने ईश्वर को तो देखा नहीं, पर उसके सदृश्य गुरु को अवश्य देखा है, जो हमें पग-पग पर सावधान करता है, नित्य मार्गदर्शन देता है, विपत्तियों में धैर्य बंधाता है, कष्टों को सहन करने की क्षमता प्रदान करता है और मल-मूत्र से भरी देह को दिव्य आलोकित कर 'उस' ब्रह्म से लीन करने की सामर्थ्य प्रदान करता है, जो मानव का अन्तिम लक्ष्य है।

इसलिए शास्त्रों में 'गुरु' का महत्व सभी देवताओं से ऊंचा माना है, गुरु का पूजन सबसे पहले किया जाता है, गुरु की वन्दना ईश्वर से भी पूर्व शास्त्र सम्मत कही गयी है।

हमारे सुविज्ञ पाठकों की कामना थी कि हमने जहां पत्रिका के माध्यम से तांत्रोक्त गुरु पूजन की पद्धति स्पष्ट की है वहीं मांत्रोक्त गुरु पूजन की प्रामाणिक पद्धति भी स्पष्ट करें। उनके इसी आग्रह को ध्यान में रखते हुए गुरु पूर्णिमा के पावन माह में मांत्रोक्त पूजन की शास्त्रोक्त पद्धति प्रस्तुत की जा रही है जो गृहस्थ साधकों की जीवन चर्या के लिए सर्वाधिक अनुकूल तथा सदा -सदा से अनुगम्य रही है।

जिस प्रकार तांत्रोक्त गुरु पूजन में साधक को विशिष्ट सामग्रियों एवं यंत्र की आवश्यकता रहती है उसी प्रकार मांत्रोक्त साधना में साधक के पास ताम्र पत्र पर अंकित **गुरु यंत्र चित्र, स्फटिक** अथवा **रुद्राक्ष माला, गुरु चरण पादुका** एवं **सिद्धाश्रम गुटिका** की नितान्त आवश्यकता रहती है। मांत्रोक्त गुरु साधना में साधना सामग्री तांत्रोक्त पद्धति की अपेक्षा और भी अधिक महत्वपूर्ण होती है क्योंकि तंत्र की पद्धति में साधक एक बार फिर भी किसी विशिष्ट सामग्री के अभाव की पूर्ति अपने तप बल से कर सकता है किन्तु मांत्रोक्त पद्धति में उस अभाव की पूर्ति केवल यंत्र ही करते हैं।

प्राथमिक पूजन एवं आसन शुद्धि करने के पश्चात् गुरु यंत्र का संक्षिप्त पूजन कर, सुगन्धित अगरबत्ती एवं घी के दीपक प्रज्ज्वलित कर निम्न प्रकार से यह विशिष्ट साधना प्रारम्भ करें एवं जिस क्रम में क्रियाएं शीर्षक रूप में दी गई हैं उन्हें उसी रूप में सम्पन्न करें।

सर्वप्रथम पूज्यपाद गुरुदेव का ध्यान करें।

श्री गुरु ध्यान

द्विदल कमलमध्ये बद्धसंवित्समुद्रं
धृतशिवमयगात्रं साधकानुग्रहार्थम्।
श्रुतिशिरसि विभान्तं बोधमार्तण्डमूर्तिं
शमित तिमिर शोकं श्रीगुरुं भावयामि।।
हृद्यंबुजे कर्णिकमध्यसंस्थं
सिंहासने संस्थितदिव्यमूर्तिम्।
ध्यायेद् गुरुं चन्द्रशिलाप्रकाशं
चित्पुस्तकाभीष्टवरं दधानम्।।
श्रीगुरुचरणेभ्यो नमः ध्यानं समर्पयामि।

आह्वान

ॐ स्वरूपनिरूपण हेतवे श्री गुरवे नमः।
ॐ स्वच्छप्रकाशविमर्श-हेतवे श्रीपरमगुरवे नमः।
ॐ स्वात्माराम पञ्जरविलीनतेजसे श्रीपरमेष्टि
गुरवे नमः, आवाहयामि पूजयामि।

आसन

ॐ इदं विष्णुर् विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्।
समूढमस्य पा (गूं) सूरे स्वाहा।।
श्री गुरुचरणेभ्यो नमः आसनार्थे पुष्पं समर्पयामि।

चरणों में पुष्प चढ़ावें एवं सिद्धाश्रम गुटिका पर पूज्यपाद गुरुदेव के सूक्ष्म रूप में स्थापित होने की भावना दें।

पाद्य-स्नान

गुरु चरण पादुकाओं पर निम्न मंत्रोच्चार के साथ आचमनी से जल डालें एवं मंत्रोच्चार के पश्चात् पुनः आचमनी से जल अर्पित करें –

ॐ भद्रं कर्णेभिः श्रृणुयाम देवा भद्रं पश्ये-
माक्षभिर् यजत्राः स्थिरैरंगै स्तुष्टुवा (गूं)
सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः। स्वस्ति न
इन्द्रो वृद्धश्रवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृहस्पति-
र्दधातु।
श्री गुरुचरणेभ्यो नमः पाद्यं, अर्घ्यं, आचमनीयं,
स्नानं च समर्पयामि। पुनः आचमनीयं जलं
समर्पयामि।

गुरु चरण पादुकाओं को जल अर्पित करके अच्छी तरह से पोंछ दें व वस्त्र अर्पित करें।

वस्त्र

श्री गुरुचरणेभ्यो नमः वस्त्रोपवस्त्रं समर्पयामि
आचमनीयं समर्पयामि।

चन्दन-अक्षत

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धि पुष्टिवर्द्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान् मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्।।
ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पतिवेदनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान्दितोमुक्षीय मामृतात्।।
श्रीगुरुचरणेभ्यो नमः चन्दनं अक्षतान् च समर्पयामि।

पुष्प

ॐ नमः शंभवाय च मयोभवाय च नमः शंकराय
च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च।।
श्री गुरुचरणेभ्यो नमः पुष्पं विल्वपत्रं च
समर्पयामि।

दीप

ॐ अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा।
सूर्योज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा। अग्निर्वर्च्चो
ज्योतिर्वर्च्चः स्वाहा। सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्च्चः
स्वाहा। ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा।
श्री गुरुचरणेभ्यो नमः दीपं दर्शयामि।

नैवेद्य

नैवेद्यप्रोक्षण – ॐ गुरुदेवाय विद्महे परब्रह्माय
धीमहि तन्नो गुरु प्रचोदयात्।
ॐ नाभ्याऽआसीदन्तरिक्ष (गूं) शोर्ष्णोद्यौः
समवर्तत। पद्भ्याम्भूमिर्द्दिशः श्रोत्रांस्तथा-
लोकाँऽअकल्पयन्।
श्रीगुरुचरणेभ्यो नमः नैवेद्यं निवेदयामि
नानाक्रतुफलानि च समर्पयामि।

नीराजन

ॐ इद (गूं) हविः प्रजननम्मे अस्तु दशवीर (गूं)
सर्वगण (गूं) स्वस्तये। आत्मसनि प्रजासनि पशुशनि
लोकसन्यभयसनिः। अग्निः प्रजांबहुलां मे करोत्वन्नं
पयो रेतो अस्मासु धत्त।
ॐ न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं नेमा विद्युतो
भाति कुतोऽयगमग्निः। तमेव भांतमनुभाति सर्वं
तस्य भासा सर्वमिदं विभाति।

कर्पूरगौरं करुणावतारं
संसारसारं भुजगेन्द्रहारम्।
सदा वसन्तं हृदयारविन्दे
भवं भवानी सहितं नमामि।।

त्वमेव माता च पिता त्वमेव।
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव।।
त्वमेव सर्वं मम देव देव।।

नीराजनं निर्मलदीप्तिमद्भिर्
दीपांकुरैरुज्ज्वलमुच्छ्रितैश्च।
घंटानिनादेन समर्पयामि
मृत्युंजयाय त्रिपुरान्तकाय।
श्रीगुरुचरणेभ्यो नमः नीराजनं दर्शयामि।

जल आरती

ॐ द्यौः शांतिरन्तरिक्ष (गूं) शांतिः पृथ्वी शांतिरापः शांतिरोषधयः शांतिः वनस्पतयः शांतिर्विश्वे देवाः शांतिर्ब्रह्मशांतिः सर्व (गूं) शांतिः शांतिरेव शांतिः सा मा शांतिरेधि।

पुष्पांजलि

ॐ न कर्मणा न प्रजयाधनेन त्यागैनैके अमृतत्वमानशुः।
परेण नाकं निहितं गुहायां विभ्राजते यद्यतयो विशन्ति।।
वेदान्तविज्ञान सुनिश्चितार्थाः संन्यासयोगाद् यतयः शुद्धसत्वाः
ते ब्रह्मलोकेषु परान्तकाले परामृताः परिमुच्यन्ति सर्वे।।
यो वेदाद्यौ स्वरः प्रोक्तो वेदान्ते च प्रतिष्ठितः।
तस्य प्रकृतिलीनस्य यः परः स महेश्वरः।।
ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो
विश्वतोबाहुरुतविश्वतस्पात। सम्बाहुभ्यां धमति
सम्पतत्रैर्द्यावाभूमि जनयन् देव एकः।।
नाना-सुगन्ध पुष्पाणि यथा कालोद्भवानि च।
पुष्पांजलिं मया दत्तं गृहाण गुरुनायक।।
श्रीगुरुचरणेभ्यो नमः मन्त्र-पुष्पांजलिं समर्पयामि।

नमस्कार-प्रार्थना-स्तुति

ॐ नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्त्रमूर्तये सहस्त्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे।
सहस्त्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्त्रकोटियुगधारिणे नमः।।
नमः कमलनाभाय नमस्ते जलशायिने
नमस्ते केशवानन्त वासुदेव नमोऽस्तु ते।।
वासनाद् वासुदेवस्य वासितं भुवनत्रयं
सर्वभूतनिवासोऽसि वासुदेव नमोऽस्तु ते।।
अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः।।
अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानान्जनशलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः।
गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वरः।।
गुरुः साक्षात्परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः।।
श्रुतिस्मृतिपुराणानामालयं करुणालयम्।
नमामि भगवत्पादं शंकरं लोकशंकरम्।।
शंकरं शंकराचार्यं केशवं बादरायणम्।
सूत्रभाष्यकृतौ वन्दे भगवन्तौ पुनः पुनः।

विशेषार्घ्य

ब्रह्मानन्दं परम सुखदं केवलं ज्ञानमूर्तिं
द्वंद्वातीतं गगन-सदृशं तत्त्वमस्यादिलक्ष्यम्।
एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधीसाक्षिभूतं
भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुं तं नमामि
श्रीगुरुचरणेभ्यो नमः विशेषार्घ्यं समर्पयामि।

समर्पण

देव-देव गुरुर्देव पूजां प्राप्य करोति यः।
त्राहि त्राहि कृपा सिन्धो पूजां पूर्णतरां कुरु।।
अनया पूजया श्रीगुरुः प्रीयन्ताम्।
ॐ तत्सद् ब्रह्मार्पणमस्तु।

अन्त में हाथ जोड़ कर प्रार्थना करें कि हे प्रभु! यह सम्पूर्ण पूजन आप द्वारा प्रदत्त ज्ञान एवं आप द्वारा प्रदत्त बल एवं भावना के द्वारा ही सम्पूर्ण हुआ है आप मुझ अकिंचन पर कृपा बनाए रखें।

इस प्रकार साधक किसी भी गुरुवार को अथवा जब भी मन में उच्चकोटि की साधना करने की इच्छा हो गुरु सामीप्यता प्राप्त करने की भावना हो कुछ क्षण छल-प्रपंच से कटकर आध्यात्मिक अनुभूतियों में निमग्न होने की भावना हो तब - तब इस सम्पूर्ण पूजन को अवश्य सम्पन्न करें जिससे चित्त में निर्मलता आ सके तथा जीवन पवित्र, उदात्त एवं सुखी हो सके।

अंत में क्षमा प्रार्थना कर अपने स्थान को छोड़ें।

यदेतत्स्वच्छन्दं विहरणामकार्पण्यमशनं
सहार्यैः संवासः श्रुतमृशमैकव्रत फलम्।
मनो मन्दस्पन्दं बहिरषि चिरस्यापि विमृश
न जाने कस्यैधा परिणति रुदारस्य तपसः।।

स्वच्छंद, निर्भीक विहार करना, दीनता रहित भोजन करना, सत्पुरुषों का साथ, मन को शांति देने वाले शास्त्रों का उपशम- व्रतरूपी फलदायी शास्त्रों का श्रवण करना, सांसारिक भावों में मन की प्रवृत्ति का मंद होना आदि का चिरकाल तक विचार- विमर्श करने पर भी समझ में यह नहीं आता कि यह सब किस विशेष तपस्या का फल है।

जब मैंने पूज्य गुरुदेव से दीक्षा लेने के बाद गुरु साधना आरम्भ की, तो मुझे गुरुदेव की कृपा से ही एक ऐसे सुयोग्य और वरिष्ठ गुरुभ्राता जीवन में मिले, जिनके सान्निध्य में रहकर न केवल मैंने पूर्णता से गुरु साधना सम्पन्न की, अपितु उन्होंने मुझे इस साधना में प्रयुक्त होने वाले प्रत्येक मंत्र का विस्तार पूर्वक अर्थ भी बताया, भाव भी बताये और ऐसे गोपनीय सूत्र भी दिये, जो उन्होंने स्वयं शिष्यवत् जीवन जीते हुए साधना के प्रारम्भिक दिनों में साधना जगत की व्यवहारिक कठिनाइयां आने पर गहन अनुभव से प्राप्त किये थे। उन्होंने ही मुझे बताया, कि वास्तव में श्री गुरुदेव के पादारविन्दों में कैसा दीप समर्पित होता है, उन्हें कैसा नैवेद्य वांछित है और कैसी आरती उनकी उच्चता के अनुकूल होती है। गुरु साधना में जहां दीप अर्पण की बात आती है, वहां उल्लिखित है –

वैराग्य तैल संपूर्णे भक्तिवर्ति समन्विते।
विवेक पूर्णे पात्रेऽहं बोध दीपं प्रदर्शये।।

अर्थात् "वैराग्य रूपी तेल से भरा, जिसमें बाती पड़ी हो भक्ति की और पात्र हो हमारे विवेक का – ऐसे बोध रूपी दीपक को मैं पूज्य गुरुदेव के चरणों में प्रदर्शित कर रहा हूं।"

कालान्तर में जब मुझे सुयोग मिला, कि मैं पूज्य गुरुदेव के सान्निध्य में रह सकूं, तो उनके सामीप्य से स्वत: ही मेरे मन में विचार शृंखलायें आरम्भ हो गईं, कि ज्ञान का क्या अर्थ है, ज्ञान कैसे प्राप्त किया जा सकता है, प्रकृति का बन्धन क्या है, प्रकृति की सहचरी अवस्था क्या होती है और प्रकृति
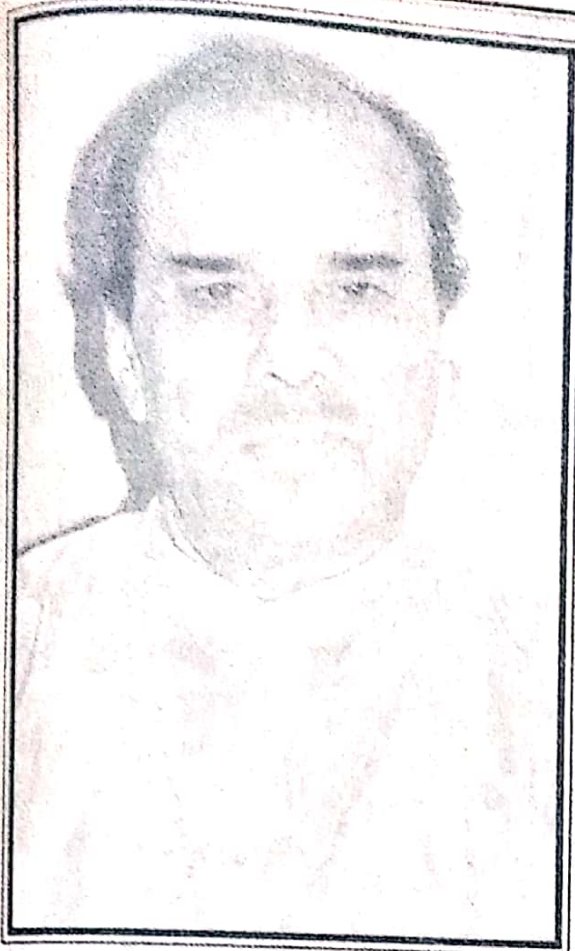
गुरु-शिष्य का सम्बन्ध व्यक्त से अधिक अव्यक्त, मुखर से अधिक मौन, दर्शनीय से अधिक अदर्शनीय और देह से अधिक प्राण का है। श्री गुरुदेव का जो वास्तविक स्वरूप है, वह तो प्राणगत स्थिति में जाने पर ही, आत्मगत स्थिति में जाने पर ही हमारे समक्ष स्पष्ट होता है और तब समझ में आ सकता है, कि क्यों उन्हें अनन्त बाहों, अनन्त पादाक्षों और अनन्त चक्षुओं वाला कहा गया है।
यही पूज्य गुरुदेव का विराट स्वरूप है।

से मुक्ति की अवस्था क्या होती है, दोनों में कौन सी स्थिति श्रेष्ठ है, जीवन मुक्ति की क्या दशा है, बोध क्या है, अखण्ड आनंद क्या है — इत्यादि।

आद्य शंकराचार्य जी का प्रसिद्ध पद है 'दक्षिणा-मूर्ति स्तोत्र', उन्होंने इसमें अत्यन्त सुन्दर और काव्यात्मक भावभूमि में कहा है —''वृद्ध शिष्यगण अपने गुरु के चरणों में बैठे हैं, जो पूर्ण तरुण हैं, जिनके मौन से ब्रह्मतत्त्व की व्याख्या हो रही है तथा शिष्यों के मन में उठते प्रश्नों का निराकरण स्वतः हो रहा है।''

मुझे इसी तरह पूज्य गुरुदेव के मौन से अनेक प्रश्नों के निराकरण मिले और उनसे प्राप्त होने वाले उत्तरों से मैं समझ सका, कि जिसे हम ज्ञान कहते हैं, वह तो हमारी बनाई हुई एक छोटी सी परिभाषा है।

इस विश्व के और विश्व से भी परे ब्रह्माण्ड के जो गूढ़ रहस्य हैं, इस जीवन के आदि और अन्त की जो व्याख्याएं हैं, वे तो केवल बोध होने पर ही संभव हैं। आद्य शंकराचार्य जी ने भी अन्त में केवल यही कहा है, कि सारे शास्त्रों और उपदेशों के बाद भी जो सारभूत स्थिति है, वह है — मात्र गुरुदेव का एक अनुग्रह पूर्ण वाक्य, जब वे करुणा सिक्त होकर कह दें—'जा! तू मुक्त है'. . . और सचमुच सब कुछ पूज्य गुरुदेव के एक अनुग्रह पूर्ण वाक्य का ही उत्तरापेक्षी तो है।

गुरु-शिष्य का सम्बन्ध व्यक्त से अधिक अव्यक्त, मुखर से अधिक मौन, दर्शनीय से अधिक अदर्शनीय और देह से अधिक प्राण का है। श्री गुरुदेव का जो वास्तविक स्वरूप है, वह तो प्राणगत स्थिति में जाने पर ही, आत्मगत स्थिति में जाने पर ही हमारे समक्ष स्पष्ट होता है और तब समझ में आ सकता है, कि क्यों उन्हें अनन्त बाहों, अनन्त पादाक्षों और अनन्त चक्षुओं वाला कहा गया है। यही पूज्य गुरुदेव का विराट स्वरूप है।

विराट स्वरूप का तात्पर्य किसी लम्बी-चौड़ी देह के प्रकट होने से नहीं होता, सर्वत्र व सदैव उन्हीं एक श्री गुरुदेव का बोध होना ही पूज्य श्री गुरुदेव का विराट दर्शन है, उनका विराट स्वरूप है।साधना के आगे के क्रम में मेरे समक्ष कई नये तथ्य उन्हीं की कृपा से मानस में उद्घटित हुए और कुछ ऐसे तथ्य इस प्रकार से रहे जैसे सुदूर क्षितिज पर कुछ झलक रहा हो, जिसका आकार-प्राकार तो हम देख रहे हों, किन्तु वास्तविक स्वरूप से परिचित न हो पा रहे हों। जीवन के कई ऐसे द्वन्द्व मेरे समक्ष भौतिक और आध्यात्मिक जीवन को लेकर बने ही रहे।

पूज्य गुरुदेव ने एक बार प्रवचन के मध्य कहा था—''ज्ञान कोई वस्तु नहीं है, जो व्यक्ति अपनी बुद्धि से प्राप्त

कर ले, इसका आधार तो व्यक्ति की श्रद्धा होती है। वास्तव में श्रद्धा हमारे अन्दर वह पात्रता निर्मित करती है, जिससे गुरु प्रदत्त ज्ञान को हम धारण कर सकें।''

मैंने पूज्य गुरुदेव के इस वाक्य में छिपी गुरुता को समझ कर स्वयं को गुरु साधना एवं गुरु सेवा में लीन कर दिया, जिससे अन्तस् का मैल समाप्त हो और चित्त रूपी आकाश पर जीवन का वास्तविक सत्य झलक उठे। इसके उपरान्त यदा-कदा मन में उठने वाले मोह, वासनायें, तृष्णायें, द्वन्द्व व काम-क्रोध की स्थितियां आ आकर मुझे चिन्तित और खिन्न कर जाती रहीं, कि मेरे द्वारा समस्त प्रयासों के बाद भी यह सब समाप्त क्यों नहीं हो रहे। यह जीवन तो बहुत छोटा ही है साधना करने के लिए। साधक के लिये जीवन का तात्पर्य उस कालखण्ड से होता है, जब तकउसकी इन्द्रियां चैतन्य व सबल रहें अन्यथा साधक के लिये तो देह-क्षीणता ही उसकी मृत्यु है।

मेरे जीवन का पुण्योदय हुआ, जब उन्होंने मुझे अपने पास बुलाया। उनकी सदैव तेजस्विता से भरी रहने वाली आंखें उस दिन अपार करुणा से आपूरित हो कर और अधिक गहरी, और अधिक काली, और अधिक बड़ी-बड़ी हो उठी थीं। उनमें पता नहीं कैसी तरलता आ गई थी, जो जाकर मेरे चित्त से टकराई और स्वतः ही दो अश्रुकण आंखों से निकल पड़े। इस मौन वार्तालाप के क्षणों के पश्चात् उन्होंने ही मुझे कुछ क्षण बाद स्वस्थ चित्त होकर आने को कहा।

कुछ क्षणों पश्चात् जब मैं हाथ-मुंह धोकर उनके समीप पहुंचा, तो उन्होंने मुझे एक विशिष्ट मंत्र प्रदान किया और गुरु प्रदत्त मंत्र का अर्थ होता है, कि वे केवल कुछ अक्षरों को दोहराना नहीं सिखा रहे, अपितु अपने प्राणों के घर्षण से तेजस्विता प्रदान कर साधक या शिष्य के अन्दर उतार देते हैं। उनकी आज्ञानुसार मैंने उन्हीं के द्वारा बताई विधि से मंत्र जप करना आरम्भ किया।

पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वह दुर्लभ मंत्र 51 माला करने की आज्ञा दी। यह मंत्र जप मैंने 'विशिष्ट गुरु यंत्र' के सामने ''स्फटिक माला'' से करना प्रारम्भ किया। इस साधना में किसी विशेष आडम्बर की आवश्यकता नहीं है। वस्त्र यदि पीले हों, तो सर्वाधिक उपयुक्त अन्यथा साधक किसी भी रंग की किन्तु स्वच्छ और धुली हुई धोती धारण कर 23/1/97 (गुरु पुष्यामृत योग) की रात्रि में अथवा किसी भी माह में गुरुवार को महेन्द्रकाल में (जिसका निर्धारण आप 'काल निर्णय' ग्रन्थ द्वारा स्वयं कर सकते हैं।) एकान्त में बैठकर इस मंत्र का जप करें —

मंत्र

॥ॐ ऐं ह्रीं गुरुत्वै नमः॥

लगभग एक सप्ताह के बाद मुझे ऐसा प्रतीत हुआ, कि मेरी तृष्णायें, मोह, भय, विविध वासनायें, द्वन्द्व, तनाव और चित्त पर छाये अनेक दृश्य व बिम्ब सब कहीं विलीन हो रहे हैं, एक निर्मलता मुझमें व्याप्त हो रही है, मैं अपने अन्दर उतरने की क्रिया सीखने लग गया। आध्यात्मिक जीवन से सम्बन्धित कई रहस्य मेरे सामने स्पष्ट होने लगे।

जब मैंने पूज्य गुरुदेव को अपनी मनःस्थति के बारे में बताया, तो उन्होंने अत्यन्त प्रसन्न होकर कहा— ''यही जीवन का वास्तविक ज्ञान है, जो बोध रूप में तुम्हारे मानस में स्पष्ट हो रहा है। शास्त्र पुराण इत्यादि इसी तथ्य के वर्णन मात्र हैं, जो कुछ उनमें रूपक में अथवा रहस्यमय भाषा में लिखा गया है, वही व्यक्ति को इस मंत्र के माध्यम से मानस में स्वतः ही स्पष्ट होने लगता है।''

इसका दूसरा पहलू यह है, कि जब कभी मैं संस्कृत का कोई भी श्लोक देखता हूं, तो उसका अर्थ मुझे स्वतः ही मानस में स्पष्ट हो जाता है, जबकि मैंने संस्कृत का कोई ज्ञान अर्जित नहीं किया है। मैं जहां दो या तीन व्यक्तियों के सामने बोलने में झिझकता था, अब समूह के समक्ष अपनी बात दृढ़ता पूर्वक रखने में नहीं झिझकता।

पूज्यपाद गुरुदेव ने यह भी रहस्योद्घाटन किया— ''इसी मंत्र के सतत् जप से व्यक्ति को कुछ दिनों के पश्चात ऐसे तथ्यों का ज्ञान होने लग जाता है, जिसका कि उसको कभी भान तक न रहा हो और यही नहीं, संसार के किसी भी विषय से संबंधित कोई भी ज्ञान उसके लिये अज्ञेय नहीं रह जाता।''

न्यौछावर— 300/-

उपनिषद् का अर्थ है — गुरु के पास जाना और उनके चरणों के समीप बैठना, उस दिव्य ज्ञान को प्राप्त करने के लिए; क्योंकि उस ज्ञान को प्राप्त करने का एक ही माध्यम है 'गुरु'।

गुरु का अर्थ है — ज्ञान, तृप्ति, आनन्द, मस्ती और पूर्णता, जिसकी खोज सदैव इस जीवात्मा को रही है . . . और रहेगी। उपनिषद् काल में ऋषियों, महर्षियों और ज्ञानियों की श्रेणी उजागर हुई, अवश्य ही उन्होंने गुरु साधना में पूर्णता प्राप्त की होगी, तभी तो यह ज्ञान पूर्णत्व प्रदाता है।

— ''तांत्रोक्त गुरु पूजन'' से उद्धृत

20-7-97

अगर किसी कारणवश गुरु पूर्णिमा पर गुरु चरणों में नहीं पहुंच पा रहे हैं तो . . .

शिष्य के जीवन को आनन्द, पूर्णता और अनेक प्रकार की अनुकूलताओं से भरने का पर्व है — गुरु पूर्णिमा।

जल में कुंभ कुंभ में जल है, बाहर भीतर पानी।
फूटा कुंभ जल जल ही समाना, यह तथ कहा ज्ञानी।।

ऐसा ही मिलन से युक्त पर्व है गुरु पूर्णिमा का, जिसमें शिष्य गुरु चरणों में अपने को उत्सर्ग करने के लिए आतुर हो जाता है, क्योंकि यह पर्व ही वह अद्वितीय पर्व होता है, जब शिष्य को गुरु दक्षिणा स्वरूप स्वयं को समर्पित करने का श्रेष्ठतम अवसर प्राप्त होता है और गुरु भी शिष्य के न्यून स्तर, उसके अधूरेपन को स्वयं ग्रहण कर उसे आशीर्वाद स्वरूप श्रेष्ठता प्रदान करते हैं, मात्र उसके भौतिक पक्ष को ही नहीं, उसके आध्यात्मिक पक्ष को भी।

गुरु शिष्य को तभी कुछ प्रदान करते हैं, जब वे शिष्य में योग्यता व पात्रता अनुभव करते हैं और कुछ विशेष अवसरों पर ऐसा संयोग बनता है, कि वे शिष्य की न्यूनताओं को, उसकी परेशानियों को स्वत: ही समाप्त कर देते हैं और अपना सान्निध्य, अपनी तपस्या का अंश तथा साधनात्मक ऊर्जा प्रदान कर उसे स्वर्ण खण्ड बना देते हैं।

यह क्रिया मात्र आध्यात्मिक पक्ष से सम्बन्धित ही नहीं होती, अपितु जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में दृष्टिगोचर होती है। जिस प्रकार मां अपने शिशु की प्रसन्नता व श्रेष्ठता के लिए प्रयत्नशील रहती है, उसी प्रकार गुरु की भी समस्त क्रियाएं अपने शिष्यों को प्रसन्नता, श्रेष्ठता व पूर्णता प्रदान करने के लिए ही होती हैं।

कालीदास जैसे श्रेष्ठतम विद्वान की जीवनगाथा भी गुरु कृपा की महानता को व्यक्त करती है। कालीदास की पत्नी ने विवाह के पश्चात् प्रथम दिन ही जब उनकी मूढ़ता को देख कर उन्हें अपमानित कर महल से निकाल दिया, तो पत्नी से अपने अपमान का बदला लेने की, उसे नीचा दिखाने की भावना व अपमान की आग लिये वे चल पड़े। उनकी भेंट एक संन्यासी से हुई, जो कि उन्हें अपने साथ ले गए तथा दीक्षा दी और उन्हें 'गुरु', 'गुरु' नामक मंत्र का जप करने के लिए कहा। मात्र इसी का जप करते-करते वे दिव्यता के पथ पर अग्रसर होते गए और बुद्धि, चातुर्य, कवित्व, विद्वता आदि गुणों ने उनके अन्दर समाहित हो कर अपने आपको गौरवान्वित किया। जब वे पुन: उस समाज में आये, जहां उनका अपमान हुआ था, उस समय वे अत्यन्त ओजस्वी, ज्ञान की गरिमा से आलोकित, दिव्यता व चैतन्यता से युक्त एक विद्वान व्यक्तित्व बन चुके थे। इतिहास साक्षी है, उनके जैसा अद्वितीय विद्वान कोई दूसरा पैदा नहीं हो सका।

कालीदास की जीवन यात्रा एक ऐसे व्यक्ति की कथा हैं, जो प्रारम्भ में अत्यन्त मूढ़ था और गुरु कृपा प्राप्त करने के उपरान्त वह सर्वश्रेष्ठ विद्वान कहलाया और यह सब सम्भव हुआ मात्र उनके द्वारा की गई गुरु सेवा व चौबीसों घंटे निरन्तर गुरु का ध्यान, गुरु मंत्र का जप व गुरु साधना द्वारा।

आदि काल से ही गुरु की महिमा का गुणगान होता रहा है, वेद, उपनिषद, पुराण आदि जितने भी उच्चकोटि के आध्यात्मिक ग्रंथ हैं, सभी में गुरु की सर्वोच्चता का वर्णन किया गया है। गुरु की कृपा प्राप्त कर एक साधारण व्यक्ति भी अद्वितीय व्यक्तित्व बन सकता है।

अध्यात्म और साधनाओं के क्षेत्र में तो गुरु को साक्षात् शिव स्वरूप ही माना गया है –

ॐ संविद्रूपाय शान्ताय शंभवे सर्वसाक्षिणे।
सोमनाथाय महसे शिवाय गुरवे नमः॥

गुरु शब्द शिष्य के जीवन का सबसे महत्वपूर्ण और श्रेष्ठ शब्द है, क्योंकि गुरु के द्वारा बताये गए मार्ग का अनुसरण कर ही शिष्य अपने हृदय पर पड़े धूल और जालों को साफ कर पाने में सक्षम होता है और अपने जीवन में व्याप्त अंधकार को दूर कर पाता है। गुरु ही शिष्य का सृजन कर उसका साधनाओं द्वारा पोषण करता है तथा रुद्र की भांति उसके कुविचारों को, उसके दुर्भाग्य को, उसके अहं को, उसके विकारों को नष्ट करता है। शिष्य तभी श्रेष्ठ बन पाने में सक्षम होता है, जब वह अपने हृदय को पूर्ण रूप से स्वच्छ कर उसमें गुरु को स्थापित कर ले, अपने हृदय में गुरुत्व को धारण कर ले।

गुरु की साधना सम्पन्न कर, उनकी सेवा कर अनेक व्यक्तियों ने उच्चता और श्रेष्ठता प्राप्त की। शंकराचार्य ने अल्पायु में ही जिस प्रकार से विद्वता की धाक जमाई, वह बिना गुरु कृपा के किस प्रकार सम्भव हो सकता था।

और गुरु पूर्णिमा से ज्यादा श्रेष्ठ और कौन सा अवसर उपस्थित हो सकता है गुरु साधना के लिए, गुरु में स्वयं को विसर्जित करने के लिए, गुरुमय बन जाने के लिए।

जिस प्रकार एक बेल किसी मजबूत वृक्ष का सहारा ले कर बहुत ऊंचाई तक पहुंच जाती है, उसी प्रकार शिष्य भी गुरु साधना के द्वारा उच्चता पर पहुंच जाता है। संसार में जितनी भी साधनाएं हैं, उन सबमें गुरु साधना को ही सर्वश्रेष्ठ माना गया है, क्योंकि जब गुरु प्रसन्न होते हैं, तो फिर कोई भी साधना या सिद्धि शिष्य से दूर नहीं रह जाती, वे क्षण भर में ही अपनी तपस्या का अंश प्रदान करते हुए समस्त सिद्धियां प्रदान करने में समर्थ होते हैं।

एक अन्य कारण यह भी है, कि किसी साधक को समस्त साधनाएं सम्पन्न करने के लिए हजारों वर्ष साधना करनी पड़ सकती है, जो कि वर्तमान के मनुष्य की 60-70 वर्ष की आयु में सम्भव नहीं है, अतः गुरु साधना ही एकमात्र ऐसा उपाय है, जिसके द्वारा अल्प समय में ही सब कुछ प्राप्त करना सम्भव है।

यों तो गुरु पूर्णिमा के अवसर पर प्रत्येक शिष्य को गुरु चरणों में पहुंचना ही चाहिए और उनके सान्निध्य में ही यह पर्व मनाना चाहिए; परन्तु इस भौतिक जगत में गृहस्थ साधकों व शिष्यों को अनेक बाधाओं व समस्याओं का सामना करना पड़ता है और कुछ ऐसी भी परिस्थितियां उत्पन्न हो जाती हैं, जब वह चाह कर भी ऐसा करने में सक्षम नहीं हो पाता। ऐसे ही साधकों के लिए यह गुरु साधना विधान प्रस्तुत है, जिसके माध्यम से आप यदि किसी कारणवश शिविर में उपस्थित न हो पायें, तब भी पूज्य गुरुदेव की निकटता का एहसास कर सकें और उनका पूर्ण आशीर्वाद प्राप्त कर अपने जीवन को धन्य कर सकें। जो साधक शिविर में उपस्थित हो कर गुरु पूर्णिमा के दिन इस साधना को सम्पन्न करेंगे, उनके सौभाग्य का तो कहना ही क्या! यदि साधक चाहें, तो इस साधना विधान को अपने दैनिक गुरु पूजन क्रम में भी सम्मिलित कर सकते हैं।

जिस दिन पूजन प्रारम्भ करना हो या जिस समय करना हो, उस दिन घर में मंगलमय वातावरण होना चाहिए। इस साधना को सम्पन्न करने के लिए साधक को पहले से ही '**पारद गुरु यंत्र**', '**एक पंचमुखी रुद्राक्ष**' तथा '**दिव्यत्व माला**' प्राप्त कर लेनी चाहिए। इसके अलावा पूजन की सभी निम्न सामग्रियों को भी एकत्र कर लें –

गंगा जल, धूप, दीप, अक्षत, कुंकुंम, पुष्प, फल, नैवेद्य (मिठाई) तथा पंचामृत (दूध, दही, घी, शहद, शक्कर)।

साधना आरम्भ करने से पूर्व साधक स्वयं ही अपने पूजन कक्ष को साफ करें और स्नान आदि से निवृत्त हो कर स्वच्छ पीले वस्त्र धारण करें, गुरु चादर ओढ़ लें तथा अपने सामने बाजोट पर पीले रंग का वस्त्र बिछा कर उस पर किसी थाली या ताम्रपात्र में केसर से स्वस्तिक बना लें। थाली के पीछे प्राण प्रतिष्ठा युक्त गुरु चित्र को स्थापित करें। साधक का मुंह पूर्व या उत्तर दिशा की ओर हो, अपने सामने धूप, दीप जला लें तथा पूजन की अन्य सामग्रियों को भी थाली में सजा कर अपने पास रख लें।

फिर अपने सामने बाजोट पर एक सुपारी में मौली बांध कर उसे गणपति मानते हुए दोनों हाथ जोड़ कर भगवान गणपति

का स्मरण करें और धूप, दीप, कुंकुम आदि समर्पित करते हुए मंगल कामना करें –

ॐ गजाननं भूत गणाधिसेवितं, कपित्थ जम्बू फल चारुभक्षणं।
उमासुतं शोक विनाश कारकं, नमामि विघ्नेश्वर पादपंकजम्।।

भो! गणपते सांगं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकम् आवाहयामि स्थापयामि पूजयामि, अक्षतं धूपं दीपं पुष्पं नैवेद्यं च समर्पयामि ॐ गणाधिपतये नमः।।

दाहिने हाथ में जल ले कर संकल्प करें –

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः अद्य (दिन व महीना) अमुक गोत्रीयः (अपना गोत्र बोलें) अमुक शर्माऽहं (नाम बोलें) सकल भौतिक उन्नति प्राप्ति निमित्तं आध्यात्मिक पक्ष सिद्धि निमित्तं अद्य अस्मिन् विशिष्टे दिवसे पूर्णत्व प्राप्ति निमित्तं मन वचन कर्मणा अश्रुपूरित नेत्राभ्यां गुरु पूजनं सम्पर्ददे।

जल भूमि पर छोड़ दें।

इसके बाद थाली में गुलाब की पंखुड़ियां रखें और गुरु का आवाहन करें –

पूर्वस्यां पूर्वा एतोस्मानं गुरुं
आवाहयामि स्थापयामि नमः।

फिर गुरु प्रार्थना करें –

ॐ आवोदेवा परिमहे वमन्त तद्दुरे।
आवोदेवा सवहै यज्ञियासो हवामहे।।

गुरु आवाहन के बाद पारद गुरु यंत्र को उन पंखुड़ियों पर स्थापित करने के बाद गंगा जल से यंत्र को स्नान करायें –

ॐ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः
स्वस्तिनस्तारिषयोऽरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु।

दुग्ध स्नानं समर्पयामि नमः – दूध से स्नान करायें।
दधि स्नानं समर्पयामि नमः – दही से स्नान करायें।
घृत स्नानं समर्पयामि नमः – घी से स्नान करायें।
मधु स्नानं समर्पयामि नमः – शहद से स्नान करायें।
शर्करा स्नानं समर्पयामि नमः – शक्कर से स्नान करायें।

इसके बाद पांचों चीजों को एक साथ मिला कर पंचामृत स्नान करायें –

ॐ पंचनद्यः सरस्वतीमपि यन्ति सस्रोतसः।
सरस्वती तु पंचधा सोदेशेऽभवत् सरित्।।

यंत्र को शुद्ध जल से स्नान करा कर पोंछ लें। फिर किसी दूसरी थाली में कुंकुम से स्वस्तिक बना कर बाजोट पर रख दें तथा उसमें गुरु यंत्र को स्थापित करें।

यंत्र पर तिलक लगायें –

ॐ नमो स्त्वनन्ताय सहस्रमूर्तये, सहस्र पादाक्षिपिरोरुबाहवे।
सहस्र नाम्ने पुरुषाय शाश्वते, सहस्र कोटि युग धारिणे नमः।।

अक्षत समर्पित करें –

ॐ अक्षन्नमी मदन्त ह्यवऽप्रियाऽअधूषत।
अस्तोषत स्वभानवो विप्रान्
विष्ठयामती योजान् विन्दते हरी।।

फिर यंत्र पर पुष्प या पुष्प माला समर्पित करें –

सुमाल्यानि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो!
मया दत्तानि पूजार्थं पुष्पाणि प्रतिगृह्यताम्।।

यंत्र पर पुनः अक्षत चढ़ायें –

ॐ अक्षन्तात् पूर्वा स दीर्घो स
पूर्वोस्मात् एतोस्मानं स कुर्यात्।
अक्षतान् समर्पयामि नमः।।

रुद्राक्ष के ऊपर त्रिताप नाश के लिए तीन बार कुंकुम से तिलक करें, फिर उसे दाहिने हाथ की मुट्ठी में बंद करके अपनी आध्यात्मिक व भौतिक उन्नति एवं गुरु कृपा की प्राप्ति के लिए चिन्तन करते हुए यंत्र पर चढ़ा दें –

त्रितापनाशकं स एतोस्मान्
मांगल्यं फलं समर्पयामि नमः।।

धूपं आघ्रापयामि नमः – धूप दिखाइये।
दीपं दर्शयामि नमः – दीप दिखाइये।

दोनों हाथ जोड़ें –

भो! दीप! सूर्य रुपस्त्वं अन्धकार निवारक!
मम हृदये पूर्णत्वं प्रकाशं भव सर्वदा।।

यज्ञोपवीत समर्पित करें –

यज्ञोपवीत इति सुतलं छन्दः यज्ञोपवीत धारणे विनियोगः –

यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं, प्रजापते यत् सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्रं प्रतिमुंच शुभ्रं, यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः।।

नैवेद्य या मिठाई समर्पित करें और उसके बाद फल समर्पित करें –

नैवेद्यं निवेदयामि स एतोस्मानम् फलं समर्पयामि नमः।।

फिर पुष्प समर्पित करें –

नाना सुगन्ध पुष्पाणि यथा कालोद्भवानि च।
पुष्पाणि मया दत्तं गृहाण परमेश्वर।।
पुष्पाञ्जलि समर्पयामि नमः।।

यंत्र के समक्ष सिर झुका कर पूर्ण श्रद्धा एवं निष्ठा पूर्वक गुरु को प्रणाम करें। फिर पूज्य गुरुदेव से प्रार्थना करें –

त्वं मातृ रूपं त्वं पितृ रूपं, ब्रह्म स्वरूपं रुद्र स्वरूपम्।
विष्णु स्वरूपं वेद स्वरूपं गुरुत्वं शरण्यं गुरुत्वं शरण्यम्।।
न जानामि मंत्रं न जानामि तंत्रं, न योगं न पूजां न ध्यानं वदामि।
न जानामि चैतन्य ज्ञानं स्वरूपं, एकोहि रूपं गुरुत्वं शरण्यम्।।
अनाथो दरिद्रो जरा रोग युक्तो, महाक्षीणकायः सदा जाड्यवक्त्रः।
विपत्ति प्रविष्टः सदाहं भजामि, गुरुत्वं शरण्यं, गुरुत्वं शरण्यम्।।
मम अश्रु अर्घ्यं देहं च पात्रं, ज्ञानं च ज्योतिर्भवतां सदेव।
मम संसदि पूर्ण समर्पयामि, गुरुत्वं शरण्यं गुरुत्वं शरण्यम्।।

मम पूर्ण शरीरं त्वां देहत्वं एतोस्मानं स पूर्णत्व सिद्धये मम अश्रु पूर्ण नेत्राभ्यां त्वां गुरुपूजनं च मम करिष्ये त्वां चरणे पूर्णत्व प्राप्ताय निमित्तं सर्वसुखसौभाग्यं धन धान्य ऐश्वर्य प्रतिष्ठा पूर्णमनोकामना सिद्धाय स तुभ्यं सम्पर्ददे।

इसके बाद स्फटिक माला से निम्न मंत्र का 11 माला मंत्र जप सम्पन्न करें –

मंत्र

ॐ निं निखिलेश्वराय गुरुत्वं सिद्धये निं ॐ।।

Om Nim Nikhileshwaray Gurutvam Siddhaye Nim Om

जप समाप्ति के पश्चात् यंत्र तथा माला को भी पूजा स्थान में ही रख दें। गुरुत्व शक्ति के प्रतीक उस रुद्राक्ष को 3 दिन तक एक गिलास गंगा जल में डुबोने के पश्चात् उस जल को परिवार के सभी सदस्यों में चरणामृत के रूप में बांट दें। 3 दिन बाद रुद्राक्ष को माला तथा यंत्र के साथ नदी में विसर्जित कर दें।

कालचक्र

समय का चक्र निरन्तर गतिशील है और यदि सूक्ष्मता से देखें, तो प्रत्येक क्षण का अपना अलग विशिष्ट महत्त्व है। इस काल चक्र की गति के फलस्वरूप कुछ ऐसे विशिष्ट क्षण भी व्यक्ति के जीवन में आते हैं, जिनमें साधना विशेष को सम्पन्न करने पर सफलता का प्रतिशत अधिकतम होता है और श्रेष्ठ साधक इन विशेष क्षणों को अपने जीवन में उतार लेते हैं।

इस स्तम्भ के अन्तर्गत ऐसे ही चार विशिष्ट साधना मुहूर्त को प्रस्तुत किया जा रहा है, जिनमें सम्बन्धित साधना सम्पन्न करने पर निश्चित सफलता प्राप्त होगी ही . . .

6.5.97 — वैशाख मास की भौमवासरीय अमावस्या को अश्विनी नक्षत्र है और आयुष्मान योग घटित हो रहा है, साथ ही सर्वार्थ सिद्धि योग और अमृत सिद्धि योग होने के कारण अत्यन्त ही शुभ मुहूर्त बन गया है। इस दिन रात्रि 7:48 से 9:12 के मध्य **'बगलामुखी गुटिका'** (न्यौछावर – 60/-) के समक्ष निम्न मंत्र का निरन्तर जप करने से आप अपने समस्त शत्रुओं को तेजहीन एवं शक्तिहीन बना सकते हैं –

मंत्र

।।ॐ ह्लीं बगलामुखी देव्यै ह्लीं फट्।।

OM HLEEM BAGALAMUKHI DEVYAI HLEEM PHAT

13.5.97 — वैशाख शुक्ल पक्ष की सप्तमी तिथि, मंगलवार का दिन, पुष्य नक्षत्र एवं सवार्थ सिद्धि योग होने से निश्चित सफलता दायक समय है। ऐसे श्रेष्ठ समय में प्रातःकाल 6:24 से 8:00 किसी कार्य विशेष में सफलता प्राप्त करने हेतु **'कार्य सिद्धि माला'** (न्यौछावर –90/-) से निम्न मंत्र का जप करने पर उस कार्य में पूर्ण सफलता प्राप्त होती है –

मंत्र

।।ॐ श्रीं श्रीं ह्रीं ह्रीं श्रीं श्रीं ॐ।।

OM SHREEM SHREEM HREEM HREEM SHREEM SHREEM OM

22.5.97 — वैशाख पूर्णिमा, गुरुवार एवं विशाखा नक्षत्र से युक्त यह दिवस साधना की दृष्टि से एक सिद्ध तिथि है, इस दिन यदि सायं काल 7:36 से 9:12 के मध्य **'गुरु माला'** (न्यौछावर –60/-) से निम्न मंत्र का जप किया जाय, तो साधक को सभी प्रकार से अनुकूलता प्राप्त होती है –

मंत्र

।।ॐ गुं गुरुत्वै नमः।।

OM GUM GURUTVAYAI NAMAH

28.5.97 — ऊर्ध्वमुख संज्ञक घनिष्ठा नक्षत्र से युक्त इस बुधवार को सप्तमी तिथि है, इस प्रकार यह एक सिद्ध तिथि है, इसके साथ ही ज्योतिषीय दृष्टि से इस दिवस विशेष को सिद्ध योग भी घटित हो रहा है। इस दिवस विशेष में यदि साधक प्रातःकाल 6:48 से 8:12 के मध्य **'लक्ष्मी माला'** (न्यौछावर –95/-) से निम्न मंत्र का जप करे, तो जीवन में आकस्मिक धन प्राप्ति का योग बनता है –

मंत्र

।।ॐ ह्रीं धनदाये ह्रीं ॐ।।

OM HREEM DHANDAYE HREEM OM

प्रत्येक रक्त कण में गुरु स्थापन प्रयोग
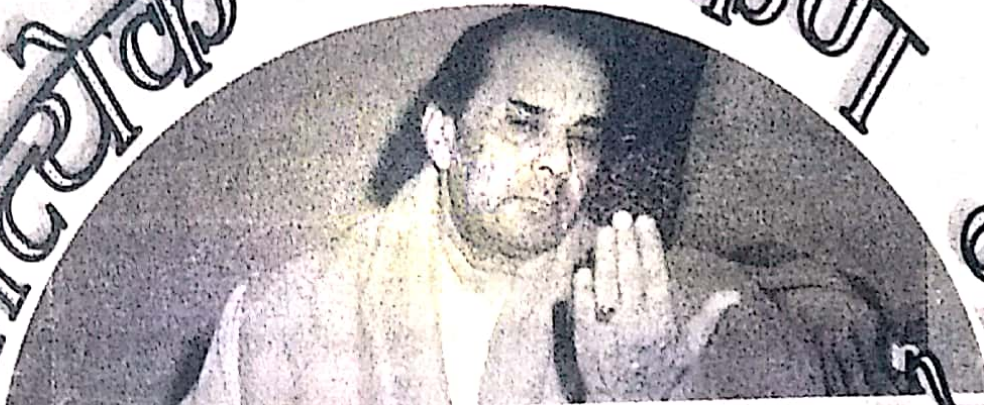
गुरु जन्मोत्सव के अवसर पर पूज्य गुरुदेव ने अत्यन्त करुणावश अपने मानस पुत्रों के हेतु तीन अद्वितीय साधना प्रयोग इस पत्रिका के पन्नों पर देने की अनुमति प्रदान की है। ये वे प्रयोग हैं, जिन्हें विभिन्न साधना शिविरों के अवसर पर पूज्य गुरुदेव ने भाग ले रहे साधकों को प्रदान किया है और वे साधक इससे लाभान्वित भी हुए हैं।

लेकिन प्रत्येक शिष्य प्रत्येक साधना शिविर में उपस्थित नहीं हो पाता है, अत: वह अनेक अमूल्य साधनाओं एवं प्रयोगों से वञ्चित हो जाता है, जिसका उसे पश्चाताप भी होता है।

साधकों की भावनाओं व उनके अनुरोध को ध्यान में रखते हुए ये समस्त प्रयोग पूज्य गुरुदेव की वाणी में ही इस अंक में प्रस्तुत किये जा रहे हैं–

प्रत्येक रक्त कण में गुरु स्थापन प्रयोग
महाकाली साधना
स्वर्ण खप्पर प्रयोग

मनुष्य अपने आपमें अधूरा और अपवित्र है। वह अपने आपको पूर्ण कहता है, मगर पूर्ण है नहीं, क्योंकि उसके जीवन में कोई न कोई अधूरापन रहता ही है, धन है तो प्रतिष्ठा नहीं, प्रतिष्ठा है तो पुत्र नहीं है, पुत्र है तो सौभाग्य नहीं है, सौभाग्य है तो रोग-रहित जीवन नहीं है। यदि आधुनिक विज्ञान के अनुसार मानव शरीर की चीड़-फाड़ की जाय, तो उसमें से केवल मांस निकलेगा, हड्डियां निकलेंगी, रुधिर निकेलगा, मल-मूत्र निकलेगा।

इसके अलावा शरीर के अन्दर कुछ ऐसी चीज नहीं हैं, जिससे कि इस शरीर पर गर्व किया जा सके। हम भोजन करते हैं, वह भी मल बन जाता है। हम चाहे हलवा खायें, चाहे घी खायें, चाहे रोटी खायें, उसको परिवर्तित मल के रूप में ही होना है।

सामान्य मानव शरीर में ऐसी कोई क्रिया नहीं होती, जो उसे दिव्य और चेतना युक्त बना सके और ऐसा शरीर अपने आप में व्यर्थ है, खोखला है, उस देह में उच्चकोटि का ज्ञान, उच्चकोटि की चेतना समाहित नहीं हो सकती।

आप चाहे कुछ भी खा-पी लें, उससे इस शरीर में किसी प्रकार की कोई विशेषता उत्पन्न नहीं हो सकती, चेहरे पर कोई तेजस्विता प्राप्त नहीं हो सकती।

क्यों नहीं प्राप्त हो सकती?

फिर मनुष्य योनि में जन्म लेने का अर्थ ही क्या रहा?

जो पुष्प मल में पड़ा हुआ है, उसको उठा कर भगवान के चरणों में नहीं चढ़ाया जा सकता, मूत्र से सना हुआ पुष्प भगवान के चरणों में नहीं चढ़ाया जा सकता। यदि हम शरीर को भगवान के या गुरु के चरणों में चढ़ायें — हे भगवान! या हे गुरुदेव! यह शरीर आपके चरणों में समर्पित है, तो शरीर तो खुद अपवित्र है, जिसमें मल और मूत्र के अलावा है ही कुछ नहीं। ऐसे गन्दे शरीर को भगवान के चरणों में कैसे चढ़ा सकते हैं? ऐसे शरीर को अपने गुरु के चरणों में कैसे चढ़ा सकते हैं?

> यदि हम शरीर को भगवान के या गुरु के चरणों में चढ़ायें — हे भगवान! या हे गुरुदेव! यह शरीर आपके चरणों में समर्पित है, तो शरीर तो खुद अपवित्र है, जिसमें मल और मूत्र के अलावा है ही कुछ नहीं। ऐसे गन्दे शरीर को भगवान के चरणों में कैसे चढ़ा सकते हैं? ऐसे शरीर को अपने गुरु के चरणों में कैसे चढ़ा सकते हैं?

देवताओं का सारभूत अगर किसी में है, तो वह गुरु रूप में है, क्योंकि गुरु प्राणमय कोश में होता है, आत्ममय कोश में होता है। वह केवल मानव शरीर धारी नहीं होता। उसमें ज्ञान होता है, चेतना होती है, उसकी कुण्डलिनी जाग्रत होती है, उसका सहस्त्रार जाग्रत होता है। न उसे अन्न की जरूरत पड़ सकती है, न पानी की जरूरत हो सकती है, न तो उसे मूत्र त्याग की जरूरत होगी, न मल विसर्जन की जरूरत होगी। जब भूख-प्यास ही नहीं लगेगी, तो मल-मूत्र विसर्जित करने की जरुरत ही नहीं होगी।

इसलिए उच्चकोटि के साधक न भोजन करते हैं, न पानी पीते हैं, न मल-मूत्र विसर्जन करते हैं, जमीन से छः फुट की ऊंचाई पर आसन लगाते हैं और साधना करते हैं। जो इस प्रकार की क्रिया करते हैं, वे सही अर्थों में मनुष्य हैं। जो इस प्रकार की क्रिया नहीं कर सकते, जो मलयुक्त हैं, जो गन्दगी युक्त हैं, वे मात्र पशु हैं।

इस जगह से उस जगह तक छलांग लगाने की कौन सी क्रिया है? कैसे वहां पहुंचा जा सकता है? जीवन में मनुष्य कैसे बना जा सकता है?

जीवन में वह स्थिति कब आयेगी, जब जमीन से छः फुट ऊंचाई पर बैठ करके साधना कर सकेंगे? जमीन का ऐसा कोई सा भाग नहीं है, जहां पर रुधिर न बहा हो। धरती का प्रत्येक इंच और प्रत्येक कण आपने आपमें रुधिर से सना हुआ है, अपवित्र है, उस भूमि में साधना कैसे हो सकती है?

बिना पवित्रता के उच्चकोटि की साधनाएं सम्पन्न नहीं हो सकतीं, हजारों वर्षों की आयु प्राप्त नहीं की जा सकती, सिद्धाश्रम नहीं पहुंचा जा सकता और जब नहीं पहुंचा जा सकता, तो ऐसा जीवन अपने आप में व्यर्थ है, किसी काम का नहीं है, वह सिर्फ श्मशान की यात्रा ही कर सकता है।

ऐसा जीवन तो आपकी पिछली अनेक पीढ़ियां व्यतीत कर चुकी हैं और अब उनका नामोनिशान भी बचा नहीं है। आपको अपने दादा-परदादा के सब नाम तो मालूम हैं, लेकिन आपको यह नहीं मालूम, कि आपके परदादा के पिता कौन थे, उन्होंने क्या कार्य किया और किस प्रकार उन्होंने अपना जीवन बिताया, यदि आप भी ऐसा ही करना चाहते हैं, तो फिर आपको जीवन में गुरु की कोई जरूरत ही नहीं है।

> भगवान श्रीकृष्ण के शरीर से अष्टगंध प्रवहित हुई, राम के शरीर से अष्टगन्ध प्रवहित हुई, बुध के शरीर से अष्टगन्ध प्रवहित होती थी, उच्चकोटि के योगियों से अष्टगंध प्रवहित होती है . . . तो आपमें क्या कमी है, जो अष्टगंध प्रवहित नहीं होती? आप जब निकलें, तो दुनिया वाले मुड़ कर देखें, कि पास में से कौन निकला? यह सुगन्ध कहां से आई? इसके व्यक्तित्व में क्या है?

यह शरीर कितना अपवित्र है, कि चार दिन भी बाहर के वातावरण को झेल नहीं सकता। यदि आप चार दिन स्नान नहीं करें, तो आपके शरीर से बदबू आने लगेगी, कोई आपके पास बैठना भी नहीं चाहेगा, बात भी करना नहीं चाहेगा। जबकि भगवान श्रीकृष्ण के शरीर से अष्टगंध प्रवहित हुई, राम के शरीर से अष्टगन्ध प्रवहित हुई, बुद्ध के शरीर से अष्टगन्ध प्रवहित होती थी, उच्चकोटि के योगियों से अष्टगंध प्रवहित होती है।

तो आपमें क्या कमी है, जो अष्टगंध प्रवहित नहीं

होती? आप जब निकलें, तो दुनिया वाले मुड़ कर देखें, कि पास में से कौन निकला? यह सुगन्ध कहां से आई? इसके व्यक्तित्व में क्या है?

और यदि ऐसा व्यक्तित्व नहीं बना, तो जीवन का मूल अर्थ, मूल लक्ष्य नहीं प्राप्त हो सकता, जिसके लिए देवता भी इस पृथ्वी लोक पर जन्म लेने के लिए तरसते हैं। राम के रूप में जन्म लेते हैं, कृष्ण के रूप में जन्म लेते हैं, बुद्ध के रूप में जन्म लेते हैं, महावीर के रूप में जन्म लेते हैं, ईसा मसीह के रूप में जन्म लेते हैं, पैगम्बर मोहम्मद के रूप में जन्म लेते हैं।

इस शरीर को पवित्र बनाने के लिए, यह आवश्यक है कि हम देह तत्त्व से प्राण तत्त्व में चले जायें। जब प्राण तत्त्व में जायेंगे, तो फिर देह तत्व का भान रहेगा ही नहीं।

फिर जीवन के सारे क्रियाकलाप तो होंगे, मगर फिर मल-मूत्र की जरुरत नहीं रहेगी, फिर भोजन और प्यास की जरुरत नहीं रहेगी, फिर शून्य सिद्धि आसन लगा सकेंगे, फिर शरीर से सुगन्ध प्रवहित हो सकेगी और एहसास हो सकेगा, कि आप कुछ हैं।

प्राण तत्त्व में जा कर आपमें चेतना उत्पन्न हो सकेगी, अन्दर एक क्रियमाण पैदा हो सकेगा, सारे वेद, सारे उपनिषद् कंठस्थ हो पायेंगे।

आप कितनी साधना करेंगे?

कितने मंत्र जपेंगे?

कब तक जपेंगे?

ज्यादा से ज्यादा साठ साल की उम्र तक, सत्तर तक। लेकिन आपके जीवन का अधिकांश समय तो व्यतीत हो चुका है, जो बचा है, वह भी सामाजिक दायित्वों के बोझ से दबा हुआ है। फिर यह जीवन अद्वितीय कैसे बन सकेगा? और अद्वितीय नहीं बना, तो फिर जीवन का अर्थ भी क्या रहा?

कृष्ण को कृष्ण के रूप में याद नहीं किया, कृष्ण को जगत् गुरु के रूप में याद किया जाता है। उनको गुरु क्यों कहा जाता है? इसलिए, कि उन्होंने उन साधनाओं को, उस चेतना को प्राप्त किया, जिसके माध्यम से उनके शरीर से अष्टगंध प्रवहित हुई। उनका प्राण तत्त्व जाग्रत हुआ।

मैं आपको एक अद्वितीय साधना दे रहा हूं, हजार साल बाद भी आप इस साधना को अन्यत्र प्राप्त नहीं कर पायेंगे, पुस्तकों से आपको प्राप्त नहीं हो पायेगा, गंगा किनारे बैठ करके भी प्राप्त नहीं हो पायेगा, रोज-रोज गंगा में स्नान करने से भी नहीं प्राप्त हो पायेगा। यदि गंगा में स्नान करने से ही कोई उच्चता
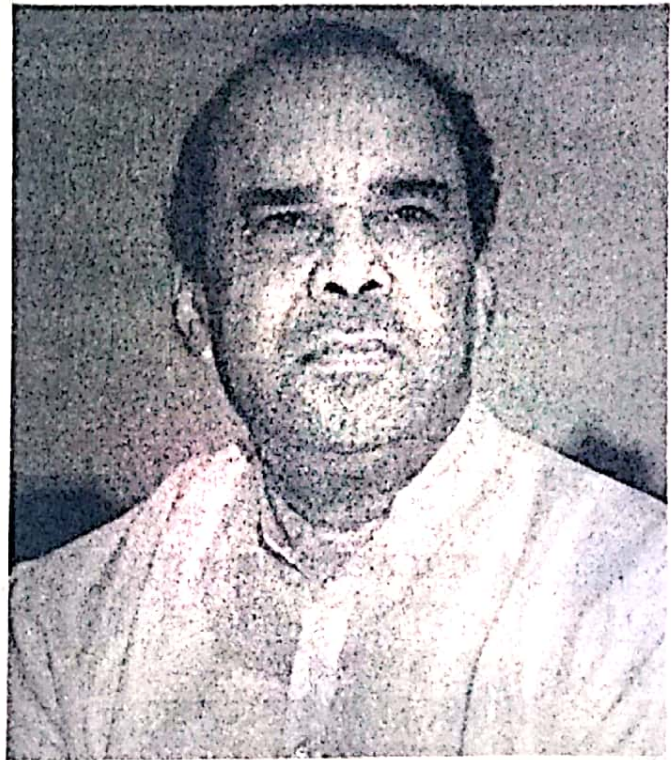
प्राप्त होती, तो मछलियां तो उस जल में ही रहती हैं, वे अपने आप में बहुत उच्च बन जातीं।

जीवन में अद्वितीयता हो, यह जीवन का धर्म है। हमारे जैसा कोई दूसरा हो ही नहीं। ऐसा हो, तब जीवन का अर्थ है। ऐसा जीवन प्राप्त करने के लिए बस एक ही उपाय है, कि हम ऐसे गुरु की शरण में जायें, जो अपने आप में पूर्ण प्राणवान हों, तेजस्विता युक्त हों, वाणी में गम्भीरता हो, आंख में तेज हो, वह जिस को देख लें, वह सम्मोहित हो, अपने आपमें सक्षम हों और पूर्ण रूप से ज्ञाता हो।

लेकिन आपके पास कोई कसौटी नहीं है, कोई माप-दण्ड नहीं है। आप उनके पास बैठ कर उनके ज्ञान से, चेतना से, प्रवचन से एहसास कर सकते हैं। यदि आपको जीवन में सद्गुरु की प्राप्ति हो गई, तो आपको जीवन का अर्थ समझ में आयेगा, तब आपको गर्व होगा, कि आप एक सद्गुरु के शिष्य हैं, जिनके पास हजारों-हजारों पोथियों जैसा ज्ञान हैं।

यदि व्यक्ति में जरा भी समझदारी है, यदि उसमें समझदारी का एक कण भी है, तो पहले तो उसे यह चिन्तन करना चाहिए, कि उसे ऐसा जीवन जीना ही नहीं है, जो मल-मूत्र युक्त है, क्योंकि ऐसे जीवन की कोई सार्थकता ही नहीं है और फिर उसे सद्गुरु को प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए, जो उसे तेजस्विता युक्त बना सकें, जो उसे प्राण तत्त्व में ले जा सकें, जो उसके शरीर को सुगन्ध युक्त बना सकें।

यदि ऐसा नहीं किया, तो भी यह शरीर रोग ग्रस्तता और

बिना पवित्रता के
उच्चकोटि की साधनाएं
सम्पन्न नहीं हो सकतीं,
हजारों वर्षों की आयु
प्राप्त नहीं की जा सकती,
सिद्धाश्रम नहीं पहुंचा जा सकता
और जब
नहीं पहुंचा जा सकता, तो
ऐसा जीवन
अपने आप में व्यर्थ है,
वह सिर्फ श्मशान की
यात्रा ही कर सकता है।
आप अपने जीवन को
सार्थक कर सकें,
इसलिए ही तो आपके लिए
पूज्य गुरुदेव ने
आशीर्वाद स्वरूप
यह साधना विधान
प्रदान किया है —

वृद्धावस्था को ग्रहण करता हुआ मृत्यु को प्राप्त हो ही जायेगा। फिर वह क्षण कब आयेगा, जब आप दैदीप्यमान बन सकेंगे? कब आपमें भावना आयेगी, कि मुझ को दैदीप्यमान बनना ही है, अद्वितीय बनना है, सर्वश्रेष्ठ बनना है?

ऐसा तब सम्भव हो सकेगा, जब आपके प्राण, गुरु के प्राण से जुड़ेंगे, जब आपका चिन्तन गुरुमय होगा, जब आपके क्रिया-कलाप गुरुमय होंगे। और इसके लिए एक ही क्रिया है — अपने शरीर में पूर्णता के साथ गुरु को स्थापित कर देना, जीवन में उतार देना।

शरीर में उनका स्थापन होते ही उनकी चेतना के माध्यम से यह शरीर अपने आपमें सुगन्ध युक्त, अत्यन्त दैदीप्यमान और तेजस्वी बन सकेगा, जीवन में अद्वितीयता और श्रेष्ठता प्राप्त हो सकेगी, जीवन में पवित्रता आ सकेगी, प्राण तत्त्व की यात्रा सम्भव हो सकेगी और उनका ज्ञान आपके अन्दर उतर सकेगा।

साधना विधान

- इस साधना में आवश्यक सामग्री **'गुरु हृदयस्थ स्थापन यंत्र'** व **'साफल्य माला'** है।
- इस साधना को 14-6-97 **किसी भी गुरुवार से** प्रारम्भ कर सकते हैं।
- साधक इस साधना हेतु पीले रंग का वस्त्र धारण करें तथा पीला आसन बिछायें, गुरु पीताम्बर अवश्य ओढ़ लें।
- बाजोट पर पीले रंग का वस्त्र बिछा कर उस पर 'गुरु हृदयस्थ स्थापन यंत्र' को स्थापित करें।
- घी का दीपक लगायें।
- गुरु ध्यान करें —

दीर्घो सदां वै परिपूर्ण रूपं,
गुरुत्वं सदैवं भगवन् प्रणम्यम्।।
त्वं ब्रह्म विष्णु रुद्र स्वरूपं,
त्वदीयं प्रणम्यं, त्वदीयं प्रणम्यम्।।
न चेतो भवाब्धे रवि नेत्र नेत्रं,
गंगा सदैव परमं च रुद्रं।।
विष्णोर्वतां मेवतमेव सिन्धुं,
एको हि नामं गुरुत्वं प्रणम्यम्।।
आत्मो वतां पूर्ण मदैव नित्यं,
सिद्धाश्रमोऽयं भगवन् स्वरूपम्।।
दीर्घो वतां नित्य सदेवं तुरीयं,
त्वमेवं शरण्यं त्वदीयं शरण्यम्।।
एको हि कार्यं एको हि नाम,
एको हि चिन्त्यं एको विचिन्त्यं।।
एको हि शब्द एको हि पूर्वं,
गुरुत्वं शरण्यं गुरुत्वं शरण्यम्।।

- यंत्र का केसर, अक्षत, पुष्प तथा नैवेद्य अर्पित कर पूजन करें।
- फिर पंजों के बल खड़े हो कर निम्न मंत्र का एक माला मंत्र जप करें, ऐसा 21 दिन तक करें —

मंत्र

।। ॐ ह्रीं त्रिं मम रक्त बिन्दु
हृदयस्थ गुरु स्थापितं त्रिं ह्रीं ॐ।।

OM HREEM NRIM RAKTA BINDU HRIDYASTHA GURU STHAPITAM NRIM HREEM OM

- 21 दिन के पश्चात् यंत्र व माला को नदी में प्रवाहित कर दें।

यह मंत्र अपने आपमें अत्यन्त चैतन्य मंत्र है। इतना अवश्य ध्यान रखें, कि यह साधना पंजों के बल खड़े हो कर ही करनी है, बैठ कर या किसी अन्य आसन में इस साधना को सम्पन्न नहीं किया जा सकता। **न्यौछावर — 260/-**

इस साधना के माध्यम से गुरु आपके रक्त के कण-कण में स्थापित हो सकें और आपका जीवन दिव्य, उदात्त, पवित्र और श्रेष्ठ बन सके। **प्रस्तुति—श्रीमती कनक पाण्डे**

9-7-98

'गुरुतत्व' को धारण करने की साधना है
गुरुत्व साधना

ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः पूजा मूलं गुरोः पदम
मंत्र मूलं गुरोर्वाक्यं, मोक्ष मूलं गुरोः कृपा

जीवन की क्षुद्रता, न्यूनता को समाप्त करने में गुरु ही सर्व समर्थ होते हैं, अतः साधक, शिष्य को यथा सम्भव प्रयास कर गुरु साधना करना ही चाहिए, क्योंकि किसी भी तंत्र प्रयोग की तीव्रता गुरु साधना से अधिक हो ही नहीं सकती।

जब शिष्य अपने हृदय, देह, प्राण, रोम प्रतिरोम में गुरु का स्थापन कर लेता है, तो उसके रक्त के कण-कण से गुरुदेव की ध्वनि उच्चरित होने लगती है। गुरु स्वयं उसके हृदय में आकर स्थापित हो जाते हैं। ऐसा तब होता है जब शिष्य अपने छल, कपट, चालाकी आदि को समाप्त कर देता है . . . और ऐसा तब होता है जब वह अपने हाड़-मांस के शरीर को मल-मूत्र से न भर कर, गुरु के प्रेम से सराबोर कर लेता है।

यह साधना तो 'स्व' को समाप्त करने की है और जैसे-जैसे वह इस साधना में अग्रसर होगा, उसी क्रम में गुरु उसके हृदय में स्थापित होने लगेंगे, गुरु का स्थापन तो वहीं हो सकता है, जहां रिक्तता होगी, क्योंकि गुरु हाड़-मांस का शरीर नहीं वरन् ब्रह्माण्ड की विराटता को समेटे हुए उसके हृदय में स्थापित होते हैं और यही विराटता वह अपने शिष्य को भी प्रदान कर देते हैं।

शिष्य को तो प्रारम्भिक अवस्था बनानी पड़ेगी। दिखाना पड़ेगा, कि उसमें क्षमता है, कि वह विराटता को धारण कर सकता है, उसे अपनी योग्यता सिद्ध करनी ही पड़ेगी, उसे अर्जुन की भांति संधान का अभ्यास करना ही पड़ेगा, कृष्ण की भांति गुरु की सेवा करनी ही पड़ेगी। गुरु के प्रति विश्वास व्यक्त करना ही पड़ेगा, गुरु के लिए समर्पण बनाना ही होगा, क्योंकि इसके बिना वह गुरु के हर कार्य को तौलने लगता है, गुरु के कार्य को अपनी बुद्धि की कसौटी पर रखकर उसे देखता है। वहां वह शिष्य नहीं आलोचक बनने लगता है, वह गुरु की क्रिया को नहीं समझ सकता है, विराटता को समझने के लिए विराटता ही धारण करनी पड़ेगी। जब शिष्य पूर्णतया गुरु के अनुकूल होगा तभी वह उनके कार्यों को समझ सकता है।

इसी अग्नि से शिष्य अपने विकारों को समाप्त करने में सफल होता है और जब वह अपने स्व को समाप्त कर लेता है, तो स्वयं ही उस विराटता को स्थापित कर लेता है। वह स्वयं में ही इतनी क्षमता प्राप्त कर लेता है, कि शनैः-शनैः विराटता को ग्रहण करता हुआ वह स्वयं पूर्ण हो जाता है।

यही क्रिया, तो पूज्य गुरुदेव डॉ० नारायण दत्त श्रीमाली जी करवा रहे हैं। आज अधिकांश लोगों का चिन्तन अत्यधिक स्वार्थपूर्ण हो गया है, वह स्व से हटकर कुछ सोचना ही नहीं चाहते, यदि वह बहुत अधिक विस्तारित हैं, तो वह अपने आस-पास के वातावरण तक ही सीमित रहते हैं, इससे अधिक वह कुछ करने की हिम्मत नहीं कर पाते हैं। गुरुदेव उनकी इस क्षुद्रता को समाप्त कर, उन्हें स्व से ऊपर उठाने की क्रिया कर रहे हैं और यह क्रिया वे अपने लिए नहीं वरन समाज में व्याप्त उस क्षुद्रता से परिपूर्ण चिन्तन को समाप्त करना चाहते हैं।

उनका चिन्तन मात्र कल्याण करने की भावना है - शिष्यों में किसी प्रकार की अपूर्णता न रह जाए। वे इसके लिए, अपनी शक्ति, अपनी ऊर्जा को शिष्य में प्रवाहित करने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं। वे देखते रहते हैं, कि कहीं उस चिंगारी को कहीं कोई हवा का झोंका बुझा न दे, समाज कहीं उस चिंगारी पर रेत न डाल दे। दीक्षाओं और साधनाओं के माध्यम से वे निरन्तर प्रयत्नशील रहते हैं, कि उनकी जलाई हुई चिंगारी बुझने न पाए।

शिष्य धर्म ऐसा है, कि यदि चिंगारी लगी है, तो एक दिन आग भी अवश्य धधकेगी, परन्तु इसके लिए तो शिष्य को स्वयं ही प्रयत्न करना चाहिए - परम्परा तो यही है, परन्तु गुरुदेव तो समस्त परम्पराओं को समाप्त करते हुए अपने शिष्यों को विराटता प्रदान करने की क्रिया में गतिशील हैं।

वे निरन्तर प्रयत्नशील हैं, सहयोग आपको देना है, क्योंकि गुरुदेव ने इस क्रिया को इतना सरल एवं सहज बना दिया है, कि शिष्य अपने अल्प प्रयासों से ही विराटता को धारण करने में समर्थ हो जाता है और पूर्णता की ओर अपने कदम बढ़ा देता है।

परन्तु समाज तो अपनी प्रवृत्ति के अनुसार किसी भी दिव्य क्रिया को सहजता से होने ही नहीं देता है, वह हर चिंगारी पर रेत डालने को व्यग्र रहता है, क्योंकि यदि विराटता प्राप्त हो जाएगी तो अहं समाप्त होने लगेगा और व्यक्ति का अहं अपनी समाप्ति स्वीकार नहीं कर पाता है। परन्तु पूज्य गुरुदेव ने भी यह निश्चय कर रखा है, कि वे किसी भी चिंगारी को बुझने नहीं देंगे और उसे समर्थ बना देंगे, जिससे कि वह पूर्णता को धारण कर सके। लेकिन इसके लिए तो निरन्तर गुरुदेव से सम्पर्क स्थापित करना पड़ेगा।

यदि गुरु निश्चय कर लेते हैं, तो उसे पूरा करने की सामर्थ्य भी रखते हैं। वह ऐसी परिस्थितियां भी निर्मित कर लेते हैं, कि उनकी लगाई हुई चिंगारी एक आग में परिवर्तित हो सके। गुरुदेव अपने शिष्यों को पूर्णता प्रदान कर देना चाहते हैं और इस क्रिया को करने में संलग्न भी हैं, पर प्राप्त करने के लिए हमें आगे तो आना ही पड़ेगा। यदि रेत के ढेर में दबने में ही हमें प्रसन्नता है, तो फिर इसमें न्यूनता तो हमारी ही है। आनन्द तो बह रहा है, यदि प्राप्त करना है, तो आगे बढ़ना ही पडेगा, पहुंचना ही होगा उस स्थान तक जहां पर यह क्रिया निरन्तर चल रही है।

इस अवस्था को प्राप्त करने के लिए जिस साधना की विशिष्टता है, उसे यहां प्रस्तुत किया जा रहा है; इसे आप गुरु पूर्णिमा के दिन ही सम्पन्न करें।

गुरु पूजन विधि

प्रातः स्नानादि नित्य क्रिया को समाप्त कर शुद्ध भावनाओं से पूजा स्थल में जो पहले से ही स्वच्छ कर लिया गया हो, पूर्व या उत्तर दिशा की ओर आसन बिछा कर बैठें। अपने सामने एक चौकी पर सफेद वस्त्र बिछा कर उसमें पूज्य गुरुदेव का प्राण प्रतिष्ठित चित्र स्थापित करें।

सामग्री – **'निखिलेश्वरानन्द दिव्य चैतन्य सिद्धि यंत्र', 'गुरु प्रत्यक्ष दर्शन गुटिका', 'गुरु प्राण संजीवनी माला'**

पूजन से पूर्व शुद्ध घी का दीपक जला लें, घी का दीपक पूजन काल में सदैव साधक के दाहिनी ओर रखें। निम्न मंत्र से दीपक का पूजन रोली और अक्षत (चावल) से करें –

ॐ दीप ज्योतिषे नमः

ॐ दीपस्थ देवतायै नमः

फिर प्रार्थना करें –

भो दीप! देव रूपस्त्वं कर्म साक्षी ह्यविघ्नकृत्।
यावत् कर्म समाप्तिः स्यात् तावदत्र स्थिरो भव॥

इसके बाद दोनों हाथ जोड़कर अपने इष्टदेव का स्मरण करें –

सर्वमंगल मांगल्यं वरेण्यं वरदं शुभम्।
नारायण नमस्कृत्य सर्वकर्माणि कारयेत्॥

पवित्रीकरण

बाएं हाथ में जल लेकर दाहिने हाथ की अंगुली से अपने ऊपर जल छिड़कें –

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं सः बाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥

गुरु प्रणाम

दोनों हाथ जोड़ें –

ॐ ऐं गुरुभ्यो नमः

ॐ ऐं परम गुरुभ्यो नमः

ॐ ऐं परापर गुरुभ्यो नमः

ॐ ऐं पारमेष्ठि गुरुभ्यो नमः

जीवन्यास

अपने हृदय पर दाहिना हाथ रखकर अपनी प्राण प्रतिष्ठा करें –

आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः

मम प्राणाः इह प्राणाः।

आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः

मम जीव इह स्थितः।

आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः

मम सर्वाणि इन्द्राणि, वाङ् मनः चक्षुः त्वक्
श्रोत्र घ्राण जिह्वा इहैव आगत्य सुखं चिरं तिष्ठतु।

गणपति का ध्यान करें–

ॐ तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि तन्नो दन्ति प्रचोदयात्

ॐ गं इदं स्नानं गणेशाय नम:

ॐ गं एष गन्ध: सचन्दनं सपुष्पं गणेशाय नम:

ॐ गं एष धूप: साक्षतं गणेशाय नम:

ॐ गं एष दीप: नैवेद्येन सहितं गणेशाय नम:।

दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम कर लें।

गुरु चित्र को स्नान करावें –

ॐ गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।

नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु।

चित्र व यंत्र को पोंछ दें।

ॐ ऐं इदं स्नानं श्री गुरु चरणेभ्यो नम:। (स्नान)

ॐ ऐं एष गन्ध: श्री गुरुचरणेभ्यो नम:। (तिलक करें)

ॐ ऐं इदं पुष्पं श्री गुरुचरणेभ्यो नम:। (पुष्प चढ़ावें)

ॐ ऐं एष धूप: श्री गुरुचरणेभ्यो नम:। (धूप दिखाएं)

ॐ ऐं एष दीप: श्री गुरुचरणेभ्यो नम:। (दीप दिखाएं)

ॐ ऐं इदं नैवेद्यं समर्पयामि। (नैवेद्य अर्पित करें)

गुरु चित्र के सामने एक थाली रखें। अष्ट गन्ध या कुंकुम से त्रिकोण बना लें (△ॐ) मध्य में ॐ लिखकर **'निखिलेश्वरानंद दिव्य चैतन्य सिद्धि यंत्र'** को स्थापित करें। **'गुरुत्व प्रत्यक्ष गुटिका'** दाहिनी ओर स्थापित करें।

स्नान

यंत्र को स्नान करावें।

स्नानं समर्पयामि श्री गुरु चरणेभ्यो नम:

इसके बाद निम्न मंत्र बोलते हुए कुंकुम से चावल रंगकर बाएं हाथ में लेकर यंत्र पर चढ़ावें –

ॐ गुं गुरवे नम:

ॐ गुं परम गुरवे नम:

ॐ गुं परात्पर गुरवे नम:

ॐ गुं पारमेष्ठि गुरवे नम:

ॐ गुं अनन्तात्मने नम:

ॐ गुं परमात्मने नम:

ॐ गुं ज्ञानात्मने नम:

ॐ गुं अनन्ताय नम:

ॐ गुं पारिजाताय नम:

ॐ गुं ऐश्वर्याय नम:

ॐ गुं पद्माय नम:

ॐ गुं आनन्दकन्दाय नम:

ॐ गुं संविल्लाभाय नम:

ॐ गुं प्रकृतिप्रियाय नम:

ॐ गुं ज्ञानाय नम:

ॐ गुं आधार शक्तये नम:

ॐ ऐं एष सांगाय सपरिवाराय सर्वशक्ति मयाय गुरुदेवाय निखिलेश्वराय नम:।

पीठ पूजा

निम्न मंत्र बोल कर यंत्र पर गन्ध और पुष्प चढ़ावें।

ॐ ह्रीं एते गन्ध पुष्पे पीठ देवताभ्यो नम:।

ॐ ह्रीं एते गन्ध पुष्पे पीठ शक्तिभ्यो नम:।

ॐ ऐं इदं पुष्पं ब्रह्माण्डस्वरूपाय निखिलेश्वराय नम:

ॐ ऐं एष धूप: ब्रह्माण्डस्वरूपाय निखिलेश्वराय नम:

ॐ ऐं एष दीप: ब्रह्माण्डस्वरूपाय निखिलेश्वराय नम:

ॐ ऐं इदं नैवेद्यं ब्रह्माण्डस्वरूपाय निखिलेश्वराय नम:

ॐ ऐं इदं आचमनीयं श्री निखिलेश्वराय नम:।

ॐ ऐं इदं ताम्बूलं श्री निखिलेश्वराय नम:।।

आवरण पूजा

निम्न मंत्रों से यंत्र पर सुगन्धित पुष्प चढ़ावें –

ॐ ऐं एष गन्धपुष्पे निखिलेश्वरानन्द देवताभ्यो नम:

ॐ ऐं एष गन्धपुष्पे परम गुरुभ्यो नम:

ॐ ऐं एष गन्धपुष्पे परापर गुरुभ्यो नम:

ॐ ऐं एष गन्धपुष्पे पारमेष्ठि गुरुभ्यो नम:

इसके बाद **'गुरु प्राण संजीवनी माला'** से ११ माला मंत्र जप करें –

मंत्र

।।ॐ परम तत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नम:।।

OM PARAM TATVAAY NAARAAYANNAAY GURUBHYO NAMAH

जप समर्पण

ॐ गुह्याति गुह्य गोप्ता त्वं गृहाणास्मत् कृतं जपं सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादान्महेश्वर।

इसके बाद आरती करें तथा प्रसाद वितरण करें। साधना समाप्ति के बाद यंत्र, माला तथा गुटिका को जल में विसर्जित कर दें।

न्यौछावर – २६०/-

गुरु आत्म स्थापन साधना

24.12.98 अथवा किसी भी मास की 21 तारीख
या गुरु श्रद्धाञ्जलि समर्पण दिवस

जिससे शिष्य सद्गुरु के दिव्य भाव को आत्मसात कर लेता है

शिष्य जब समर्पण भाव में आ जाता है और वह गुरु के साथ एकाकार होने के लिए मन मस्तिष्क और हृदय से दृढ़ हो जाता है, तो गुरु शिष्य के साथ आत्म लीन होकर उसे अपना सम्पूर्ण प्यार उड़ेल देते हैं।

परम पूज्य सद्गुरुदेव डॉ० नारायण दत्त श्रीमाली जी, जो हम सबके सद्गुरुदेव हैं एवं हमारे प्राणप्रिय हैं, उन्होंने अपनी क्रिया द्वारा यह भौतिक देह भले ही छोड़ दी हो, वे सिद्धाश्रम में पूज्य श्री निखिलेश्वरानन्द स्वरूप में विराजमान हैं और आत्मिक रूप से हम सबके मध्य ही तो स्थित हैं।

> जब तक शिष्य शिष्यत्व भाव से रहते हुए सद्गुरु को आत्मसात करता है, तभी तक उसे दिव्य आशीर्वाद केवल स्वयं के लिए प्राप्त होता रहता है।

मात्र शिष्यों के कल्याण के लिए ही वे आए और उनकी नजर में प्रत्येक शिष्य समान ही रहा, चाहे वह एक वर्ष से जुड़ा हो या दस वर्ष से या दस दिन से या अभी भी जुड़ने का मानस बना रहा हो, तभी तो करुणा से वशीभूत होकर वे यह साधना दे गए, जिसको सम्पन्न कर आप हर समय गुरु की सान्निध्यता का अनुभव कर सकते हैं।

एकलव्य गुरु द्रोण के आश्रम से काफी दूर जंगलों में रहता था, उसने वहां गुरु की मूर्ति स्थापित कर अभ्यास जारी रखा। गुरु द्रोण सदैव उस मूर्ति में प्राण स्वरूप में विराजमान रहते थे और एकलव्य को प्रेरणा दिया करते थे, यह रहस्य केवल एकलव्य और गुरु द्रोण ही जानते थे। सशरीर रूप में कभी सामने न आकर भी एकलव्य को मात्र धनुर्विद्या में ही नहीं अपितु अपना सर्वस्व ज्ञान देकर पूर्ण कर दिया।

प्रस्तुत '**गुरु आत्म स्थापन साधना**' पूज्य द्रोणाचार्य द्वारा एकलव्य को दी गई साधना का परिवर्द्धित रूप है, जिससे साधक गुरु कृपा प्राप्ति के लिए तीव्रता से अग्रसर हो सकें और उन्हें गुरुदेव के सानिध्य का एहसास होना प्रारम्भ हो जाए। एकलव्य ने भी साधना के द्वारा ही गुरु द्रोण की सूक्ष्म उपस्थिति को साकार किया था, आवश्यकता है तो मात्र इस साधना को पूर्ण श्रद्धा एवं विश्वास से सम्पन्न करने की।

अभी तक यह साधना गोपनीय ही रही है, परन्तु अब वर्तमान समय को देखते हुए, शिष्यों की तड़फ और बेचैनी का अनुभव करते हुए, उनकी वेदना को समझते हुए ही इस साधना को उजागर किया जा रहा है।

इस साधना को **24.12.98 अथवा शुक्ल पक्ष के किसी भी गुरुवार, अथवा किसी भी मास की 21 तारीख, अथवा किसी भी मास के 'गुरु श्रद्धाञ्जलि समर्पण दिवस' (शुक्ल पक्ष की नवमी)** से प्रारम्भ किया जा सकता है। स्नान आदि से निवृत्त होकर उत्तराभिमुख हो पूजा स्थल में एक श्वेत वस्त्र बिछाकर सद्गुरुदेव का एक चैतन्य चित्र स्थापित करें। चित्र ऐसा हो, जिसे आप स्नान करा सकें, विधिवत पूजन कर सकें, तिलक लगा सकें, ऐसा भव्य चित्र हर समय आपके पूजा स्थान में स्थापित रहे। इस चित्र →

→ के साथ ही सिद्धाश्रम चेतना युक्त '**गुरु आत्म यंत्र**' भी स्थापित करें। उसके बाद सद्गुरुदेव के ललाट, कान, कण्ठ, हृदय स्थान, नाभि, दोनों भुजाओं पर चन्दन से तिलक करें। यह तिलक बिन्दी स्वरूप हो, तत्पश्चात् गुरु चित्र पर सुगन्धित माल्यार्पण करें।तदनन्तर निम्न मंत्र का १०५ बार उच्चारण करते हुए गुरु चित्र और यंत्र पर अक्षत चढ़ाते हुए गुरुदेव का आवाहन करें।

आवाहयामि आत्म स्वरूपं, आवाहयामि प्राण स्वरूपं। आवाहयामि मम देह चिन्त्यं, गुरुत्वं शरण्यं गुरुत्वं शरण्यं॥

अब आप अपने सामने एक कटोरी में चन्दन लेकर उसे अपने शरीर के अंगों (ललाट, कान, कण्ठ, हृदय स्थान, नाभि, दोनों भुजाओं) पर लगाएं और निम्न मंत्र का उच्चारण करें। इन मंत्रों के उच्चारण के साथ ही गुरुदेव को अपने हृदय स्थान पर विराजमान होने का भाव रखें –

ॐ कूर्माय नमः, ॐ आधार शक्तये नमः, ॐ पृथिव्यै नमः, ॐ धर्माय नमः, ॐ ज्ञानाय नमः, ॐ सवित्रालाय नमः, ॐ ऐश्वर्याय नमः, ॐ विकारमयकेशरेभ्यो नमः, पंचाशर्णाबीजाद्याकर्णिकायै नमः, ॐ वैराग्याय नमः, ॐ अनैश्वर्याय नमः, ॐ अनन्ताय नमः, ॐ सर्वतत्वात्मकाय नमः, ॐ आनन्दकन्द कन्दाय नमः, ॐ प्रकृतमयपत्रेभ्यो नमः।

चूंकि आप दीक्षित शिष्य हैं, और नित्य गुरु मंत्र का जप करते हैं, अतः मंत्र जप से पूर्व जिस माला से गुरु मंत्र जप करते हैं, उस माला से गुरु मंत्र की ४ माला जप करें, इसके बाद गुरु आत्म स्थापन मंत्र की '**गुरु सिद्धि माला**' से २१ माला **गुरु आत्म स्थापन मंत्र** का जप करें।

॥ ॐ ह्रीं क्लीं गुरुत्व आत्मैक्यं ह्रीं फट् ॥

Om Hreem Kleem Gurutva Aatmeikyam Hreem Phat

यह २१ दिन की साधना है और इसे प्रातः काल अथवा रात्रि में ही सम्पन्न करना चाहिए। मंत्र जप के बाद साधक को दस मिनट शवासन में लेट जाना चाहिए। ऐसा करने से मनोरम प्राकृतिक दृश्य दिखाई दे सकते हैं। इस साधना से अनेक प्रकार के अनुभव होते हैं।

२१ दिन के बाद माला को जल में प्रवाहित कर दें तथा यंत्र को पूजा स्थान में स्थापित कर दें। बाद में भी इस मंत्र का नित्य पन्द्रह-बीस मिनट तक जप करने के पश्चात् शवासन करें। धीरे-धीरे साधक को गुरुदेव की उपस्थिति का अनुभव होने लगेगा, आपके मन में उमड़ रहे प्रश्नों का उत्तर भी मिलने लगेगा, जीवन में साहस और निडरता आ जाएगी।

यह साधना पूज्य गुरुदेव ने आशीर्वाद स्वरूप प्रदान की है। जिसकी साधना सामग्री आप निःशुल्क प्राप्त कर सकते हैं। आप केवल दो पत्रिका सदस्य बनाएं (जो आपके परिवार के सदस्य न हों) और संलग्न पोस्टकार्ड भर कर भेज दें। हम 438/-(दो पत्रिका सदस्यता शुल्क 195+195/- डाक व्यय 48/-=438/-) की वी.पी.पी. से मंत्र सिद्ध प्राण प्रतिष्ठा युक्त 'गुरु आत्म यंत्र' और 'गुरु सिद्धि माला' भेज देंगे और आपके दोनों परिचितों को वर्ष पर्यन्त प्रति माह पत्रिका भेजते रहेंगे।

27.6.99 या चतुर्दशी

गुरु वशिष्ठ प्रणीत

गुरु अनन्त सिद्धि साधना

जिससे समस्त मनोकामनाएं पूर्ण होती ही हैं।

प्रजापिता ब्रह्मा को जहां सृष्टि का निर्माता कहा गया है, भगवान शिव को जहां संहारक कहा गया है, वहीं भगवान विष्णु को जगत का पालनकर्ता कहा गया है। इन तीनों आदि देवों में भगवान विष्णु ही ऐसे देव हैं, जिनके इंगित से संसार की गतिविधियों का संचालन होता है। **'गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णुः'** – शिष्य के लिए तो गुरु ही विष्णु भी होते हैं। शिष्य का अर्थ है समर्पण, परन्तु शिष्य के नमन होने के पश्चात् यह गुरु का कर्त्तव्य होता है, कि वह शिष्य के सुख, दुःख में भागीदार बने, अपनी तपस्यांश के माध्यम से वह शिष्य का कल्याण करे, अपने ज्ञान द्वारा उसके जीवन में आने वाली बाधाओं से उसकी रक्षा करे, उसका एक कुशल अभिभावक की तरह पालन-पोषण कहा गया है, और उनके इसी रूप के कारण गुरु को विष्णु कहा गया है।

गुरु भले ही शिष्य से सैकड़ों किलोमीटर दूर बैठे हों, परन्तु उनके मानस में प्रतिक्षण शिष्य का चिन्तन बना रहता है। चौबीस घण्टे में शिष्य भले ही एक बार भी गुरु को स्मरण न करे, परन्तु ***सद्गुरु तो वही होते हैं, जिनका शिष्य कल्याण से पृथक कोई चिन्तन नहीं होता।*** और यह शिष्य का सौभाग्य होता है, कि उसे जीवन में ऐसे गुरु प्राप्त हों। यह गुरु का पालनहार अर्थात विष्णु स्वरूप है।

भगवान विष्णु आदिदेव हैं और अनन्त देव भी हैं, जिन्हें समय की सीमा में नहीं बांधा जा सकता, उस अनन्त रूपी सद्गुरु के विष्णु स्वरूप के तेज का एक अंश भी प्राप्त हो जाए, तो फिर जीवन में कोई न्यूनता रह जाय – यह असम्भव है। श्री विष्णु आकाश तत्व के अधिष्ठाता हैं, आकाश का तात्पर्य है – विशालता, महानता, ऊंचाई और ये सब मन की स्थितियां ही तो हैं–

> **जीवन जीना है तो पूर्ण सुख, सम्मान, यश, प्रतिष्ठा, वैभव के साथ जीना ही पूर्णता है। सद्गुरु एक कुशल अभिभावक की तरह अपने विष्णु स्वरूप में अपने प्रत्येक उस साधक का लालन-पालन करते हैं, जो यह साधना सम्पन्न करता है।**

कौन अपने जीवन में आगे नहीं बढ़ना चाहता?

कौन अनन्त सिद्धियां प्राप्त नहीं करना चाहता?

उसके लिए व्यक्ति में विष्णुत्व का होना प्रबल आवश्यक है, क्योंकि **बिना विष्णुत्व के नेतृत्व की क्षमता आ पाना सम्भव नहीं है। जिसमें विष्णुत्व का उद्‌भव नहीं है, वह तो केवल आंख मूंद कर एक निश्चित मार्ग पर ही चल सकता है, उसमें लीक से हट कर एक नवीन पद्धति से कार्य करने की क्षमता, हौसला नहीं होता, ऐसा व्यक्ति तो पूरा जीवन भर घिसटता ही रहेगा।**

गुरु के विष्णु स्वरूप की साधना क्यों?

जिस प्रकार विष्णु को अनन्त कहा गया है, उसी प्रकार गुरु तत्व का भी कोई अन्त नहीं है। यह साधना उसी अनन्त की साधना है, जो साधक के शरीर में ही नहीं, मन में आए दोषों का भी निराकरण कर उसमें तेज, कर्मशीलता का

॥ नारायणाय तुभ्यं नमामि ॥
॥ जगदीश्वराय तुभ्यं नमामि ॥

उद्भव कर, साधक को विशालता की ओर, ऊंचाई की ओर ले जाती है, सूक्ष्म से विराट् की ओर, धरती से आकाश की ओर उठने की साधना '**गुरु अनन्त सिद्धि साधना**' ही तो है। इस साधना से साधक को निम्न उपलब्धियां प्राप्त होती हैं —

— इस साधना द्वारा **साधक में नेतृत्व के गुण आ जाते हैं, उसमें हीन भावना समाप्त हो जाती है, साधक जहां भी जाता है, उसे यश, मान, पद, प्रतिष्ठा, सम्मान प्राप्त होता है। उसकी वाणी में ओजस्विता आ जाती है,** जिससे लोग उसका कहना मानने लगते हैं। जिस कार्य में वह हाथ डालता है, उसमें हर कोई सहयोग देने की भावना रखते हैं, और यही तो सफल नेतृत्व के लक्षण हैं।

— **जहां विष्णु हों, वहां लक्ष्मी स्वत: ही चली आती है।** विष्णुत्व से सम्पन्न साधक के जीवन में अर्थ का अभाव तो रहता ही नहीं है। उसे पूर्ण वैभव युक्त जीवन प्राप्त होता है, जहां किसी प्रकार की कोई कमी नहीं होती — **धन, धान्य, वाहन, भवन, कीर्ति, आयु, पुत्र, पौत्र हर दृष्टि से उसका जीवन पूर्ण होता है।**

— साधक के **व्यक्तित्व में एक अद्वितीय मोहिनी आकर्षण व्याप्त हो जाता है।** पुराणों में कथा आती है कि जब समुद्र मंथन के अंत में अमृत कलश निकला, तो देव और असुरों में हलचल मच गई और हुआ यह कि कलश दानवों के हाथों में पहुंच गया। तब विष्णु ने मोहिनी का रूप धारण कर दानवों से वह कलश वापस प्राप्त किया था। इस साधना के उपरान्त *यदि साधक है, तो उसके अन्दर पुरुषोचित सौन्दर्य की वृद्धि होती है और यदि स्त्री है तो उसके अन्दर अपूर्व लावण्य व्याप्त हो जाता है।*

— इस साधना को करने के बाद साधक में सात्विक विचारों का उदय होता है। वैष्णव वस्तुत: सत्व प्रधान पद्धति ही है, **इस साधना के प्रभाव से घर में सात्विक वातावरण का निर्माण होता है,** पुत्र-पुत्रियों में सदाचार एवं शुद्ध विचारों का उदय होता है। वे सुसंस्कारों से युक्त होकर श्रेष्ठ कार्यों में संलग्न होते हैं, जिससे अभिभावकों की यशवृद्धि होती है। पत्नी में पातिव्रत्य और कुटुम्ब धर्म के प्रति चेतना प्रबल होती है, उसमें सन्तान के कल्याण के प्रति जागरूकता बढ़ती है। **ऐसे घर में देवताओं का वास होने लगता है।**

— साधनाओं का अर्थ यह नहीं है, कि समस्याएं न आएं, बाधाएं न आएं, अड़चनें न आएं। बाधाएं तो आएंगी, विपत्तियां भी आएंगी, जो विधि का लेखा है वह तो होगा ही परन्तु साधना का अर्थ यह है, कि हम उन समस्याओं से जीत सकें, उनका प्रभाव हम पर न पड़े। साधक जीवन में पग-पग पर बाधाएं आती हैं परन्तु श्री गुरुदेव विष्णु रूप में शिष्य की हर समस्याओं पर विजय प्राप्त करने का मार्ग साधक के लिए पहले से ही प्रशस्त कर देते हैं। **एक श्रेष्ठ पिता की तरह वे अपने शिष्य का लालन-पालन करते हैं।**

— नित्य सांसारिक व्यवहार करने से हमें तीन प्रकार के दोष व्याप्त होते हैं — **१. वाणी दोष** : हमें नित्य बोलचाल में और व्यवहार में असत्य उच्चारण करना पड़ता है, इस झूठ की वजह से वाणी दोष व्याप्त होता है। **२. मन दोष** : हम चाहे अनचाहे किसी के प्रति घृणा, क्रोध या दुर्भावना रखते हैं, उससे मन दोष होता है, **३. मुख दोष** : आज के युग में तो घर के बाहर कई स्थानों पर भोजन करना होता है, जहां शुद्धता पवित्रता का भान नहीं होता, ऐसी स्थिति में मुख दोष व्याप्त होता है। **इन तीनों दोषों का शास्त्रों में एक मात्र गुरु विष्णु**

अथवा अनन्त स्वरूप साधना ही उपाय है और यह भी कहा गया है, कि वर्ष में एक बार इस दिन इस साधना को सम्पन्न करने से सभी दोष समाप्त हो जाते हैं। इसके फलस्वरूप व्यक्ति में शुद्धता, चैतन्यता और तेजस्विता आ जाती है और वह जीवन में सफलता की ओर अग्रसर होने लगता है।

साधना विधि

साधक को चाहिए कि **27.6.99 अथवा किसी भी चतुर्दशी** के दिन (यह साधना सूर्योदय के पूर्व अथवा सूर्यास्त के बाद नहीं हो सकती है) स्नान आदि कर श्वेत आसन बिछा कर पूर्व की ओर मुंह कर बैठ जाए और सामने '**गुरुत्व अनंत सिद्धि यंत्र**' को स्थापित कर दे।

'**ॐ श्रीं अनंताय नमः**' मंत्र बोलते हुए यंत्र का संक्षिप्त पूजन करें। संक्षिप्त पूजा में यंत्र को पहले जल से स्नान करा लें, और फिर दूध से, दही, घृत से, शहद से, शक्कर से व पुनः शुद्ध जल से स्नान कराएं। यंत्र को पोछ कर दूसरे पात्र में चन्दन से '**ऐं**' बीज मंत्र लिखकर उस पर यंत्र को स्थापित करें। यंत्र पर चन्दन का तिलक करें। यंत्र पर चन्दन का तिलक लगाएं और एक सफेद पुष्प अर्पित करें। इसके बाद साधक शुद्ध घी का दीपक व अगरबत्ती लगाए।

इसके बाद साधक को चाहिए, कि वह पहले से ही मंगा कर रखे गए '**ब्रह्मवर्चस्वपूत यज्ञोपवीत**' को यंत्र के सामने रख दे। यह यज्ञोपवीत आपको कार्यालय से साधना सामग्री के साथ प्राप्त होगा। इस यज्ञोपवीत को यंत्र के सामने स्थापित कर दें और यज्ञोपवीत में आवाहन करें कि यज्ञोपवीत के प्रत्येक धागे में सद्गुरुदेव अनन्त स्वरूप में स्थापित हों।

इसके बाद यज्ञोपवीत को खोलकर दोनों हाथों में लेकर उसे आकाश की ओर ऊपर उठाएं और '**ॐ सूर्याय नमः**' मंत्र द्वारा उस यज्ञोपवीत में सूर्य की तेजस्विता का आवाहन करें, और मन में यह चिन्तन करें कि *इस यज्ञोपवीत के प्रत्येक धागे में गुरुदेव सूर्य की पूर्ण तेजस्विता के साथ स्थापित हो रहे हैं। सद्गुरुदेव मुझे पूर्ण तेजस्विता प्रदान करने में समर्थ हैं, मेरी हर प्रकार से लालन पालन करने में सक्षम हैं। अपने कोटि-कोटि सूर्य मण्डलों की रश्मियों द्वारा मेरे इस जीवन के व पूर्व जीवन के पापों के साथ जो भी तीन प्रकार के दोष व्याप्त हुए हैं, उनको खण्ड-खण्ड कर रहे हैं और मुझे पूर्ण चैतन्य एवं ओजस्वी बना रहे हैं।*

ऐसी भावना मन में रखते हुए यज्ञोपवीत को नीचे उतार लें और फिर उसे समेट कर यंत्र के सामने स्थापित कर दें। उस यज्ञोपवीत को गुरुदेव का प्रतीक मानकर उसकी संक्षिप्त पूजा करें, उन्हें नैवेद्य अर्पित करें और हाथ जोड़कर आजीवन कृपा बनाए रखने की प्रार्थना करें। **यदि कोई विशेष इच्छा हो, तो उसका भी उच्चारण करें।**

इसके उपरान्त हाथ जोड़कर विष्णु रूप में भगवान निखिल का सात्विक ध्यान करें —

ध्येयः सदा मंगल मूर्तिरूपः,
नारायणः सरसिजासन सन्नि विष्टः।
केयूरवान् कनककुण्डलवान किरीटी,
हारी हिरण्यमय वपुधृत शंखचक्रः॥

फिर '**शालिग्राम**' को यंत्र के ऊपर रखें तथा उसपर निम्न मंत्रों को बोलते हुए चन्दन एवं अक्षत चढ़ाएं —

ॐ आधार शक्तये नमः।
ॐ पृथिव्यै नमः।
ॐ पारिजाताय नमः।
ॐ रत्नसिंहासनाय नमः।
ॐ देवेभ्यो नमः।
ॐ ज्ञानाय नमः।
ॐ वैराग्याय नमः।
ॐ पद्माय नमः।
ॐ सत्वाय नमः।
ॐ सिद्धाश्रमाय नमः।
ॐ नारायणाय नमः।
ॐ परात्पराय नमः।
ॐ निखिलेश्वराय नमः।
ॐ सिद्धेश्वराय नमः।
ॐ कूर्माय नमः।
ॐ मणिद्वीपाय नमः।
ॐ कल्पवृक्षाय नमः।
ॐ मुनिभ्यो नमः।
ॐ धर्माय नमः।
ॐ ऐश्वर्याय नमः।
ॐ अनन्ताय नमः।
ॐ आनन्दकन्दाय नमः।
ॐ परमेश्वराय नमः।
ॐ परम तत्वाय नमः।
ॐ गुरुदेवाय नमः।
ॐ सच्चिदानन्दाय नमः।
ॐ महापद्माय नमः।

इसके बाद साधक निम्न मंत्र की **वैजयन्ती माला** से ५ माला सम्पन्न करें —

॥ ॐ नमो नारायणाय अनन्ताय विष्णवे प्रभविष्णवे श्रीं ह्रीं ॐ नमः ॥

Om Namo Naaraayannaay Anantaay Vishnnave Prabhvishnnuve Shreem Hreem Om Namah

मंत्र जप के पश्चात् गुरु आरती सम्पन्न करें और यज्ञोपवीत को गले में धारण कर लें। जिस जल से यंत्र का स्नान सम्पन्न किया गया था, उसे पंचामृत रूप में ग्रहण करें। यह साधना अत्यन्त प्रभावयुक्त है, इससे साधक की भौतिक जीवन की मनोकामनाएं अवश्य पूर्ण होती हैं। साधना समप्ति पर यंत्र व माला जल में विसर्जित करें तथा विष्णु के प्रतीक रूप में शालिग्राम को पूजा स्थान में स्थापित करें।

3.6.99 या गुरुवार

स्वामी सच्चिदानन्द प्रणीत

आद्या शक्ति साधना सिद्धि
जो कुण्डलिनी जागरण का आधार है

शिष्य के जीवन में यदि कोई होता है, तो मात्र गुरु ही होते हैं। गुरु साधना की एक स्थिति होती है, जब शिष्य की दृष्टि में देवी-देवताओं का कोई विशेष महत्व नहीं रह जाता, उसका मस्तक यदि कहीं झुकता है, तो माता-पिता, इष्ट और गुरु चरणों के अलावा अन्य कहीं भी नहीं झुकता है . . . और इससे भी ऊपर जब शिष्य के लिए इष्ट और गुरु में भी विभेद समाप्त हो जाता है, तब वह गुरु की शक्ति स्वरूप साधना करने का अधिकारी हो जाता है, क्योंकि उसके मानस में तो यह स्पष्ट होता है, कि समस्त देवी-देवताओं की यदि कहीं उपस्थिति है, तो साक्षात् गुरुदेव में है। फिर उन्हें छोड़कर अन्य कहीं भटकने से क्या लाभ?

यहां जब शक्ति शब्द का उल्लेख किया गया है, तो उसका अर्थ कोई दुर्गा या जगदम्बा से नहीं है, अपितु ***शक्ति से तात्पर्य तो उस शाश्वत निखिल तत्व से है, उस गुरुत्व शक्ति से है, जिससे समस्त ब्रह्माण्ड गतिशील है, जिसके फलस्वरूप दिन और रात होती है, ऋतुएं बदलती हैं, जन्म और मृत्यु होती है . . . और वह शक्ति जिसके पुंजीभूत होने से अनेक देवी-देवताओं का प्रादुर्भाव हुआ है।***

वह गुरुत्व शक्ति अदृश्य रूप में प्रत्येक जीव , प्रत्येक प्राणी में सुप्तावस्था में रहती है, जिसे कुण्डलिनी कहते हैं।

शरीर संरचना के अनुसार मानव मस्तिष्क तीन भागों में विभक्त है – मुख्य मस्तिष्क, लघु मस्तिष्क एवं अध: लघु मस्तिष्क। इन तीनों में ही **'अध: लघु मस्तिष्क'**, जिसे वैज्ञानिक भाषा में Medulla Oblongota कहते हैं, अति रहस्यमय है। उसका आकार अण्डे के समान होता है, जिसके

समस्त ब्रह्माण्ड जिस शाश्वत निखिल तत्व से गतिशील है, उसी गुरुत्व शक्ति की यह साधना है, जिसके प्रभाव से कुण्डलिनी शक्ति का जागरण होने की क्रिया में त्वरा आ जाती है . . . और फिर गुरु की अणिमा, महिमा, लघिमा आदि अष्टादश सिद्धियां साधक को स्वत: ही प्राप्त हो जाती हैं।

भीतर कोई द्रव्य भरा होता है। इसमें सूक्ष्मतम ज्ञान तन्तुओं का एक समुह होता है, जो अपने स्थान पर गोलाकार छल्ले की तरह एक हजार बार घूमा हुआ होता है – इसी को योग भाषा में '**सहस्रार**' की संज्ञा दी जाती है। प्राय: मनुष्यों में ज्ञानश्चेतना मूलाधार के स्तर तक ही होती है। योग साधनाओं द्वारा इस शक्ति को मूलाधार से उठा कर सहस्रार में ब्रह्म अर्थात गुरु तत्व से मिलन करा देना ही जीवन की पूर्णता है और योग सिद्धियों का सार है।

कुण्डलिनी शक्ति ही जीव की मूल शक्ति है, जिसके जाग्रत होने पर ही उसकी अनन्त की ओर की यात्रा का प्रारम्भ होता है। **मूलाधार से सहस्रार की इस यात्रा में जो शक्ति मूल रूप से सहाय्य होती है, वह गुरु की शक्ति ही होती है। इस साधना द्वारा कुण्डलिनी जागरण की क्रिया में त्वरिता आ जाती है**। यह विद्वान साधकों से छिपा नहीं है, कि कुण्डलिनी जागरण ही मनुष्य जीवन का हेतु है, शव से शिव बनने की प्रक्रिया है, बिना कुण्डलिनी शक्ति को जाग्रत किए पूर्णता प्राप्ति सम्भव ही नहीं।

यह साधना उस कुण्डलिनी शक्ति के जागरण की आधारभूत साधना है।

जब साधक गुरु की शक्ति रूप में आराधना करता है, तो सद्गुरु उसी रूप में साधक के शरीर में बीज रूप में स्थापित हो जाते हैं, और फिर शनैः-शनैः जैसे-जैसे साधक साधनाओं को सम्पन्न करता जाता है, शक्ति का यह बीज उसके अन्दर विकसित होता जाता है। और यही शक्ति बीज फिर एक एक कर सातों चक्रों को भेदता जाता है। इसी दौरान साधक को अनेकों सिद्धियों की प्राप्ति होती रहती है। इन सिद्धियों को शास्त्रों में अष्टादश सिद्धियों के नाम से जाना जाता है–

1. अणिमा 2. महिमा 3. लघिमा 4. प्राप्ति 5. प्रकाट्य 6. ईशित्व 7. वशित्व 8. कामावसायिता 9. शुद्ध स्वरूप की प्राप्ति 10. दूर श्रवण 11. दूरदर्शन 12. मनोजव 13. स्वेच्छा-वपु 14. परकाया प्रवेश 15. इच्छित मृत्यु 16. देवक्रीड़ा दर्शन 17. संकल्प सिद्धि 18. प्रभुत्व।

अणिमा, महिमा सिद्धियों का सम्बन्ध शरीर से होता है, अतः इन सिद्धियों का स्वामी अपनी इच्छा के अनुरूप सूक्ष्म या विराट् रूप धारण करता है। **लघिमा** सिद्धि प्राप्त होने पर व्यक्ति कोई भी रूप धारण कर सकता है, आकाश की तरह फैल सकता है, एक स्थान पर रहते हुए दूसरे स्थान पर जा सकता है, अदृश्य होने की सिद्धि भी मिल जाती है। साधक अपने एक रूप को अनेक रूपों में प्रकट कर सकता है।

प्राप्ति नामक सिद्धि से साधक को किसी भी स्थान से मनोवांछित वस्तु मंगा लेने की शक्ति प्राप्त हो जाती है। **प्रकाट्य** द्वारा साधक को अंतरिक्ष में विचरण करने वाले देवी, देवता, यक्ष, किन्नर, गंधर्व आदि के दर्शन होने लगते हैं। **ईशिता** की शक्ति से साधक किसी भी प्रकार का शरीर धारण कर सकता है। **वशिता** द्वारा साधक को तुरीयावस्था प्राप्त होती है, और उसे समस्त विषयों में आसक्ति समाप्त हो जाती है। इसी प्रकार आगे की सिद्धियां प्राप्त करता हुआ ***साधक गुरु के शक्ति स्वरूप की साधना करते-करते अंत में गुरु की समस्त शक्तियों का स्वामी बन जाता है।*** फिर अलग-अलग सिद्धियों के लिए उसे अलग-अलग साधनाएं करने की आवश्यकता नहीं होती है।

शक्ति मूल रूप में नारी स्वरूपा कही गई है। गुरुदेव **के इस स्वरूप की साधना करने से साधक को स्वतः ही उनकी करुणा और वात्सल्यता प्राप्त हो जाती है।** फिर उसके सामने शिष्य जीवन की कठिन और कड़ी परीक्षा कसौटियां नहीं रहतीं, वह तो एक शिशु की तरह इस साधना के द्वारा गुरु को मातृ रूप में देखता हुआ गुरु चरणों में निमग्न हो जाता है। और गुरुदेव भी करुणा के वशीभूत अपने शिष्य को गोद में उठाकर अत्यन्त मधुरता से सब कुछ प्रदान करते रहते हैं, और शिशुवत शिष्य को पता भी नहीं चल पाता कि वह बड़ा हो गया है, और उसके अन्दर विशेष शक्तियों एवं सिद्धियों का स्थापन हो गया है।

गुरुदेव के मातृत्व स्वरूप की इस साधना द्वारा साधक में मातृत्व गुणों का विकास होना कोई आश्चर्य वाली बात नहीं है। **शिष्य के अन्दर फिर व्यक्तिगत चिन्तन नहीं रह जाता, वह अपने कल्याण से ऊपर विश्व चिन्तन से आपूरित हो जाता है, परोपकार की भावना उसमें व्याप्त हो जाती है** और देवत्व के यही तो लक्षण होते हैं, निश्चय ही **इस साधना के द्वारा वह देवत्व का स्तर प्राप्त कर लेता है,** सिद्धियां तो स्वतः ही उसमें निहित हो जाती हैं, उसके लिए उसे अलग से प्रयास नहीं करना पड़ता, क्योंकि ***समस्त सिद्धियों की प्रदाता मातृ स्वरूप में, पूर्ण करुणामयी रूप में गुरुदेव उसके अन्दर ही तो विराज रहे होते हैं, एक अविनाशी शक्ति बीज बनकर।***

इस साधना द्वारा साधक के अन्दर जिस गुरुत्व शक्ति के बीज का स्थापन होता है, वही साधक को जीवन पर्यन्त गतिशील भी करता है। जिस प्रकार अग्नि तीव्र होने पर ऊपर उठती है, उसी प्रकार साधक के भीतर शक्ति तत्व का विकास

होने पर वह अपने जीवन में ऊपर उठता ही जाता है। परन्तु गुरुदेव की यह शक्ति भी उसी साधक को प्राप्त होती है, जो अपने दुर्भाग्य पर, अपनी दीनता पर, अपने आपको हीन नहीं समझता है, वरन् स्वाभिमान का सागर उसके अन्दर लहरा रहा होता है और यह तभी सम्भव है जब गुरु में शिष्य की पूर्ण आस्था एवं अटल विश्वास हो।

इस साधना को करना प्रत्येक शिष्य का सौभाग्य है, इस साधना को **3.6.99 अथवा किसी भी माह के गुरुवार** को सम्पन्न किया जा सकता है। इसमें '**गुरु मंत्र सिद्ध कुण्डलिनी जागरण यंत्र**', '**गोमती चक्र**' व '**शक्ति माला**' आवश्यक है।

साधना विधि

साधक को चाहिए कि वह प्रातःकाल उठकर स्नान आदि से निवृत्त होकर पीली धोती व गुरु चादर धारण कर उत्तर दिशा की ओर मुख कर बैठे। सामने गुरु चित्र का स्थापन कर संक्षिप्त पूजन करे, फिर **कुण्डलिनी जागरण यंत्र** को अक्षत के आसन पर स्थापित करें। यंत्र के बगल में गोमती चक्र को रखें। फिर गुरुदेव के कुण्डलिनी स्वरूप का ध्यान करें –

सिन्दूरारर्णव विग्रहां त्रिनयनां माणिक्य मौलिस्फुरद्,
तारानायक शेखरं स्मितमुखींमापीन वक्षोरुहाम्।
पाणिभ्यां मणिरत्नं पूर्णचषकं रक्तोत्पलं बिभ्रतीं,
सौम्यां रत्नघटस्थ सव्यचरणां ध्यायेत् परामम्बिकाम्॥
श्री जगदम्बायै नमः ध्यानं समर्पयामि।

जिनके शरीर का वर्ण सिन्दूर के समान लाल है, जिनके तीन नेत्र हैं, जिनके शिरोभाग में माणिक्य जटित मुकुट सुशोभित हो रहा है, जो मंद-मंद मुस्करा रहे हैं, जो अपने दोनों हाथों मणिमय पात्र तथा रक्त कमल धारण किए हैं, जिनका स्वरूप सौम्य है, जिनके चरण रत्नयुक्त घड़े पर स्थित हैं, गुरुदेव के ऐसे कुण्डलिनी स्वरूप का मैं ध्यान करता हूं।

इसके बाद निम्न मंत्र बोलते हुए यंत्र पर क्रमशः पाद्य हेतु जल, अर्घ्य हेतु दो आचमनी जल, स्नान, कुंकुम, चन्दन, धूप, दीप, नैवेद्य, पुष्पांजलि आदि अर्पित करें।

ॐ ह्रीं एतत् पाद्यं समर्पयामि नमः।
ॐ ह्रीं एतत् अर्घ्यं समर्पयामि नमः।
ॐ ह्रीं इदमाचनीयं समर्पयामि नमः।
ॐ ह्रीं इदं स्नानं समर्पयामि नमः।
ॐ ह्रीं एतं गन्धं समर्पयामि नमः।
ॐ ह्रीं इदं सचन्दनं समर्पयामि नमः।
ॐ ह्रीं एतं धूपं आघ्रापयामि नमः।
ॐ ह्रीं एतं दीपं दर्शयामि नमः।
ॐ ह्रीं इदं नैवेद्यं निवेदयामि नमः।
ॐ ह्रीं एतं पुष्पांजलिं समर्पयामि नमः।

इसके बाद निम्न मंत्र की **शक्ति माला** से ५ माला नित्य २१ दिन तक करें –

॥ गुं गुरुदेवाय ज्योतिर्मयाय भव्याय ॐ नमः॥

Gum Gurudevaay Jyotirmayaay Bhavyaay Om Namah

इसके बाद '**ॐ गुह्याति गुह्य गोप्त्री त्वं गृहाणास्मत् कृतं जपं, सिद्धि र्भवतु मे देवि त्वत् प्रसादान् महेश्वरि**' मंत्र बोलते हुए एक आचमनी जल छोड़ते हुए जप का समर्पण करें।

साधना समाप्ति के बाद समस्त सामग्री को जल में विसर्जित करें। यदि सम्भव हो तो साधना के बाद नित्य एक माह तक इस मंत्र का नित्य पांच मिनट जप करें।

साधना सामग्री पैकेट – 410/-

इस अंक में चार गुरु साधनाएं क्यों?

*यह '**निखिल जयंती अंक**' है और इसमें ब्रह्माण्ड के ४ सर्वोच्च गुरुओं द्वारा प्रणीत साधनाएं प्रस्तुत की जा रही हैं – **१. गुरु हृदय स्थापन साधना, २. तंत्र रूपेण गुरु शिव सायुज्य साधना, ३. विष्णु रूपेण गुरु अनन्त सिद्धि साधना, ४. गुरु शक्ति रूपेण आद्या शक्ति सिद्धि साधना।** पिछले कई महिनों से कार्यालय में साधकों के ढेर सारे पत्र प्राप्त हुए, जिसमें गुरु से सम्बन्धित साधनाओं को प्रकाशित करने की प्रार्थना की गई थी। गुरु साधनाओं के प्रति साधकों की ललक उनकी शिष्यता की उच्च भाव-भूमि पर अवस्थित होने का ही परिचायक है। विशेष साधनाओं को उपयुक्त समय पर किए जाने पर ही पूर्ण लाभ प्राप्त होता है, इसी कारणवश इन साधनाओं को प्रकाशित करने में विलम्ब किया गया था। परन्तु अभी आपके पास अप्रैल से लगाकर जुलाई तक ४ माह ऐसे हैं, जो कि इन चारों साधनाओं को सम्पन्न करने के लिए श्रेष्ठ हैं।*

*जो शिष्य हैं, जो वास्तव में साधना के दुरूह पथ पर कुछ प्राप्त करना चाहते हैं, जो मात्र मनोरंजन, टाइम-पास या परीक्षण हेतु ही साधना नहीं करते, अपितु वास्तव में दृढ़ संकल्पित हैं कुछ हस्तगत करने के लिए – ऐसे सभी साधकों को चाहिए कि इस वर्ष की गुरु पूर्णिमा के पहले-पहले **ही इन** चारों साधनाओं को अवश्य ही सम्पन्न करें। गुरु पूर्णिमा के पहले से ही यह साधकों का इन साधनाओं द्वारा मार्जन होगा, क्योंकि संकेत ही इस प्रकार के प्राप्त हुए हैं, कि इस वर्ष की गुरु पूर्णिमा का विशेष महत्व है।*

आत्म-प्रकाश

क्या विधाता ने मनुष्य को दो ही नेत्र दिए हैं, जिनके माध्यम से वह देख सकता है अपने चारो ओर . . . अथवा तीन नेत्र हैं ? . . . या सहस्रलोचन अर्थात हजार नेत्र हैं ?

नेत्र ही नहीं, एक-एक रोम को चैतन्य करना होगा

अनुभूतियों के लिए शरीर के एक एक रोम को एक नेत्र बनाना होगा। इन्हें जाग्रत करना होगा।

सत्य तो यह है, कि शरीर पर जितने रोम कूप हैं वह प्रत्येक रोम कूप ही अपने आप में एक नेत्र है, परन्तु प्रयोग में न आने से इन नेत्रों की शक्ति सुप्त हो गई है। पशु एवं पक्षियों में इस शक्ति का विकास कुछ अंश तक जाग्रत रहता है, जिसके कारण उन्हें पहले से ही कई घटनाओं का पूर्वाभास हो जाता है। शोध के उपरान्त यह पाया गया है, कि भूकम्प आदि घटनाओं का पूर्वानुमान पक्षियों को कई घण्टों पूर्व हो जाता है। उनमें बेचैनी बढ़ जाती है, पंख फड़फड़ाने लगते हैं, पशु भी खूंटे से अपने को छुड़ाते पाये गए हैं, चीटियां और सर्प अपने बिलों से बाहर निकलने लगते हैं, परन्तु मनुष्य को तो भूकम्प आ जाने के बाद भी कई बार अनुभव नहीं हो पाता कि भूकम्प आया भी था – अब यहीं तक सीमित रह गई है उसके अनुभूतियों की क्षमता, यहीं तक सीमित रह गया है उसका चेतना स्तर।

इसके बावजूद भी हम आध्यात्मिक अनुभूतियों की बात करते हैं, परन्तु अनुभूतियां तो बिना हृदय पक्ष के जाग्रत हुए सम्भव नहीं होतीं। अनुभूतियां वस्तुतः भाव राज्य की वस्तु हैं, एक प्रकार की भाव समाधि का लघु रूप है। गुरुदेव का भाव राज्य तो पूर्ण सुन्दरता के साथ बिखरा पड़ा है, परन्तु उस सौन्दर्य को देखने के लिए आंखें चाहिए। कुछ साधकों की समस्या है, कि उन्हें कुछ अनुभव नहीं होता है! प्रत्यक्ष रूप में कुछ दिखता नहीं है!

. . . परन्तु सच्चाई तो यह है, जिस देव स्वरूप की, *जिस देवाकृति की, जिस अनुभूति की हम कल्पना करते हैं, उसे देखने के लिए हृदय पक्ष का जाग्रत होना आवश्यक है। भीतर संवेदनशील हृदय है, तो बाहर भी सौन्दर्य है।* **यदि व्यक्ति ही अंधा है, तो उसे आंख के इलाज का उपाय खोजना चाहिए, न कि उसे सूर्य की तलाश में निकलना चाहिए। सूर्य को तो वह तभी देख सकता है, जब कोई चिकित्सक उसकी आंखों का आपरेशन कर नेत्र ज्योति को पुनः लौटा सके।**

एक बार एक अंधे व्यक्ति को भगवान बुद्ध के पास कुछ व्यक्ति लेकर आए, उसकी बुद्धि अत्यन्त कुशाग्र थी, परन्तु तेज बुद्धि के साथ ही वह तार्किक भी बहुत अधिक था। उसने अपनी आंखों से प्रकाश देखा नहीं था, इसीलिए अहं वश वह प्रकाश के आस्तित्व का अपने सशक्त तर्कों से खण्डन कर देता था। ***अंधा यदि यही मान ले कि मैं अंधा हूं, तो फिर प्रकाश के होने/न होने को प्रमाणित करने की आवश्यकता ही कहां रह जाती है? परन्तु अंधा भला क्यों मानने को तैयार कि वह अंधा है, इससे उसके मन को चोट नहीं पहुंचेगी, उसके अहंकार को ठेस नहीं लगेगी क्या?*** इसलिए प्रकाश है ही नहीं, और जब प्रकाश है ही नहीं तो भला अंधे को या किसी व्यक्ति को क्यों दिखाई पड़ेगा?

प्रकाश को झूठा साबित कर वह एक प्रकार से अपने अंधेपन को ही झूठा प्रमाणित कर रहा है। उस कष्ट से भी बचने का उपाय कर रहा था, जिसे मान लेने से उसे अपनी दीन, लाचार अवस्था पर विवश होना पड़ता . . . कि उसके पास आंखे ही नहीं हैं। अपनी कमी कोई क्यों देखना चाहेगा?

साधनाओं को और दैवीय कृपा को ढकोसला बताने वाले भी एक प्रकार से अपनी आत्म रक्षा ही तो करते हैं . . . क्योंकि यदि ईश्वर है, तो फिर मैं आधीन हूं। अगर ईश्वर है, तो मैंने ऐसे ही व्यर्थ की वस्तुओं में जीवन गंवा दिया, यदि साधनाएं सत्य हैं, तो मैंने व्यर्थ ही इनको जीवन में नहीं उतारा – लेकिन कौन मानना चाहता है, कि मैं गलती पर था, मैंने ही अपना जीवन व्यर्थ के कार्यों में लगाया। मैंने कुछ साधनाएं की भी, और मुझे सफलता नहीं मिली – यदि कुछ मिलना ही होता तो मिल गया होता, मुझमें क्या कमी थी? इसके दो ही कारण हो सकते हैं – या तो मेरे अन्दर ही न्यूनता रही होगी या फिर ये साधनाओं का क्रम ही अन्धी दौड़ है, कलियुग में सफलता मिल ही नहीं सकती।

. . . कोई भी यह मानना नहीं चाहेगा, कि मेरी ही पात्रता में कमी थी, इसलिए दूसरी ही बात गले के नीचे उतरेगी कि साधनाएं भटकाव हैं, अनुभूतियां भी मात्र भ्रम हैं, मनोरोग हैं, एक प्रकार की मानसिक विकृति है, या अंग्रेजी में जिसे '**हैलुसिनेशन**' कहते हैं वह दृष्टि भ्रम है। वही अंधे वाली बात, वो क्यों माने कि प्रकाश होता है।

परन्तु यह भी सत्य है, कि **जिसने प्रकाश को देखा ही नहीं, उसके सामने प्रकाश को सिद्ध भी नहीं किया जा सकता है। हालांकि प्रकाश होता है, परन्तु प्रकाश को सिद्ध करना एक बिल्कुल दूसरी बात है।**

कैसे सिद्ध किया जाए अंधे के सामने प्रकाश को?

जो भी उस अंधे व्यक्ति से प्रकाश की बात करता, तो

यह वरिष्ट साधकों को ज्ञात है, कि साधना शिविरों में जब प्रयोग सम्पन्न होते हैं, सिद्धाश्रम की कई दिव्यात्माएं उपस्थित हो जाती हैं, यही कारण है, कि उस समय वातावरण में एकदम से दिव्यता छा जाती है। इस दिव्यता की अनुभूति तो प्रत्येक साधक ने की है। साधक न वरिष्ट होता है, न छोटा– यह तो चेतना का स्तर है, जिसका यदि विकास नहीं हो पाया हो, तो साधक को रोम कूप चैतन्य साधना अनिवर्यतः सम्पन्न करनी चाहिए।

वह उससे कहता – "तुम प्रकाश को मेरे हाथों में दो, तनिक मैं भी तो स्पर्श करूं कि कैसा होता है प्रकाश!" अब धूप में खड़े हैं, प्रकाश हाथ पर पड़ भी रहा है पर उसका स्पर्श कैसे हो?

अंधा बोला – "मुझे प्रकाश दो तो सही, मैं भी जरा चख लूं, कि मीठा है या कड़वा, उसका स्वाद कैसा है? कोई भी चीज हो, उसका कोई न कोई स्वाद अथवा स्पर्श तो होगा ही। अच्छा स्वाद नहीं है, तो लाओ मुझे दो उसे बजाकर ही देखूं, कोई तो आवाज निकलेगी और मैं मान लूंगा, कि यह प्रकाश है।"

उसके तर्क के आगे कोई कितना भी ज्ञानी हो, कुछ नहीं कर सकता। यदि कोई कहे, कि इस सन्त के पास बैठने से मन में कितनी आनन्द की अनुभूति हो रही है, और वहां बैठे सब लोग भी उस शान्ति को अनुभव कर रहे हों, परन्तु बीच में से ही एक आदमी शान्ति भंग करते हुए कहे कि ***सिद्ध करो कि कहां शान्ति है, तो सिद्ध नहीं किया जा सकता। जो अनुभव करने की वस्तु है, उसे अनुभव ही किया जा सकता है। साधनाएं करने और अनुभव करने की वस्तुएं हैं, प्रदर्शन और प्रमाणित करने की नहीं।***

वह अंधा बुद्ध के पास पहुंचा तो बुद्ध ने कहा – "*इसे मेरे पास क्यों लाए? इसकी आंखों पर तो जाली है, उसका हटना आवश्यक है। इसे मेरे वैद्य जीवक के पास ले जाओ।*"

कुछ माह के बाद वह अंधा आकर बुद्ध के चरणों में गिरकर क्षमा मांगने लगा, वैद्य के कौशल से उसकी आंखों की जाली हट चुकी थी, अब वह देख सकता था, प्रकाश का अनुभव कर सकता था। उसने कहा – "मुझे दिखाई नहीं पड़ता था, और तब यदि कोई प्रकाश शब्द का उच्चारण भी करता था, तो वह शब्द मुझे तीर की तरह चुभता था, इसलिए मैं सबसे उलझ जाता था, परन्तु अब मैं सभी से क्षमा मांग चुका हूं।"

बात तो सत्य है, कि जब तक स्वयं अनुभव न हो जाए, तब तक व्यक्ति सत्य को मानना नहीं चाहता, यह उसका मिथ्या गर्व है। ***विष तो विष है, उसे भले ही आपने कभी न पिया हो, उसके स्वाद का अनुभव नहीं है, उसके गुणों के बारे में आपने सुना ही सुना है, परन्तु जिस दिन आप उसे पी लेंगे, उसका स्वाद बताने के लिए आपके पास प्राण शेष नहीं होंगे। हर वस्तु की परीक्षा नहीं की जा सकती, कहीं न कहीं तो विश्वास करना ही पड़ेगा।*** विष तो विष ही है, उसके विनाशकारी प्रभाव को आप माने या न माने। अमृत यदि पिया जाएगा, तो शाश्वत जीवन मिलेगा, **यह तो व्यक्ति के ऊपर है कि वह अपने तर्क के आगे किसे सही मानता है।** परन्तु जो

सत्य है उसे झुठलाया नहीं जा सकता, सत्य तो एक ही है।

कुण्डलिनी के चक्र जब जाग्रत होना प्रारम्भ होते हैं, तो साधक की एक अवस्था आ जाती है, जब उसे अनुभूतियां तो अनेकों होने लगती हैं, परन्तु उनकी अभिव्यक्ति वह कर नहीं पाता है। ***इसीलिए अनुभूतियों के ऊपर वैज्ञानिक विवेचनात्मक ग्रंथों का अभाव है। ग्रंथों में किसी भी बात को एक सीमा तक ही उतारा जा सकता है, इसके बाद जहां तक साधना का क्षेत्र है, वह तो व्यक्ति को स्वयं ही अनुभव करना होता है। वह बताने की स्थिति में नहीं होता।***

श्री रामकृष्ण परमहंस मां काली के परम उपासक थे। उनके जीवन में अनेकों ऐसे अवसरों का विवरण मिलता है, जब मात्र 'काली' शब्द सुनते ही अचेत हो जाया करते थे और बड़ी कठिनाई से फिर समाधि अवस्था से बाहर निकल पाते थे। कई बार वे किसी विषय पर बोलते-बोलते अचानक समाधि में लीन हो जाते थे और चाह कर भी उस विषय पर नहीं बोल पाते थे। क्योंकि कुण्डलिनी जागरण की एक अवस्था होती है, जब व्यक्ति अनुभव तो कर रहा होता है, देख तो रहा होता है, और ज्यों ही उसे व्यक्त करने का प्रयास करता है, वह पुनः उस आनन्द में इतना लीन हो जाता है, कि वह उस भावातिरेक से बाहर निकल ही नहीं पाता। जब भी वह उस विषय में बोलने का प्रयास करता है, तो उसी आनन्द में डूब कर समाधिगत हो जाता है, इसीलिए कई अनुभूतियों को लिपिबद्ध नहीं किया जा सका है, वे साधक चर्चा नहीं करते। ***चर्चा और व्याख्या की एक सीमा होती है, उसके बाद का ज्ञान तो अनुभवगम्य ही होता है।***

ब्रह्म की या ईश्वर की जब शास्त्रों में व्याख्या की जाती है, तो शास्त्र नेति-नेति कहकर मौन हो जाते हैं – अर्थात् वह यह भी नहीं है, वो वह भी नहीं है, परन्तु वह क्या है, कैसा है, उसका वर्णन नहीं हो पाता।

समाधि के इस गहन स्तर के नीचे भी साधकों को अनेक अनुभूतियां होती तो अवश्य ही हैं, परन्तु यदि वे कहें कि आत्मा का स्वरूप ऐसा होता है, एक प्रकाश पुंज के समान होता है, अथवा हनुमान जी का स्वरूप ऐसा है, तो उसका उपहास उड़ाने में कितने सेकण्ड लगते हैं। यही कारण है, कि इन ***अनुभूतियों को प्रायः साधक प्रकट नहीं करते, और सामने वाले के मिथ्याभिमान पर क्रोध न व्यक्त रह कर हुए स्वयं ही सामान्य बने रहते हैं, क्योंकि हर चीज को प्रमाणित नहीं किया जा सकता है। परन्तु अनुभूतियां कोई आज की नई चीज नहीं हैं, ये तो वर्षों से साधकों को होती आई हैं।***

> **साधनाएं चमत्कार प्रदर्शन की वस्तु भी नहीं हैं, न ही किसी जादूगर का जादू है, और न ही किसी मदारी का खेल हैं, कि जब चाहे दिखा दिया। साधनाएं तो आत्मोन्नति का मार्ग हैं, और अनुभूतियां तो उस राजपथ के मात्र पड़ाव ही होते हैं। आज सद्गुरुदेव से हजारों-लाखों शिष्य जुड़े हैं, तो अवश्य ही उन्हें किसी न किसी प्रकार से कुछ अनुभव हुआ ही है, उनकी दिव्यता का बोध हुआ ही है। इसमें कोई संशय नहीं है।**

...और किसी भी अनुभव के पूर्व उस के लिए प्रयास किया जाना उसी प्रकार आवश्यक है, जिस प्रकार कि अंधेरे में प्रकाश करने के लिए दीपक में बाती लगाना, तेल का भरा जाना और माचिस से अग्नि देना आवश्यक है। ***उसी तरह साधना में अनुभूतियों के लिए निरन्तर प्रयास और इस तरह की साधनाएं आवश्यक हैं,*** हो सकता है माचिस की तीली भीगी हो, प्रथम बार न जले, हो सकता है दिए की बाती ठीक से न लग सकी हो, इसलिए दीपक न जल सका हो, या ये भी हो सकता है, कि आपने आंखें ही बन्द कर ली हों – **कारण कोई भी हो सकता है, परन्तु क्रिया तो वही है माचिस से दीपक को तेल बाती लगाकर जलाना होगा। और यही साधना भी है, क्रिया तो करनी ही पड़ेगी।**

अनुभूति तो चेतना प्रारम्भ होने की क्रिया है और जब असंख्य अणुओं से बने शरीर में चेतना के अणु विस्फोट की क्रिया प्रारम्भ हो जाता है, साधक के रोम-प्रतिरोम जाग्रत होकर एक तेजस्वी नेत्र बन जाते हैं, तब साधक ऊर्ध्व गति प्राप्त करने लगता है।

> **'रोम कूप चैतन्य साधना' को सम्पन्न करने के बाद प्रत्यक्षीकरण साधनाओं को सम्पन्न करता है, तो प्रत्यक्षीकरण की सम्भावना बढ़ जाती है... . क्योंकि मंत्रों द्वारा आहूत होने पर देवी देवता तो प्रकट होते ही हैं, यह अलग बात है, कि साधक के ही रोम कूप जाग्रत न हों, उसकी चैतन्यता में ही न्यूनता हो, ...**
> **तो उसे दर्शन हो भी कैसे सकेंगे?**

किसी गुरुवार को

सद्गुरुदेव की फाइल से

रोम कूप चैतन्य साधना

आपका प्रत्येक रोम-प्रतिरोम जाग्रत हो सके, चैतन्य हो सके, आप अपनी असंख्य नेत्रों से दिव्यानुभूतियों के साक्षी बन सकें, इसके लिए यह साधना दी जा रही है। इस साधना द्वारा चेतना स्तर का विकास होता है और धीरे-धीरे साधक यदि सजग रहें, तो अनुभूतियां कोई आश्चर्य नहीं है।

इस साधना को किसी भी गुरुवार से प्रारम्भ करें, ब्रह्ममुहूर्त में या रात्रि ९:०० बजे के बाद करना अनुकूल रहता है। यदि यह साधना प्रकृति के मध्य की जाए, अथवा घर में किसी ऐसे स्थान पर की जाए जहां खुला आसमान हो, तो ज्यादा उत्तम रहता है। यदि यह सम्भव न हो, तो इस साधना को करने के लिए आप किसी ऐसे कमरे का चुनाव करें, जिसमें स्वच्छ व ताजी वायु आती जाती रहती हो।

यह २१ दिन की साधना है और इसे गुरुवार के दिन ही प्रारम्भ किया जा सकता है। इसमें सामग्री के रूप में **'कुलकुण्डलिनी मंत्रों से सिद्ध रोम कूप चैतन्य यंत्र', 'दिव्य चैतन्य गुटिका'** का होना अनिवार्य है। 'चैतन्य गुटिका' को लाल धागे में डाल कर गले में धारण कर लें। सफेद रंग की स्वच्छ धुली धोती पहनें, ऊपर कोई भी वस्त्र धारण न करें (यदि साधिका हो, तो ऊपर गुरुचादर ओढ़ लें)। इस साधना के लिए किसी चौकी, चित्र या पूजन सामग्री की आवश्यकता नहीं है। एक स्वच्छ मोटा कम्बल लेकर उसे दोहरा कर बिछा लें। उसके ऊपर एक स्वच्छ चादर बिछा दें।

प्राणायाम

अब पद्मासन अथवा सुखासन में बैठ कर प्राणायाम करें। इसके लिए आप दाईं नासिका को अंगूठे से बंद कर बाईं नासिका से श्वास को भीतर खींचे। श्वास को भीतर रोकें तथा थोड़ी देर बाद बाईं नासिका से छोड़ें। पांच बार ऐसा करें। एक श्वास-प्रश्वास में सामान्यत: एक मिनट तो लगना ही चाहिए, अभ्यास से समय की वृद्धि की जा सकती है।

इसी तरह बाईं नासिका को बंद कर दाईं नासिका से श्वास लें व छोड़ें। पांच बार यह भी करें।

अब दोनों नासिकाओं को खुला रखते हुए पांच बार धीरे-धीरे श्वास लें व छोड़ें।

अब **'कुलकुण्डलिनी मंत्रों से ऊर्जित व मंत्रसिद्ध रोमकूप चैतन्य यंत्र'** को शान्त चित्त से अपने दोनों हाथों में लेते हुए उसपर गुरुदेव का स्मरण करते हुए गुरु मंत्र का मानसिक जप करें। दस मिनट के जप के पश्चात् यंत्र को अपनी दोनों नेत्रों से स्पर्श कराएं।

इसके बाद यंत्र को दाएं हाथ में लेकर खड़े हो जाएं। यदि पंजों के बल पर खड़े हो सकें, तो ज्यादा अनुकूल रहता है। दोनों हाथों को ऊपर आकाश में तान कर अपनी दृष्टि को भी आकाश की ओर करते हुए निम्न मंत्र का दस मिनट तक जप करें –

रोमकूप जागरण मंत्र

॥ ॐ क्लीं क्रीं रोम प्रतिरोम चैतन्यं कुरु जाग्रय जाग्रय क्रीं क्लीं ॐ फट् ॥

Om Kleem Kreem Rom Pratirom Cheitanyam Kuru Jaagray Jaagray Kreem Kleem Om Phat

इस प्रयोग में किसी माला की आवश्यकता नहीं होती है। मंत्र जप के बाद यंत्र का शरीर के एक एक अंग में स्पर्श कराएं, जिससे कि शरीर का प्रत्येक रोम उस ऊर्जा को आत्मसात कर सके। मंत्र जप के बाद जिस आसन पर आप खड़े थे, उसी पर लेट जाएं और आंखें बन्दकर अपने ललाट के मध्य भाग अर्थात् भृकुटि पर ध्यान केन्द्रित करने का प्रयास करें। पहले-पहले तो आपको कुछ भी नहीं दिखाई देगा, किन्तु जैसे-जैसे आप अभ्यास करते जाएंगे, आपको स्पष्ट रूप से दृश्य दिखाई देंगे, जिनको कि आपने पहले कभी देखा नहीं होगा, बड़े ही मनोरम दृश्य जैसे किसी पहाड़ों के बीच आप चले जा रहे हों – ऐसे दृश्य साधना में आपकी सफलता का का प्रमाण हैं। धीरे-धीरे आपके अनुभवों में परिपक्वता आती जाएगी। २१ दिन बाद यंत्र को विसर्जित कर दें। गुटिका धारण किए रहें, इससे शरीर में एक चेतना प्रवाह बना रहता है।

यह अत्यन्त गोपनीय साधना है, और इसे पूर्ण विश्वास के साथ सम्पन्न किया जाना चाहिए।

शिष्य के एक नए सिरे से सृजन की क्रिया

11.11.99
या किसी अमावस्या को

देवर्षि नारद प्रणीत

—जिसके द्वारा एक कुख्यात दस्यु भी इतना अद्वितीय ऋषि बन सका, कि उसी के हाथों रामायण की अमर कृती रची गई . . .

जीवन में ठोकर लगती है, तो एक सेकण्ड में ही लग जाती है। जीवन में परिवर्तन होना होता है, तो एक सेकण्ड में ही हो जाता है, जीवन का निर्माण होना होता है, तो एक क्षण में ही अन्दर एक ललक उत्पन्न हो जाती है, नहीं तो पूरे जीवन भर भी कुछ नहीं हो पाता है। जीवन निर्माण की यह क्रिया तो गुरु द्वारा ही सम्भव हो पाती है।

द्वापर में वाल्मीकि एक कुख्यात लुटेरे व डाकू रहे हैं। जीवन का आधे से ज्यादा भाग उन्होंने लोगों को लूटने में, धन छीनने में, अत्याचार में ही व्यतीत किया।

एक बार वाल्मीकि मार्ग में नित्य की तरह यात्रियों को लूटने के लिए घात लगाए बैठे थे। उसी समय रास्ते से **'नारायण नारायण'** करते नारद निकले। वाल्मीकि ने उन्हें पकड़ लिया और कहा –

'तुम्हारे पास क्या है, निकालो?'

नारद ने कहा – "मेरे पास तो कुछ है ही नहीं, बस यह तम्बूरा है, जिस पर मैं नारायण की ध्वनि निकालता रहता हूं। और कुछ भी नहीं है।"

उसने तम्बूरा लिया, नारद को टटोला पर उसके पास और कुछ था नहीं।

वाल्मीकि ने कहा – "अपशकुन हो गया, सवेरे-सवेरे कैसा कंगाल मिल गया, ऐसे तो मेरा जीवन कैसे चलेगा?"

नारद ने कहा – "तुम किसके लिए करते हो यह सब? क्यों करते हो यह सब?"

उसने कहा – "मुझे परिवार का पालन-पोषण करना है। मेरे पुत्र हैं, बच्चे हैं, पत्नी है, उन सबको भोजन देना पड़ता है।"

नारद ने कहा – "क्या दूसरों को लूटना या मारना या दूसरों की हत्या करना उचित है? यह पाप है या पुण्य है?"

वाल्मीकि ने कहा – "मैं भी समझता हूं, कि यह पाप है और इससे मुझे जीवन में दुःख भोगना ही पड़ेगा।"

वस्तुतः ***इस जीवन में व्यक्ति जो भी पाप या पुण्य कर्म करता है, उसका परिणाम इस जीवन में उसे मिलता अवश्य है। जो भी पाप कर्म हम करेंगे, उसे भोगना ही पड़ता है, और जीवन रहते ही भोगना पड़ता है।*** मृत्यु के बाद स्वर्ग और नरक के बारे में जो कुछ भी लोगों ने कहा है, वह मात्र एक छलावा है, कल्पना है। ***जो भी नरक या स्वर्ग होता है, वह यहीं होता है, इसी संसार में होता है।***

यदि अस्पताल में चले जाएं, तो कैसा नरक होता है, यह वहां जाकर स्वतः ही देखा जा सकता है। किसी के पांव कटे हुए हैं, किसी के हाथ कटे हुए हैं, कोई आंख का अंधा पड़ा है, कोई कराह रहा है, कोई बुरी तरह जल गया है, किसी के खून निकल रहा है, कोई कराह रहा है, कोई मौत मांग रहा है

और मौत भी उसे प्राप्त नहीं हो रही है।

जब भी आपको स्वर्ग देखना हो, तो किसी मन्दिर या पवित्र स्थान या जहां आनन्द से साधु-संन्यासी बैठे हों वहां जाकर देख लीजिए। दोनों स्थितियां यहीं पर हैं। यदि आप मन में भी थोड़ा सा कोई पाप कर्म करेंगे, तो इस जीवन में भोगते हुए आपको पार जाना पड़ेगा और अंत में भी आपको केवल अपयश ही मिलेगा कि झूठा-बदमाश आदमी था, दुष्टात्मा थी, मर गई, अच्छा हुआ।

नारद ने वाल्मीकि से कहा – "अगर तुम्हें यह मालुम है, कि तुम पाप कर रहे हो . . . परन्तु क्या तुम्हें यह भी मालुम है, कि इस पाप को तुम्हें अकेले ही भोगना पड़ेगा, इस जीवन में तुम्हें कष्ट और दुःख अकेले ही भोगना पड़ेगा, हाथ पांव टूट जाएंगे, बीमार हो जाओगे, अशक्त हो जाओगे और अपयश के भागी बन जाओगे।"

वाल्मीकि ने कहा – "ऐसा थोड़े ही होता है, मैं अगर पाप करता हूं तो इसका हिस्सा मेरी पत्नी को भी जाएगा, आधा फल उसको भी मिलेगा।"

नारद ने कहा – "**नहीं! तुम जो कुछ करोगे, उसका फल तुम्हें ही मिलेगा। तुम्हारी पत्नी या तुम्हारे बच्चे या तुम्हारे मां-बाप इसमें भागीदार नहीं बन पाएंगे।**"

वाल्मीकि के मन में एक छोटा सा चिन्तन हुआ और उसने सोचा यह साधु गप्पें मार रहा है, मुझे मूर्ख बना रहा है, बहला रहा है, साधुओं का काम ही यही है।

नारद ने कहा – "विश्वास नहीं है? पूछ आओ अपनी पत्नी से।"

उसने कहा – "तुम भाग जाओगे, क्योंकि तुम्हारे कपड़े छीनने हैं मुझे अभी। कुछ मिला नहीं है तुमसे और तुम भागना चाहते हो, इसीलिए मुझे बहका रहे हो।"

नारद ने कहा – "ऐसा करो, तुम मुझे पेड़ से बांध दो अच्छी तरह से और फिर चले जाओ और घर जाकर मालुम करके आ जाओ।"

नारद को पेड़ से बांधकर वाल्मीकि घर गया, पत्नी को बुलाया और कहा – "देखो मैंने तुम्हें सोने से, जेवरों से लाद दिया है, दो किलो गहने तुम्हारे अंगों पर, शरीर पर हैं। तुम्हें मालूम है ये सब मैं कहां से लाता हूं?"

पत्नी बोली – "लूटमार करते हैं, और क्या करते हैं? लोगों से छीन कर ही तो लाते हो न!"

वाल्मीकि ने कहा – "आज एक साधु मिला, उसने कहा इससे पाप होता है।"

पत्नी ने कहा – "निश्चित रूप से होता ही है। यह कोई शुभ कार्य तो है नहीं। शुभ कार्य तो यह है, कि सुबह उठना है, भगवान का भजन पूजन करना है, प्रभु से क्षमा मांगनी है, अपने गलत कर्मों की और अपने जीवन को सुमार्ग पर गतिशील करना है।"

उसने कहा – "तू मेरी पत्नी है, अर्धांगिनी है, तो जो पाप मैं कर रहा हूं, आधा फल तू भोगेगी, आधा फल मैं भोगूंगा।"

उसने कहा – "**मैं आधा फल तुम्हारे साथ भोगने नहीं आई हूं, पाप करोगे तो तुम खुद पाप का बोझ उठाओगे, मैं उसमें भागीदार कैसे बनूंगी? मेरा उसमें कोई हिस्सा नहीं होगा। तुम अन्न कहां से लाकर खिलाओगे, यह तुम्हारा कर्त्तव्य है, यह तुम्हारा धर्म है कि तुम मुझे भोजन कराते हो या नहीं, मैं तुम्हारे पाप में भागीदार नहीं हूं।**"

वाल्मीकि को एक झटका लगा कि वह पत्नी जिसको मैंने इतने सोने के जेवर दिए, वह ऐसा कह रही है, तो वह मां के पास गया और बोला – "मां, मैं जीवन भर डाकू रहा हूं और बहुत मशहूर डाकू रहा हूं, रोज आठ-दस हत्याएं तो कर ही देता हूं, क्या इससे पाप लगता है?"

मां ने कहा – "**तुम बहुत भुगतोगे बुढ़ापे में, वृद्धावस्था में घोर दुःख पाओगे, इतना दुःख पाओगे कि तुम मौत मांगोगे पर मौत मिलेगी नहीं, यह पाप है और घोर पाप है।**"

उसने कहा – "तू मेरी मां है, मैं तेरी कोख से पैदा हुआ हूं, इसका कुछ फल तो तुम्हें भी भोगना पड़ेगा।"

मां बोली – "मैं तुम्हारी मां जरूर हूं, मगर तुम्हारे पाप में हिस्सेदार नहीं हूं, तुम्हारा पुण्य और तुम्हारा पाप दोनों ही तुम्हारे अपने हैं। मुझे तो तुम भोजन कराओगे, तो भोजन कर लूंगी, मेरा इतना ही काम है।"

वाल्मीकि को बड़ा दुःख हुआ, एक आघात पहुंचा, इतना आघात पहुंचा कि शायद पहली बार उसकी आंखों से

जीवन को ऊर्ध्वगामी बनाने के लिए शिष्य के जीवन निर्माण की यह क्रिया गुरु अपने शिष्य के साथ करते ही रहते हैं, जब तक वह पूर्णत्व प्राप्त नहीं कर लेता। इसी साधना को गुरु ब्रह्मा स्वरूप साधना कहा गया है, जिसे नारद ने वाल्मीकि को सम्पन्न कराया था।

आंसू निकल आए। वह गया और बन्धन से नारद को मुक्त किया और चरणों में गिर पड़ा। उसने कहा – ''मैं बहुत भूल में था, मैं समझ रहा था कि पत्नी मेरी है, बेटे मेरे हैं, मां मेरी है। लेकिन आज मुझे पता चला कि कोई नहीं है, सब स्वार्थ से बंधे हुए हैं, ज्योंहि स्वार्थ समाप्त हो जाएगा, ये सब छिटक करके खड़े हो जाएंगे।''

नारद ने कहा – ''**मैंने तुम्हें पहले ही कहा था, अकेले आए हो अकेले ही जाओगे, जो कुछ अर्जित करोगे, उसे तुम ही अर्जित करोगे और उसका फल भी तुम्हें ही मिलेगा। पुण्य करोगे तो यशवान, धनवान, ऐश्वर्यवान, जीवन में सौभाग्यवान बन पाओगे।**''

वाल्मीकि ने कहा – ''आज से मैं आपको अपना गुरु मानता हूं। आप मुझे कोई ऐसा मंत्र दें, जिसके माध्यम से मैं अपना प्रायश्चित कर सकूं और इस जीवन को त्याग दूं। ऐसा जीवन प्राप्त करूं जो पुण्यदायक हो। मेरे इस गए बीते जीवन को समाप्त कर आप ही मुझे नया जीवन दे सकते हैं।''

नारद ने कहा – ''**पुण्य एक क्षण में दिखाई नहीं देता, पाप तो दिखाई दे जाता है। तुम किसी की हत्या करोगे तो सबके सामने दिखाई दे जाओगे, मगर पुण्य तो धीरे-धीरे प्राप्त होगा। पाप धीरे-धीरे ही गलेगा, मगर रोज कितना गल रहा है, तुम्हें मालुम नहीं पड़ेगा।** मगर रोज तुम प्रातः काल उठोगे सूर्योदय से पहले। और मैं यह मंत्र दे रहा हूं – 'गुरु मंत्र' इसका तुम्हें जप करना है। जिस पेड़ से तुमने मुझे बांधा है, उसी पेड़ की परिक्रमा करते हुए इस गुरु मंत्र का जप करोगे, क्योंकि तुम बैठ के करोगे तो तुम्हें आलस्य आ जाएगा। नित्य एक घण्टा इस पेड़ की परिक्रमा करते हुए मंत्र को जपना है।''

और वाल्मीकि ने उसी दिन से तीर-कमान, अस्त्र-शस्त्र छोड़ दिए और उस मंत्र का जप प्रारम्भ कर दिया, जो नारद ने दिया था। और **एक वर्ष में उसके जीवन में इतना परिवर्तन हुआ कि एक भयंकर घोर अत्याचारी डाकू श्रेष्ठ कवि बन सका, योगी बन सका, साधु बन सका, संन्यासी बन सका और पूरे विश्व में उसका नाम हो सका।**

नारद द्वारा दी गई इस **गुरु ब्रह्मा साधना** से वह इतना उच्चकोटि का संन्यासी बना कि राम ने जब सोचा कि मैं सीता को रखूं कहां तो उन्हें एक ही उच्चकोटि का चरित्रवान व्यक्ति मिला – वाल्मीकि, कि जिसके आश्रम में सीता सुरक्षित रह पाएगी। उस समय याज्ञवल्क्य भी थे, अत्रि, कणाद, पुलस्त्य, वशिष्ठ, विश्वामित्र भी थे, मगर जितना उज्ज्वल व्यक्तित्व उस समय वाल्मीकि का था, उतना और किसी ऋषि का नहीं था।

ब्रह्मा स्वरूपं तुभ्यं नमामि
निखिलेश्वराय तुभ्यं नमामि
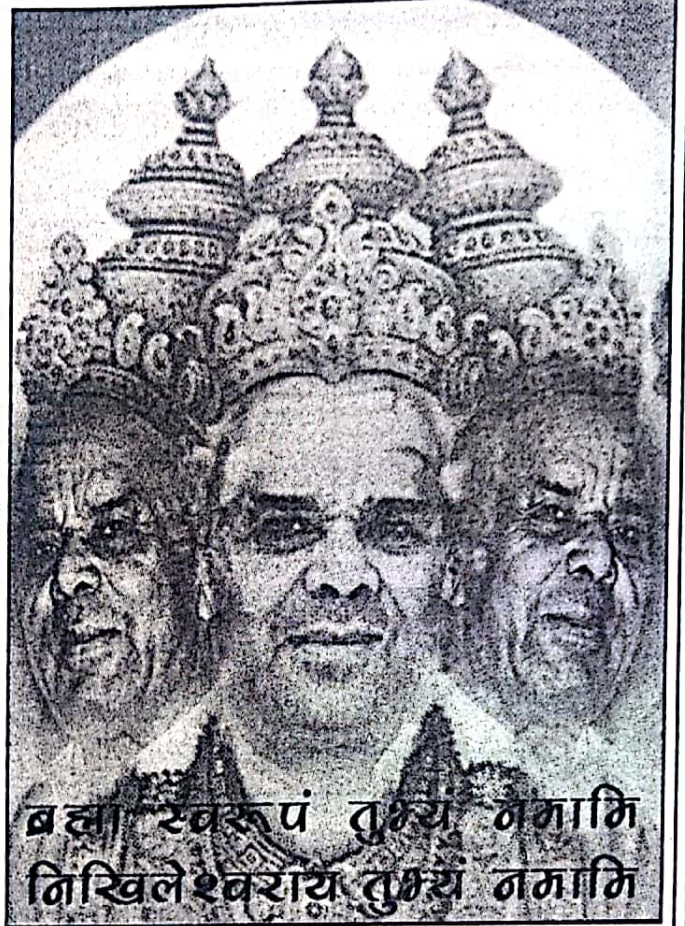
यह जीवन का एक परिवर्तन था, हर्ष के साथ, उल्लास के साथ जिसे नारद ने अपने शिष्य वाल्मीकि के साथ सम्पन्न किया, और एक डाकू को भी अमर बना दिया।

ब्रह्मा त्वमेवं निखिलेश्वरोऽयं

जीवन में परिवर्तन की यह क्रिया गुरु ही सम्पन्न कर सकता है। इसके लिए सबसे पहले वह शिष्य के अभी तक के जीवन को समाप्त करता है। उसे मृत्यु दे देता है, अर्थात उसके अभी तक के जीवन की शैली को मृत्यु दे देता है। और फिर शिष्य का दुबारा जन्म होता है, वह द्विज बनता है – 'द्विज' अर्थात् जो दुबारा जन्मा हो। और यह उसका दूसरा जन्म गुरु देता है। ***पहला जन्म तो माता देती है, परन्तु यह दूसरा जन्म गुरु देता है। दूसरे जीवन का सृजनकर्ता गुरु होता है। यह गुरुमय जीवन होता है और उसके इस नूतन जीवन का निर्माण गुरु ही करते हैं।***

. . . और इसीलिए गुरु को ब्रह्मा कहा गया है, क्योंकि वे अपने शिष्य के पूर्व संस्कारों को धो कर अपने तेज से, अपने अनुग्रह से उसके जीवन का सृजन ही तो कर रहे होते हैं, जीवन का नव निर्माण ही तो कर रहे होते हैं।

यह साधना एक दस्यु से युगपुरुष बनने की साधना है, एक कण से कर्णधार बनने की साधना है, भीड़ में खो जाने वाली जिन्दगी से हटकर एक ऐसे जीवन निर्माण की साधना है, जो आने वाली कई पीढ़ियों के लिए भी आदर्श बन सके। यह साधना तो वस्तुतः उस जीवन को प्राप्त करने की साधना है, जिसे सद्गुरुदेव अपने शिष्य को देना चाहते हैं। सद्गुरु का कार्य ही शिष्य को कुम्भ की तरह, एक कच्ची मिट्टी से पूर्ण कुम्भ के रूप में तैयार करना होता है। इस साधना द्वारा गुरु को अपने निर्माण प्रक्रिया में पूर्ण अनुकूलता है, जिससे साधक को जो कुछ दस वर्षों में बनना था, वह दस महिनों में ही प्रत्यक्ष अनुभव करने लग जाता है।

शिष्य यह समझता है, कि उसके लिए यह उचित है, वह उचित है, परन्तु उसे किसी प्रकार का ज्ञान नहीं होता, कि वह जीवन के किस क्षेत्र में सफलता प्राप्त कर सकता है, वह अंधेरे में हाथ पैर मारने की क्रिया ही कर रहा होता है, जिसमें द्वार किस ओर है, उसे स्वयं भी ज्ञात नहीं होता। उस द्वार को गुरु ही दिखा सकता है। और द्वार दिखाने की यह क्रिया ही जीवन निर्माण का पहला कदम है।

यही मार्ग दिखाने की क्रिया की थी नारद ने वाल्मीकि के साथ। वाल्मीकि के अन्दर के डाकू को समाप्त कर नारद ने उन्हें एक नया जीवन दिया, वाल्मीकि के जीवन का एक नए सिरे से निर्माण किया। और निर्माण की उस क्रिया को ही '**गुरु ब्रह्मा स्वरूप साधना**' कहते हैं। नारद ने अनुग्रह कर वाल्मीकि को यही साधना प्रदान की थी, वाल्मीकि की मति उस समय उल्टी थी और वे कोई साधना सम्पन्न न कर सकते थे, इसलिए नारद ने अनुग्रह कर वाल्मीकि को मात्र 'मरा-मरा' का मंत्र दिया था, उसे अन्य किसी बंधन में नहीं डाला था। गुरु के इस अनुग्रह को जिससे शिष्य के जीवन में एक नवीन परिवर्तन आए, एक नवीन दिशा मिले उसे ही '**गुरु ब्रह्मा साधना**' से सम्बोधित किया गया है।

जीवन निर्माण की प्रक्रिया

यदि साधक शिष्यता के भाव से पूरित है, और अपने जीवन में गुरु के ब्रह्मा स्वरूप की साधना सम्पन्न नहीं करता, तो वह एक बहुत बड़े सौभाग्य से वंचित रहता है, क्योंकि जीवन निर्माण कोई एक क्षण की क्रिया नहीं है। जीवन का प्रत्येक क्षण ही नूतन हो, कुछ नवीनता लिए हुए तभी सार्थकता है। इस साधना के बाद सद्गुरु अपने शिष्य का हर क्षण किसी न किसी रूप में नव निर्माण ही कर रहे होते हैं। उसके एक एक कुसंस्कार समाप्त कर नवीन संस्कारों को जन्म देते रहते हैं, यही इस साधना का मूल है। यह गुरु के सृजनात्मक रूप की साधना है, जिसमें वे पुरुष से पुरुषोत्तम बनाने की क्रिया करते हैं, नर से नारायण बनाने की क्रिया करते हैं।

इस साधना के बाद साधक को फिर कहीं भटकना नहीं पड़ता, गुरु की चेतना निरन्तर उसके अन्दर शुभ विचारों का उदय करती रहती है। अनेक विकल्पों में से श्रेष्ठ विकल्प चुनने का या अपने लक्ष्य में सफल होने की युक्ति एक मार्गदर्शक के रूप में सद्गुरुदेव आंतरिक रूप से बताते चलते हैं। और गुरु के इन आंतरिक निर्देशों द्वारा साधक के जीवन का निर्माण होता चला जाता है, और वह आध्यात्मिक व भौतिक दोनों ही पक्षों में पूर्णता प्राप्त करने की स्थिति में आ जाता है। इतिहास साक्षी है कि एक डाकू गुरु के अनुग्रह और इस साधना द्वारा ही इतनी ऊंचाई पर पहुच गया कि उसके हाथ से एक ऐसे अद्वितीय ग्रंथ – वाल्मीकि रामायण की रचना हुई, जो कि भारतीय जनमानस के लिए पवित्रतम ग्रंथ है।

यह साधना **किसी भी अमावस्या** से प्रारम्भ कर अगली पूर्णिमा तक पूर्ण की जा सकती है। यह १६ दिन की साधना है। अमावस्या की रात्रि से जिस प्रकार चन्द्रमा अपनी एक एक कला में वृद्धि करता हुआ पूर्णिमा के दिन पूर्ण चन्द्र का चन्द्र का आकार ले लेता है, उसी प्रकार इस साधना की तेजस्विता से साधक के अन्दर भी पूर्ण गुरुत्व का स्थापन हो जाता है। ***ब्रह्मा को आदि गुरु कहा गया है, और उन्हीं के क्रम में ब्रह्माण्ड के सोलह और गुरु कहे गए हैं, इस साधना द्वारा उन सभी के तेज का स्थापन साधक के शरीर में होता है।*** यही सोलह दिन की साधना का रहस्य भी है।

साधना विधि

इस साधना को **11.11.99** अथवा **किसी भी अमावस्या** से प्रारम्भ करें। प्रातः स्नानादि से निवृत्त होकर अपने सामने चौकी पर एक सफेद आसन बिछा लें। सबसे पहले हाथ जोड़ कर सद्गुरुदेव के ब्रह्मा स्वरूप का ध्यान करें –

देवनाथं गुरुर्देवं देशिकस्वात्म नायकं।
प्रणमामि निखिलानन्दं ब्रह्मभावेन भूषितम्॥

अंगन्यास

गुरु साधना में प्रयुक्त होने के पूर्व अब गुरु मंत्र का अपने शरीर के समस्त अंगों में स्थापन करें। इसके लिए निम्न संदर्भ का उच्चारण करते हुए निर्दिष्ट अंगों को दाहिने हाथ से स्पर्श करें –

ॐ ॐ नमः।	(सिर)
ॐ पं नमः।	(दोनों नेत्र)
ॐ रं नमः।	(ललाट)
ॐ मं नमः।	(कण्ठ)
ॐ तं नमः।	(दोनों भौहें)
ॐ त्वां नमः।	(दोनों कान)
ॐ यं नमः।	(दोनों गाल)
ॐ नां नमः।	(मुंह)
ॐ रां नमः।	(दांत)
ॐ यं नमः।	(जीभ)
ॐ णां नमः।	(दोनों कन्धे)
ॐ यं नमः।	(दोनों हाथ)
ॐ गुं नमः।	(हृदय)
ॐ रूं नमः।	(नाभि)
ॐ भ्यों नमः।	(दोनों पैर)
ॐ नं नमः।	(पीठ)
ॐ मं नमः।	(सभी अंग)

इसके बाद गुरु मंत्र की एक माला जप करें।

षोडश गुरु पूजन

इसके बाद अपने सामने एक गोल घेरे में जौ (अथवा तिल) की १६ ढेरियां बना लें। फिर '**१६ ब्रह्म बीज**' (ये बीज षोडश गुरुओं के स्थापन मंत्रों से सिद्ध होने चाहिए) को इन ढेरियों पर स्थापित करें। तत्पश्चात निम्न मंत्र बोलकर (बाएं से दाएं क्रम में) इन बीजों का कुंकुम, अक्षत से पूजन करें –

प्रथमं ब्रह्माय गुरुं स्थापयामि नमः।
द्वितीयं विश्वामित्रं गुरुं स्थापयामि नमः।
तृतीयं चैतन्यं गुरुं स्थापयामि नमः।
चतुर्थं पूर्णानुष्ठानं गुरुं स्थापयामि नमः।
पंचमं कपिञ्जलं गुरुं स्थापयामि नमः।
षष्ठं वशिष्ठं गुरुं स्थापयामि नमः।
सप्तं आत्रेयं गुरुं स्थापयामि नमः।
अष्टमं महादीर्घायं गुरुं स्थापयामि नमः।
नवमं अग्निमूर्धानं गुरुं स्थापयामि नमः।

मृदं यथा घटयति कुम्भकारः
स्वर्णं च प्रकरोति सस्वर्णकारः।
शिष्यं च शास्ति सततं नेकैः तपोभिः
ब्रह्मात्व मेव पदमेति गुरुस्तथैव॥

जैसे मिट्टी से कुम्भकार अनेक पात्रों का निर्माण करता है, अनगढ़ सोने से जैसे स्वर्णकार सुन्दर आभूषण बनाता है, उसी प्रकार सद्गुरु भी अपने तपोबल से 'शिष्य' को अद्वितीय व्यक्तित्व बनाकर ब्रह्म रूप में प्रख्यात होते हैं।

दशमं दीर्घोवस्थानं गुरुं स्थापयामि नमः।
एकादशं दीर्घोवस्यां गुरुं स्थापयामि नमः।
द्वादशं दीर्घस्तां गुरुं स्थापयामि नमः।
त्रयोदशं पूर्णं गुरुं स्थापयामि नमः।
चतुर्दशं सच्चिदानन्दं गुरुं स्थापयामि नमः।
पंचदशं दुर्गत्वं गुरुं स्थापयामि नमः।
षोडशं निखिलेश्वरानन्दं गुरुं स्थापयामि नमः।

इसके बाद इन ढेरियों के मध्य के रिक्त स्थान में '**गुरु ब्रह्म सिद्धि यंत्र**' स्थापित करें। यंत्र पर एक गुलाब का पुष्प अर्पित करें। धूप, दीप, कुंकुम आदि से यंत्र का पूजन करें। इसके बाद निम्न मंत्र की १६ दिन तक '**विरंचि सिद्धि माला**' से नित्य इस मंत्र की १६ माला जप करें –

गुरु ब्रह्म स्वरूप मंत्र

॥ ॐ ब्रं ब्रह्मात्व सिद्धिं गुं गुरवे नमः ॥

Om Bram Brahmaatvam Siddhim Gum Gurave Namah

१६वें दिन अर्थात पूर्णिमा के दिन उपरोक्त मंत्र के अंत में स्वाहा शब्द जोड़ते हुए घी, जौ, और तिल से अग्नि में १०८ आहुतियां दें। इस प्रकार यह साधना पूर्ण हो जाती है। साधना समाप्ति पर सामग्री को विसर्जित करने की आवश्यकता नहीं है। इसी सामग्री से यदि साधक अगले एक वर्ष में ही दो बार पुनः इसी साधना क्रम को और दोहरा ले, तो निश्चय ही इस साधना की अद्वितीयता उसके सामने सिद्धि के रूप में प्रकट होती है। इस तरह यही साधना एक बार अथवा तीन बार सम्पन्न करने के उपरान्त साधक समस्त सामग्री को जल में विसर्जित कर सकते हैं।
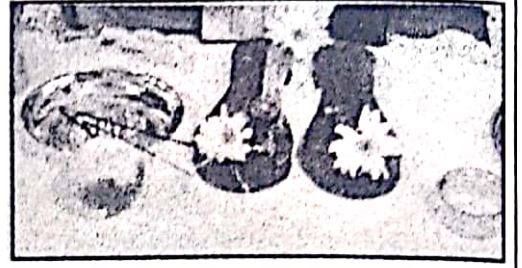
समस्त गुरु मण्डल युक्त निखिलेश्वरानन्द गुरु पादुका पूजन

— जो कि समस्त साधनाओं का सार और शिष्य की आत्मा है, प्राणों का नृत्यगीत है, यही जीवन का आधार है।

गुरु के संन्यस्त स्वरूप का पूजन अपने आप में ही प्रत्येक पूजन विधा से हटकर है, क्योंकि इसमें उनके लीलामय स्वरूप का बिम्ब मानस में नहीं रखा जाता, अपितु यह तो उनके निराकार, घट-घट वासी स्वरूप का पूजन है। संन्यास का तात्पर्य है, जो माया से निर्लिप्त हो, और इस संन्यस्त स्वरूप पूजन से साधक पर व्याप्त माया का आवरण जर्जर होने लगता है, तथा वह अखण्ड आनन्द का रसास्वादन करने लग जाता है। इस पूजन को किसी भी गुरुवार अथवा पूर्णिमा अथवा विशेष दिवसों पर सम्पन्न करने पर तत्काल ही परिणाम सामने आते हैं, और साधक का मन एक उच्च धरातल पर, भाव भूमि के सागर में हिलोरे लेने लग जाता है। इस पूजन के तीन चरण हैं — १. गुरु सच्चिदानन्द पूजन — अर्थात, गुरु का ब्रह्मस्वरूप या ईश्वर स्वरूप में पूजन; २. गुरु निखिलेश्वरानंद पूजन — संन्यस्त स्वरूप या मायारहित, निर्लिप्त स्वरूप पूजन तथा ३. साक्षात गुरु पूजन — अर्थात वर्तमान में देह रूप में जो गुरु हैं उनका पूजन।

आवश्यक साधना सामग्री — पारमेष्ठि गुरु रुद्राक्ष, पारद गुरु पादुका, तीन तांत्रोक्त नारियल

भगवान सच्चिदानन्द गुरु पूजन

ब्रह्म मुहूर्त में नित्य क्रिया से निवृत्त होकर इस पूजन को सम्पन्न करना चाहिए, क्योंकि अध्यात्म या ब्रह्म चिन्तन का काल ब्रह्म मुहूर्त ही होता है। अपने सामने चौकी पर श्वेत वस्त्र बिछा कर उस पर गुरु चित्र स्थापित करें। उसके बाद धूप और दीप जलाकर पवित्रीकरण और प्राणायाम सम्पन्न करें। गुरु चित्र के सामने किसी थाली में कुंकुम से 'ॐ' लिख कर उस पर एक **'पंचमुखी रुद्राक्ष'** को स्थापित करें।

दोनों हाथ जोड़ कर प्रणामांजलि अर्पित करें —

गुरुरूपमेवं गुरुब्रह्म रूपं विश्णुं च रुद्रं देवं वदाम्यं।
गुरुर्वै गुरुर्वै परम पूज्य रूपं, गुरुर्वै सदाऽहं प्रणम्यं नमामि।
गुरुदेव कारुण्य रूपं सदैवं, गुरु आत्म रूपं प्राणस्वरूपं।
देवस्य रूपं चैतन्य मूर्तिं, गुरुर्वै प्रणम्यं गुरुर्वै प्रणम्यं॥
सिद्धाश्रमोऽयं परिपूर्ण रूपं सिद्धाश्रमोऽयं दिव्यं वरेण्यं।
आतुर्यमाण मचलं प्रवतं प्रदेयं, सिद्धाश्रमोऽयं प्रणमं नमामि॥

ॐ गुरुभ्यो नमः। ॐ परम गुरुभ्यो नमः। ॐ परात्पर गुरुभ्यो नमः।

भगवतपाद परम पूज्य **सच्चिदानंद भगवान (पारमेष्ठि रुद्राक्ष)** को शुद्ध जल या गंगाजल से स्नान करावें।

ॐ यं — वायु बीज को बोल कर भगवान सच्चिदानन्द (रुद्राक्ष) का दुग्ध से स्नान करावें।

ॐ रं — वह्नि बीज से दधि स्नान कराएं।

ॐ ठं — चन्द्र बीज से घृत स्नान कराएं।

ॐ वं — वरुण बीज से मधु स्नान कराएं।

ॐ लं — पृथ्वी बीज से शर्करा स्नान कराएं।

ॐ हंसः सोऽहं — इससे पंचामृत स्नान करावें।

इसके बाद शुद्ध जल से स्नान करावें —

गंगा सरस्वति रेवा पयोष्णि नर्मदा जलै,
स्नापितोऽस्मि मया देव स्नानार्थं प्रतिगृह्यतां।

इसके बाद **'वस्त्रोपवस्त्रं समर्पयामि श्री सच्चिदानन्दाय नमः'** बोल कर वस्त्र (मौलि) अर्पित करें।

रुद्राक्ष पर चन्दन, अक्षत एवं पुष्प अर्पित करें —

श्रीखण्डचन्दनं समर्पयामि नमः। चन्दनान् ते अक्षतान् समर्पयामि नमः। अक्षतान्ते पुष्प माल्यां समर्पयामि नमः।

इसके बाद साधक अपना दाहिना हाथ रुद्राक्ष पर रख कर उसमें प्राणस्थापन की भावना करे और निम्न मंत्र का उच्चारण करे –

आं सोऽहं मम प्राणा इह प्राणा इह स्थिता:, आं सोऽहं मम जीव इह स्थितः, आं सोऽहं मम सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनश्चक्षु श्रोत्रजिह्वाघ्राणानि इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

धूपं आघ्रापयामि नमः। दीपं दर्शयामि नमः। (धूप, दीप दिखाएं)

नैवेद्य अर्पित करें। फिर एक आचमनी जल चढाएं। इसके बाद रुद्राक्ष के सामने निम्न मंत्र बोलते हुए गुरु मण्डल पूजन के लिए चावल की पांच ढेरी बनाते जाएं।

ॐ दिव्यौघ गुरु पंक्तये नमः। दिव्यौघ गुरु पंक्ति श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ सिद्धौघ गुरु पंक्तये नमः। सिद्धौघ गुरु पंक्ति श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ मानवौघ गुरु पंक्तये नमः। मानवौघ गुरु पंक्ति श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ पारमेष्ठि गुरवे नमः। पारमेष्ठि गुरु श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ श्री गुरवे नमः। परात्पर गुरु श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

इसके बाद निम्न मंत्र का किसी भी माला से एक माला या कर माला से १०८ बार जप करें –

सच्चिदानन्द मंत्र

॥ ॐ श्रीं सं सच्चिदानन्दाय परात्पराय श्रीं ॐ नमः ॥

Om Shreem Sam Sachchidaanandaay Paraatparaay Shreem Om Namah

निखिलेश्वरानन्द गुरु पूजन

तत्पश्चात भगवत पूज्यपाद निखिलेश्वरानन्द जी के संन्यस्त स्वरूप के पूजन हेतु **'पारद गुरु पादुका'** या गुरु चित्र को किसी पात्र में स्थापित कर हाथ जोड़कर प्रार्थना करें –

ॐ गुरु ब्रह्मा गुरु र्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात पर ब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः ॥
अज्ञान तिमिरान्धस्य ज्ञानांजन शलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः ॥
मूकं करोति वाचालं पंगुं लंघ्यते गिरिं।
यत्कृपा तं हं वन्दे परमानन्द माधवम् ॥

इसके बाद निम्न मंत्रों का उच्चारण करते हुए गुरुदेव के निखिल स्वरूप का पादुका पूजन करें –

ॐ निखिलेश्वरानन्द देवतायै इदं पुष्पासनं समर्पयामि। (आसन हेतु एक पुष्प पादुका के नीचे रखें)

ॐ निखिलेश्वरानन्द देवते स्वागतं समर्पयामि।

'स्वागत मुद्रा' (दोनों हाथ खोलकर आगे करें) दिखाएं।

ॐ निखिलेश्वरानन्द देवतायै पाद्यं समर्पयामि।

दो आचमनी जल पादुका पर समर्पित करें।

ॐ निखिलेश्वरानन्द देवतायै अर्घ्यं समर्पयामि।

दाहिने हाथ में जल लेकर पादुका पर जल चढ़ाएं।

ॐ निखिलेश्वरानन्द देवतायै सुगन्धित द्रव्यं समर्पयामि। (इत्र की कुछ बूंदें पादुका पर अर्पित करें)

ॐ निखिलेश्वरानन्द देवतायै स्नानं समर्पयामि नमः।

दोनों पादुकाओं को जल से स्नान कराएं

निम्न श्लोक बोलते हुए पादुका को पंचामृत से स्नान कराएं।

गव्यं क्षीरं दधि घृतं शर्करा क्षौद्र संयुक्तं
पंचामृतं यदेतच्च तेनत्वां स्नापाम्यऽहं।

ॐ निखिलेश्वरानन्द देवतां स्नापयामि नमः।

ॐ निखिलेश्वरानन्द देवतायै वस्त्रं निवेदयामि नमः।

(पादुका पर मौलि के दो टुकड़े वस्त्र रूप में अर्पित करें)

ॐ निखिलेश्वरानन्द देवतायै यज्ञोपवीतं समर्पयामि नमः।

पादुका पर यज्ञोपवीत अर्पित करें

ॐ निखिलेश्वरानन्द देवतायै गन्धं समर्पयामि नमः।

दोनों पादुकाओं पर कुंकुम से तिलक करें

ॐ निखिलेश्वरानन्द देवतायै अक्षतान् समर्पयामि नमः।

ॐ निखिलेश्वरानन्द देवतायै पुष्पाणि समर्पयामि नमः।

पादुकाओं पर अक्षत एवं पुष्प अर्पित करें।

दक्षिण पादुका द्वादश कला स्थापन

इसके बाद कुंकुम अक्षत अर्पण करते हुए दाहिनी पादुका में सूर्य की द्वादश कला का स्थापन करें –

ॐ कं भं तपिण्यै नमः। **ॐ खं बं तापिण्यै नमः।**
ॐ गं फं धूम्रायै नमः। **ॐ घं पं मरिच्यै नमः।**
ॐ ङं नं ज्वालिन्यै नमः। **ॐ चं धं रुच्यै नमः।**
ॐ छं दं सुषुम्नायै नमः। **ॐ जं थं भोगदायै नमः।**
ॐ झं तं विश्वायै नमः। **ॐ यं णं बोधिन्यै नमः।**
ॐ तं धं धारिण्यै नमः। **ॐ ठं डं क्षमायै नमः।**

वाम पादुका षोडश कला स्थापन

इसके बाद कुंकुम अक्षत अर्पण करते हुए बाईं पादुका में चन्द्रमा की षोडश कला का स्थापन करें –

ॐ अं अमृतायै नमः।
ॐ इं उपायै नमः।
ॐ उं तुष्ट्यै नमः।
ॐ ऋं धृत्यै नमः।
ॐ लृं चन्द्रिकायै नमः।
ॐ एं ज्योत्स्नायै नमः।
ॐ ओं प्रीत्यै नमः।
ॐ अं पूर्णायै नमः।

ॐ आं मानदायै नमः।
ॐ ईं पुष्ट्यै नमः।
ॐ ऊं रत्यै नमः।
ॐ ॠं शशिन्यै नमः।
ॐ लृं कान्त्यै नमः।
ॐ ऐं श्रियै नमः।
ॐ औं अंगदायै नमः।
ॐ अः पूर्णामृतायै नमः।

इसके बाद पादुका के समक्ष धूप दीप अर्पित करें।

ॐ निखिलेश्वरानन्द देवतायै धूपं आघ्रापयामि नमः।
ॐ निखिलेश्वरानन्द देवतायै दीपं दर्शयामि नमः।

निम्न श्लोक बोलकर नैवेद्य अर्पित करें –

नैवेद्यं षडरसं चतुर्विध मिद रतं तव,
स्थापितं पुरतो भक्तया गृहाण तुष्टिमावाहय।
हेम पात्र स्थितं दिव्यं, परमान्नं सुसंस्कृतं।
पंच षड् रस युक्तं गृहाण मम सिद्धये॥

ॐ निखिलेश्वरानन्द देवतायै नैवेद्यं निवेदयामि। फलानि समर्पयामि नमः। (नैवेद्य और फल अर्पित करें)

इसके बाद पांच आचमनी जल अर्पित करें –

ॐ अमृतो प स्तरणमसि स्वाहा। ॐ प्राणाय स्वाहा। ॐ अपानाय स्वाहा। ॐ व्यानाय स्वाहा। ॐ उदानाय स्वाहा।

ॐ निखिलेश्वरानन्द देवतायै नमः ताम्बूलं समर्पयामि नमः। (एक पान अर्पित करें)

ॐ निखिलेश्वरानन्द देवतायै नमः दक्षिणा द्रव्यं समर्पयामि नमः। (दक्षिणा अर्पित करें)

अर्घ्य –तत्पश्चात दाहिने हाथ में जल लेकर उसमें कुंकुम अक्षत मिलाकर इस प्रकार निम्न मंत्र बोलते हुए पांच बार अर्घ्य अर्पित करें –

ॐ श्री निखिलेश्वरानन्द श्री पादुकां तर्पयामि नमः।
ॐ श्री परम गुरु श्री पादुकां तर्पयामि नमः।
ॐ श्री परापर गुरु श्री पादुकां तर्पयामि नमः।
ॐ पारमेष्ठि गुरु श्री पादुकां तर्पयामि नमः।
ॐ श्री सांगां सपरिवारां सायुधां सवाहनां श्री निखिलेश्वरानन्द देवतां तर्पयामि नमः।

इसके बाद निम्न मंत्र बोलकर दोनों पादुकाओं को केसर या कुंकुम का तिलक करें –

गन्ध द्वारां दुराधर्षां नित्य पुष्टां करिष्णीं,
ईश्वरीं सर्वभूतानां तां इहो पह्व्ये श्रियं।

पूजन के बाद निम्न मंत्र का १०८ बार जप करें –

निखिलेश्वरानन्द मंत्र

॥ ॐ हं लं षं निखिलेश्वराय यं रं लं ॐ फट् ॥

Om Ham Lam Sham Nikhileshwaraay Yam Ram Lam Om Phat

साक्षात गुरु पूजन

सम्पूर्ण गुरु मण्डल पूजन की पूर्णता के लिए साक्षात गुरु पूजन भी आवश्यक है। इसके लिए किसी पात्र में कुंकुम से त्रिभुज (🔻) बना दें और तीनों त्रिकोणों में तीन '**लघु नारियल**' या ३ सुपारी को गुलाब पुष्प का आसन देकर स्थापन करें।

इसके बाद '**आपोहिष्टा मयो भुवः**' इस मंत्र को बोलते हुए इन तीनों नारियल को शुद्ध जल से स्नान करावें।

निम्न मंत्र बोलकर वस्त्र रूप में मौलि अर्पित करें –

सर्वभूषादिके सौम्ये लोक लज्जा निवारणे
मयो प पादिते तुभ्यं गृह्यतां परमेश्वर।

निम्न मंत्र बोलकर तीनों नारियल पर कुंकुम से तिलक करें –

ॐ त्रिमूर्तिभ्यो तिलकं समर्पयामि।

निम्न मंत्र बोलकर नारियलों पर अक्षत चढ़ावें –

ॐ त्रिमूर्तिभ्यो अक्षतान् समर्पयामि।
ॐ त्रिमूर्तिभ्यो पुष्पमालां समर्पयामि।
ॐ त्रिमूर्तिभ्यो धूपं दीपं समर्पयामि।
ॐ त्रिमूर्तिभ्यो नैवेद्यं समर्पयामि।
ॐ त्रिमूर्तिभ्यो ताम्बूलं, दक्षिणाद्रव्यं समर्पयामि।

अंत में गुरु मंत्र का १०८ बार जप करें –

गुरु मंत्र

॥ ॐ परम तत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः ॥

Om Param Tatvaay Naaraayannaay Gurubhyo Namah

फिर संन्यास आरती व गुरु आरती करें। तत्पश्चात निम्न मंत्र बोलकर गुरुदेव को साष्टांग दण्डवत प्रणाम करें –

ॐ नमः शंभवाय च मयोभवाय च नमः शंकराय च।

फिर पूर्ण श्रद्धा से प्रसाद को ग्रहण करें।

पारद पादुका : १५०/-, ३ तांत्रोक्त नारियल : १२०/-, पारमेष्ठि गुरु रुद्राक्ष : १०१/-

इस पूजन की सामग्री को विसर्जित नहीं करना है। इसी सामग्री द्वारा बार-बार जब भी साधक चाहे, किसी विशेष अवसर पर, गुरुवार को, २१ तारीख को जब भी मन हो पूजन कर गुरुदेव का विशेष आशीर्वाद प्राप्त कर सकता है। किसी परिस्थितिवश यदि सामग्री न प्राप्त हो सके, तो भी इस पूजन को मात्र गुरु चित्र रख कर भी सम्पन्न किया जा सकता है। इस पूजन को कुछ दिन तक नित्य करने से विशेष अनुकूलता सामने आती है और यदि मन में कोई संकल्प है, तो उसकी पूर्ति होना प्रारम्भ हो जाती है।

निखिलेश्वरानंद

पंच रत्न स्तवन

ॐ नमस्ते सते सर्व-लोकाश्रयाय, नमस्ते चिते विश्व-रूपात्मकाय।
नमो द्वैत तत्वाय मुक्ति-प्रदाय, नमो ब्रह्मणे व्यापिने निर्गुणाय ॥१॥

त्वमेकं शरण्यं त्वमेकं वरेण्यम्, त्वमेकं जगत-कारणं विश्व-रूपम्।
त्वमेकं जगत् कर्तृ-पातृ-प्रहर्तं त्वमेकं परं निश्चलं निर्विकल्पम्॥२॥

भयानां भयं भीषणं भीषणानाम् गतिः प्राणिनां पावनं पावनानाम्।
महोच्चै पदानां नियन्तृ त्वमेकम् परेषां परं रक्षकं रक्षकानाम्॥३॥

परेशं प्रभो सर्व रूपाविनाशिन् अनिर्देश्य सर्वेन्द्रियागम्य सत्यं।
अचिन्त्याक्षरं व्यापकाव्यक्त - तत्वं, जगद् भासकाधीश पायदपायात्॥४॥

तदेकं स्मरामस्तदेकं जपामः तदेकं जगत् साक्षि-रूपं नमामः।
तदेकं निधानं निरालम्बमीशम् भवाम्बोधि-पोतं शरण्यं व्रजामः॥५॥

पंच रत्नमिदं स्तोत्रं ब्रह्मणः परमात्मनः।
यः पठेत् प्रयतो भूत्वा ब्रह्म सायुज्य माप्नुयात्॥६॥

अर्थात् हे गुरुदेव! आप मेरे जीवन के आराध्य, आप नित्य हो, समस्त लोकों के आश्रय हो, आपको नमस्कार करता हूं। हे योगीराज! आप ज्ञान-स्वरूप हो, विश्व की आत्मा-स्वरूप हो, आप अद्वैत तत्व प्रदायक मुक्तिदायक हैं आपको नमस्कार है। आप सर्वव्यापी निर्गुण ब्रह्म हो, सगुण रूप में आप हम समस्त शिष्यों के सामने उपस्थित हो, आपको नमस्कार है।

आप ही हम समस्त शिष्यों के एक मात्र 'शरण्य' अर्थात् आश्रय हो, आप इस संसार में हमारे लिए अद्वितीय वरणीय हो, आप ही समस्त सिद्धियों के एक मात्र कारण हो, आप विश्वरूप हो, आप के मुंह में और कण्ठ में सम्पूर्ण विश्व

समाया हुआ है जिसे हमने कई बार अनुभव किया है। आप ही समस्त सिद्धियों के, संसार के श्रेष्ठी कर्त्ता, निर्माण कर्त्ता, पालन कर्त्ता और संहार कर्त्ता हो। आप निश्चल और विविध कल्पनाओं से रहित पूर्णता प्राप्त षोडश कलायुक्त पूर्ण पुरुष हो, आपको हम शिष्यों का नमस्कार है।

आप भय के भी भय हो, अर्थात् आपके नाम का स्मरण करते ही भय समाप्त हो जाता है, आप विपत्तियों के लिए विपत्ति स्वरूप हो, आपको देखते ही या आपका नाम-स्मरण करते ही हम लोगों को विपत्तियां समाप्त हो जाती हैं। हम सब शिष्यों की आप एक मात्र गति हो। आप पवित्रता के साक्षात् स्वरूप हो, उच्च पद पर जितनी भी महाशक्तियां है, आप उनके आधार स्वरूप हो, आप संसार के सभी श्रेष्ठ पदार्थों से प्रेरित हो और रक्षकों के पूर्ण रूप से रक्षक हो, हम सब शिष्य आपको भक्ति भाव से प्रणाम करते हैं।

हे तपस्वी, हे प्रभु, समस्त शिष्यों के हृदय में विराजमान अविनाशी रूप में रहते हुए, समस्त शिष्यों का कल्याण करने वाले और समस्त प्रकार की इन्द्रियों पर पूर्ण रूप से नियंत्रण करने वाले आप पूर्ण रूप से अगोचर होते हुए भी हम सब लोगों के सामने साक्षात् देह रूप में उपस्थित हो। हे सत्य स्वरूप, हे अचिन्त्य, हे अक्षर, हे व्यापक, हे न कहने वाले तत्व, हे ब्रह्म स्वरूप, हे मेरे आराध्य, हे मेरे प्राणों में निवास करने वाले, हम समस्त शिष्य आपके चरणों में हैं, आप हमें अपनी भक्ति, अपना ज्ञान और अपना स्नेह प्रदान करें, हम आपको भक्ति-भाव से प्रणाम करते हैं।

हम तो और किसी इष्ट को नहीं जानते, न तो हमें मंत्र ज्ञान है, और न तंत्र का, न हमें पूजा-विधि आती है, और न साधना रहस्य, हमें तो केवल गुरुमंत्र का जप करने में समर्थ हैं, पल-पल पर आप द्वारा बिखेरी हुई माया से हम कई बार भ्रमित हो जाते हैं और आपको सामान्य मानव समझने की गलती कर बैठते हैं, आपको सामान्य मानव की तरह हंसते और उदास होते हुए देखते और विचरण करते हुए, कहते और सुनते हुए जब अनुभव करते हैं, तो हम सामान्य शिष्य भ्रम में पड़ जाते हैं और हमारा सारा ज्ञान एक क्षण के लिए तिरोहित हो जाता है। हम बार-बार जन्म लेते हैं, संसार के दुःखों में, संसार की समस्याओं और गृहस्थ की परेशानियों में डूबते उतराते हुए आपका भली प्रकार से चिन्तन नहीं कर पाते, हमें और कुछ भी नहीं आता, हम तो केवल आतुर कण्ठ से 'गुरुदेव' शब्द का उच्चारण ही कर सकते हैं और इसी शब्द के माध्यम से आपके द्वारा सिद्धाश्रम प्राप्त कर पूर्ण ब्रह्म में लीन हो जाना चाहते हैं, हम तो केवल इतना जानते हैं कि आप ही हमारे आश्रयभूत हो, आप ही हमारे जीवन के आधार हो, आप ही हमारे भवसागर के जहाज स्वरूप हो, हम तो केवल आपका ही आश्रय ग्रहण करते हैं और आपको हम सब श्रद्धायुक्त प्रणाम करते हैं।

जो इस पंच रत्न स्तवन का नित्य पाठ करता है, वह निश्चय ही समस्त विकारों से मुक्त होकर ब्रह्म-स्वरूप गुरु-चरणों में लीन होने की सामर्थ्य प्राप्त कर लेता है। प्रति दिन इस स्तवन का पाठ करना चाहिए, अथवा सोमवार और गुरुवार को तो निश्चय ही इसका पाठ कर बाद में ही अन्न-जल ग्रहण करना चाहिए।

येनोदात्त तपः चयेन सततं सन्यस्तमाभूषितम्,
ब्रह्मानन्द रसेनषिक्त मनसा शिष्याश्च संभाविताः।
ब्रह्माण्डं नवरागरंजित वपुः हस्तामलवद् धृतम्,
सोऽयं भूतिविभूषितः गुरुवरः निखिलेश्वरः पातु माम्।।

जिसने अपने उदात्त तपः पुञ्ज से सन्यास धर्म को विभूषित किया, ब्रह्मानन्द में निरन्तर अभिषिक्त जिसने अपने अनन्त शिष्यों को अमृत सेंचन किया, नई नई विभिन्न कलाओं से जिसने ब्रह्माण्ड को 'हस्तामलकवत्' धारण किया है, ऐसे अनन्त विभूतियों से भूषित परम पूज्य गुरुदेव निखिलेश्वरानन्द मेरी रक्षा करें।

श्री निखिलेश्वरानन्द कवचम्

साधक के लिए अमृत घट स्वरूप

सिद्धाश्रम के सर्वश्रेष्ठ योगी श्रीधरानन्द जी ने इस कवच को ब्रह्माण्ड से प्राप्त किया है। सिद्धाश्रम के प्रत्येक योगी बाहरी बाधाओं और तंत्र प्रयोगों से रक्षा हेतु तथा साधना में सिद्धि प्राप्त करने के लिए अपने सामने परमहंस स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी का चित्र स्थापित करके तथा अपनी भुजा पर श्री निखिलेश्वरानन्द कवच धारण कर इस पाठ का प्रयोग करते हैं, जिससे वे निरन्तर सभी दृष्टियों से उन्नति की ओर अग्रसर होते हैं।

ठीक इसी प्रकार साधक और शिष्य भी निरन्तर अपने पूजा क्रम में इस कवच का पाठ करें तो वह साधक और उसका परिवार शरीर बाधा, राज्य बाधा एवं सभी बाधाओं से मुक्त रहता है।

ॐ अस्य श्री निखिलेश्वरानन्द कवचस्य, श्री मुद्गल ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्री गुरुदेवो निखिलेश्वरानन्द परमात्मा देवता। "महोस्त्वं रूपं च" इति बीजम्। "प्रबुद्धं निर्नित्यमिति" कीलकम्। " अथौ नैत्रं पूर्ण" इति कवचम्। श्री भगवतो निखिलेश्वरानन्द प्रीत्यर्थं पाठे विनियोगः।

करन्यास :-

श्री सर्वात्मने निखिलेश्वराय -अंगुष्ठाभ्यां नमः

श्री मंत्रात्मने पूर्णेश्वराय- तर्जनीभ्यां नमः

श्री तंत्रात्मने वागीश्वराय- मध्यमाभ्यां नमः

श्री यंत्रात्मने योगीश्वराय - अनामिकाभ्यां नमः

श्री शिष्यप्राणात्मने सच्चिदानन्द प्रियाय- करतल कर पृष्ठाभ्यां फट्

अंग न्यासः-

श्रींशेश्वरः हृदयाय नमः,

ह्रीं शेश्वरः शिरसे स्वाहा।

क्लींशेश्वरः शिखायै वषट्,

तंपरेश्वरः कवचाय हुम्

तापेश्वरः नेत्रत्रयाय वौषट्

एकेश्वरः करतल कर पृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट्।

रक्षात्मक देह कवचम्

शिरः सिद्धेश्वरः पातु, ललाटं च परात्परः
नेत्रे निखिलेश्वरानन्दः , नासिका नरकान्तकः ।।१।।

कर्णौ कालात्मकः पातु , मुखं मंत्रेश्वरस्तथा।।
कण्ठं रक्षतु वागीशः, भुजौ च भुवनेश्वरः ।।२।।

स्कन्धौ कामेश्वरः पातु, हृदयं ब्रह्मवर्चसः।
नाभिं नारायणो रक्षेत् उरू ऊर्जस्वलोऽपि वै। ।३।।

जानुनी सच्चिदानन्दः पातु पादौ शिवात्मकः
गुह्यं लयात्मकः पायात् चित्तं चिन्तापहारकः ।।४।।

मदनेशः मनःपातु, पृष्ठं पूर्णप्रदायक :
पूर्वं रक्षतु तंत्रेश : यंत्रेशः वारुणीं तथा ।।५।।

उत्तरं श्रीधरः रक्षेत् दक्षिणं दक्षिणेश्वरः
पातालं पातु सर्वज्ञः ऊर्ध्वं मे प्राणसंज्ञक : ।।६।।

कवचेनावृतो यस्तु यत्र कुत्रापि गच्छति
तत्र सर्वत्र लाभः स्यात् किंचिदत्र न संशयः ।।७।।

यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितं
धनवान् बलवान् लोके जायते समुपासकः ।।८।।

ग्रहभूतपिशाचाश्च यक्षगन्धर्वराक्षसाः
नश्यन्ति सर्वविघ्नानि दर्शनात् कवचावृतम् ।।९।।

य इदं कवचं पुण्यं , प्रातः पठति नित्यशः
सिद्धाश्रम पदारूढ़ः ब्रह्मभावेन भूयते ।।१०।।

कवच पाठ पूर्ण करने के बाद साधक नित्य पूजा-क्रम पूर्ण करके गुरु आरती सम्पन्न करें।

निखिलं मधुरं

अधरं मधुरं वदनं मधुरं, नयनं मधुरं हसितं मधुरं
हृदयं मधुरं गमनं मधुरं, मधुराधिपते निखिलं मधुरं।
वचनं मधुरं चरितं मधुरं, वसनं मधुरं वलितं मधुरं
चलितं मधुरं भ्रमितं मधुरं, मधुराधिपते निखिलं मधुरं।।

दन्त्यं मधुरं जिह्वा मधुरं, चितवन मधुरं, भृकुटि मधुरं
कर्णं मधुरं हास्यं मधुरं, मधुराधिपते निखिलं मधुरं।
पाणिर्मधुरं पादौ मधुरं, नृत्यं मधुरं सख्यं मधुरं
इत वै मधुरं उतवै मधुरं, मधुराधिपते निखिलं म धुरं।।

गीतं मधुरं पीतं मधुरं, मुक्तं मधुरं सुप्तं मधुरं
रूपं मधुरं तिलकं मधुरं, मधुराधिपते निखिलं मधुरं।
करणं मधुरं तरणं मधुरं, हरणं मधुरं रमणं मधुरं
वमितं मधुरं शमितं मधुरं, मधुराधिपते निखिलं मधुरं।।

रामं मधुरं हस्तं मधुरं, भुज वै मधुरं बाहु मधुरं
चितवन मधुरं भृकुटी मधुरं, मधुराधिपते निखिलं मधुरं।
यष्टिर्मधुरं सृष्टिर्मधुरं, प्रिय वै मधुरं प्रियतं मधुरं
मम वै मधुरं त्वामं मधुरं, मधुराधिपते निखिलं मधुरं।।

कामं मधुरं चिन्त्यं मधुरं, दृष्टिर्मधुरं जंघा मधुरं
गति वै मधुरं कार्यमधुरं, मधुराधिपते निखिलं मधुरं।
कांति मधुरं रंजन मधुरं, अंजन मधुरं रोमं मधुरं
नाट्यं मधुरं लीला मधुरं,मधुराधिपते निखिलं मधुरं।।

वेणु मधुरं केशं मधुरं, गीतं मधुरं गेयं मधुरं
चित्तं मधुरं रंजन मधुरं, मधुराधिपते निखलं मधुरं।
दिव्या मधुरं कृष्णा मधुरं,चेतन मधुरं अंगी मधुरं
प्रिय वै मधुरं वेणुमधुरं,मधुराधिपते निखिलं मधुरं।।

आहं मधुरं वाहं मधुरं , मोदं मधुरं कुम्भं मधुरं
श्रीं श्रीं मधुरं अंगम मधुरं, मधुराधिपते निखिलं मधुरं।
गुणकर मधुरं सुखकर मधुरं,आशीर्मधुरं श्रीवैं मधुरं
संगम मधुरं संगिन मधुरं, मधुराधिपते निखिलं मधुरं।।

सौन्दर मधुरं लीला मधुरं, प्रगटं मधुरं प्रच्छं मधुरं
यष्टिं मधुरं तृष्टिं मधुरं मधुराधिपते निखिलं मधुरं।
मधुरं मधुरं मधुरं मधुरं, मधुरं मधुरं सर्व मधुरं
मम प्राण चरण त्वं वै मधुरं, मधुराधिपते निखिलं मधुरं।। ♦

पारद - पादुका पूजन

गृहे स्याद् यस्य पूजायां गुरु पारद-पादुका ।
देवा अपि च तद् भाग्यं धन्यं धन्यतरं विदुः ।।

जिस सौभाग्य शाली व्यक्ति के पूजा गृह में पारद गुरु-पादुका स्थापित है
उसके भाग्य से देवता भी ईर्ष्या करते हैं तथा उसे धन्य-धन्य कहते हैं।

गुरु पादुका का महत्व कोई शिष्य या साधक ही जान सकता है, सामान्य मनुष्य के लिए तो वह मात्र पादुका है किन्तु इसमें जो दिव्यता और चैतन्यता है वह अहर्निश शिष्य के हृदय में प्रवहित होती रहती है। गुरु चरण पादुका की उपस्थिति घर में साक्षात् गुरु की उपस्थिति जैसी है, क्योंकि गुरु की समस्त शक्ति का श्रोत उनके चरण- कमल ही हैं। शिष्य को जो कुछ भी प्राप्त हुआ है वह गुरु के चरणों से ही सम्भव हुआ है। जब गुरु सशरीर उपस्थित न हों या किसी प्रवास में हों तो गुरु पादुका ही शिष्य के उपास्य के रूप में वन्दनीय और सेवनीय होता है। श्री रामचन्द्र जी के वन गमन के वाद भरत जी ने १४ वर्ष तक इन पादुकाओं की उपासना की, आज प्रेमी भक्तों में भरत जी अद्वितीय और अग्रणी भक्त माने जाते हैं। गुरु के शरीर से सम्बन्धित एक-एक वस्तु परमश्रद्धास्पद एवं उपादेय होती हैं। फिर "चरण पादुका " तो शिष्य के सौभाग्य से प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों रूप से जुड़े हुए हैं। गुरु पादुकायें सोने, चांदी या काष्ठ की भी हो सकती है पर "पारद पादुका" का अपना विभिन्न ही महत्व है।

"पारद " धातुओं में अद्वितीय एवं श्रेष्ठतम माना गया है। शम्भु के शक्ति रूप होने के कारण सभी देवी देवताओं के द्वारा वन्दनीय एवं स्पृहनीय है । यह अनेक श्रेष्ठ मंत्रात्मक क्रियाओं से संस्कारित होने के कारण जिस किसी भी घर में स्थापित होता है, वह घर ,वह परिवार सर्वत्र मंगलमय सुखद एवं शान्ति मय हो जाता है। सच तो यह है कि "पारद" समस्त संसार का आधार भूत तत्व है। इसलिए धर्म, अर्थ और काम प्राप्ति का मूल भूत साधन है। इतने महत्व के रहते "पारद पादुका " जिस घर में स्थापित हो व प्रतिदिन पूजन होता हो उससे देवता गण भी ईर्ष्या करते हैं, और समस्त वातावरण इस के कारण धन्य- धन्य होकर अध्यात्ममय बन जाता है।

पूजन विधि :-

प्रातः ब्रह्ममुहूर्त में स्नान आदि से परिशुद्ध होकर पवित्र आसन पर पूर्व या उत्तर की ओर मुंह करके वैठ जायें, अपने सामने एक लकड़ी की छोटी चौकी पर पीला कपड़ा बिछा दें तथा उस पर एक थाली स्टील या तांबें की रख दे फिर पारद गुरु पादुका को स्थापित करके पूजन आरम्भ करें।

पवित्री करण :-

इस मंत्र से अपने शरीर तथा अन्तर्मन को पवित्र करें -
ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वाऽवस्थांगतोऽपि वा ।
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः ।

आचमनम् :-

दाहिने हाथ में जल लेकर तीन बार पियें -
ॐ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा,
ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा,
ॐ सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा ।।

इसके बाद पादुका के सामने पांच **"निखिलेश्वरानन्द श्रीफल "** रख दें, उसमें केसर,कुंकुम की बिन्दी लगा दें जो साधक के सुख और सौभाग्य का प्रतीक है, बिन्दी लगाते समय निम्न सन्दर्भ का उच्चारण करें -

ॐ गुं गुरुभ्यो नमः , ॐ पं परम गुरुभ्यो नमः
ॐ पं परात्पर गुरुभ्यो नमः, ॐ पं परमेष्ठि गुरुभ्यो नमः

विनियोग :-

इसके बाद दाहिने हाथ में जल लेकर विनियोग करें। ॐ अस्य श्री पादुका मंत्रस्य दक्षिणामूर्ति ऋषिः गायत्री छन्दः श्री गुरु देवता प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः इसे बोल कर दाहिने हाथ के जल को भूमि पर छोड़ दें।

पादुका में **प्राण प्रतिष्ठा** के लिए निम्न मंत्र का उच्चारण करें -
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः हंसः शिवः सोहं हंसः स्वरूप निरुपणहेतवे श्री गुरुवे नमः

फिर गुरु ध्यान करें :-

महा-रोगे महोत्पाते महा-देवि महा-मये। महा-पदि महा-पापे स्मृता रक्षति पादुका ।।
तेनाधीन स्मृतं ज्ञानं दुष्टं या च व पूजितं। जिह्वायां वसते यस्य श्री परा-पादुका-स्मृति ।।
भोग भोगार्थिना ब्रह्म. वैष्णवी -पद कांक्षिणाम्। भक्तिरेव गुरौ देवि "नान्य पंथा " इति श्रुतिः।

परम गुरु ध्यान :-

गुरु भक्ति - विहीनस्य तपो विद्या कुलं व्रतम्। सर्वं नश्यन्ति तत्रैव भूषणं लोक रंजनम ।।

परमेष्ठि गुरु ध्यान :-

गुरुः पिता गुरुर्माता गुरुर्देवो गुरुर्गति। शिवे रुष्टे गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन।।
इसके बाद खड़ाऊं पर पुष्प समर्पित करते हुए निम्न उच्चारण करें :-

१ ॐ गुरवे नमः आवाहयामि स्थापयामि
२ ॐ परम गुरवे नमः आवाहयामि स्थापयामि
३ ॐ परात्पर गुरवे नमः आवाहयामि स्थापयामि
४ ॐ परमेष्ठि गुरवे नमः आवाहयामि स्थापयामि

इसके बाद पंचोपचार या षोडषोपचार से गुरु पादुकाओं का पूजन करें- पूजन के बाद निम्न मंत्र का **स्फटिक माला** से ४ माला जप करे-

।। स ह ख्फ्रें ह स क्ष म ल व र यू म् ।।

जप समाप्ति के बाद आरती और पुष्पांजलि एवं क्षमा प्रार्थना तथा स्तुति पाठ के साथ पादुका पूजन सम्पूर्ण करें ।

हमारा प्रत्येक दिन हमारे लिए एक नया जीवन है, रात्रि के बाद जब व्यक्ति जागता है तो वह एक नया जीवन लेकर उठता है, शास्त्रों में लिखा है कि जीवन का प्रारम्भ और जीवन का अन्त गुरु स्मरण से होना चाहिए, इसी प्रकार हमारे प्रत्येक दिन का प्रारम्भ और अवशान गुरु स्मरण से ही उचित है, ब्रह्मवैवर्त पुराण में बताया गया है कि किसी भी प्रकार से पूजा, साधना, उपासना तब तक व्यर्थ है जब तक कि जीवन में गुरु न हो। महाभारत के शान्ति पर्व में बताया गया है कि किसी भी प्रकार की पूजा आदि के समय अपने दाहिने हाथ की ओर गुरु का आसन बिछा देना चाहिए और यह भावना मन में लानी चाहिए कि मेरे पास गुरु बैठे हैं, और उनके निर्देशन में ही पूजा, साधना, अनुष्ठान, व्रत, उपवास या अन्य कोई भी कार्य सम्पन्न कर रहा हूं।

विष्णु पुराण में बताया गया है कि जब तक गुरु का आसन बिछा कर गुरु-स्तवन न किया जाय तब तक किसी भी पूजा या साधना में सफलता नहीं होती।

साधक चाहे पुरुष हो या स्त्री, प्रत्येक के जीवन में गुरु का महत्व और स्थान आवश्यक है, उसे चाहिए कि वह प्रातः उठते समय गुरु-स्तवन करे.इसके बाद ही दैनिक कार्य में प्रवृत्त हो।

वशिष्ठ ने कहा कि स्नानदि से निवृत्त हो कर साधक या गृहस्थ आसन पर बैठ जांय, अपने दाहिनी और गुरु का आसन बिछा लें, उस पर गुरु की कल्पना करें या उनका चित्र या मूर्ति हो तो अपने सामने रखें और निम्न गुरु पाठ करें, इसके बाद ही अन्य किसी प्रकार की पूजा, व्रत, साधना या अनुष्ठान आदि सम्पन्न करें -

ॐ नमो गुरुभ्यो गुरु पादुकाभ्यो नमः परेभ्यः परपादुकाभ्यः।
आचार्य सिद्धेश्वर पादुकाभ्यो नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्यः ॥१॥
ऐंकार ह्रींकार रहस्ययुक्त श्रींकारगूढार्थ महाविभूत्या।
ॐकार मर्मप्रतिपादिनीभ्यां नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्याम् ॥२॥
होत्राग्नि होत्राग्निहविष्यहोतृ होमादिसर्वाकृतिभासमानम्।
यद् ब्रह्म तद्बोधवितारिणीभ्यां नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्याम् ॥३॥
कामदिसर्पव्रजगारुडाभ्यां विवेक वैराग्य निधिप्रदाभ्याम्।
बोधप्रदाभ्यां द्रुतमोक्षदाभ्यां नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्याम् ॥४॥
अनन्त संसारसमुद्रतार नौकायिताभ्यां स्थिरभक्तिदाभ्याम्।
जाड्याब्धिसंशोषणवाडवाभ्यां नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्याम् ॥५॥
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

समस्त सिद्धियां जिसमें निहित है जिसके एक एक बीजाक्षर महान बीज मंत्र है

समझे प्रत्येक बीज मंत्र को और अपनाएं जीवन में

ॐ परम तत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः

कहा जाता है कि आदिगुरु शंकराचार्य जब सब ओर से त्रस्त हो गए शरीर से क्षीण हो गए तब मां भगवती ने स्वयं आकर दर्शन दिए तथा अपने त्रिपुर सुन्दरी स्वरूप की साधना करने हेतु कहा और शंकराचार्य ने त्रिपुर सुन्दरी को अपनी आराध्य देवी के रूप में स्थापित कर उनके मंत्र का जप किया और यही नहीं इस मंत्र के – 'ह्रीं कएईल ह्रीं हसकहल ह्रीं सकल ह्रीं' प्रत्येक बीज मंत्र पर एक श्लोक की रचना की ठीक इसी प्रकार योगियों ऋषियों ने गुरु मंत्र 'ॐ' परम तत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः के प्रत्येक बीज मंत्र पर भी एक एक श्लोक की रचना की है। जिससे यह स्पष्ट होता है कि इस महान तेजस्वी मंत्र में कितना बड़ा ज्ञान का सागर भरा हुआ है

"प"

पकार पुण्यं परमार्थ चिन्त्यं
परोपकारं परमं पवित्रं
परम हंस रूपं प्रणवं परेशं
प्रणम्यं प्रणम्यं निखिलं त्वमेवं ॥१॥

गुरु मंत्र में प्रदर्शित **'पकार'** बीज का अर्थ है पूर्णता की पराकाष्ठा जीवन में सर्वोच्चता परमार्थ चिंतन, परोपकार तथा जीवन की पावनता प्रणव स्वरूप परमेश्वर के स्वरूप को प्राप्त करना तथा परमहंस की गति को प्राप्त करके गुरुमय होना अतः दिव्य विभूति भगवत पूज्यपाद गुरुदेव निखिलेश्वरानन्द प्रणम्य एवं सर्व स्तुत्य है।

"र"

रम्या सुवाणी दिव्यंच नेत्रं
अग्निं त्रिरूपं भवरोग वैद्यं
लक्ष्मी च लाभं भवति प्रदोषे
श्री राजमान्यं निखिलं शरण्यम ॥2॥

'रकार' बीज की साधना से वाणी में रमणीयता नेत्रों में दिव्यता तथा शरीर तथा मन के भीतर अग्नि त्रय के जागरण माध्यम से समस्त रोगों का शमन तथा भवरोग से मुक्ति अन्नत ऐश्वर्य प्राप्ति संभव होती है रकार बीज की साधना राज मान्यता तथा निखिल की शरणागति प्रदान करती है।

"म"

महामानदं च महामोह भिन्नं
महोच्चं पदं वै प्रदानं सदैवं
महनीय रूपं मधुराकृतिं तं
महामण्डलं तं निखिलं नमामि ॥3॥

'मकार' बीज माधुर्य का सूचक है मकार बीज की साधना से जीवन में माधुर्य तथा परमानन्द की उपलब्धि होती है समस्त मोह बंधन को दूर करके महोच्च पदवी प्रदान करती है, इस बीज की साधना से साधक मधुर आकृति एवं महनीय रूप युक्त तथा समस्त लोकों में महिमा मन्डित होता है, ऐसे निखिल तत्व का मैं नमन करता हूं।

"त"

तत्व स्वरूपं तपः पूतदानं
तारुण्य युक्तिं शक्तिं ददाति
तापत्रयं दूरयति तत्वगर्भः
तमेव तत्पुरुषमहं प्रणम्यं ॥4॥

'तकार' बीज की साधना से तत्व मसि रूप वेद महावाक्य की उपलब्धि संभव होती है क्योंकि तत्व ज्ञान में इस साधना का अत्यधिक महत्व है अपने स्वरूप ज्ञान के लिए इसमें तरुणता की शक्ति, ताप त्रय की विमुक्ति तथा रहस्य मय ज्ञान को साधक प्राप्त करता है उस परम पुरुष गुरुदेव निखिल को बारम्बार नमन करता हूं।

"त्वा"

विभाति विश्वेश्वर विश्वमूर्ति
ददाति विविधोत्सव सत्व रूपं
प्राणालयं योग क्रिया निदानं
विश्वात्मकं तं निखिलं विधेयम् ॥5॥

'वकार' बीज की साधना से सम्पूर्ण ब्रह्माण्डमय गुरुत्व शक्ति की प्राप्ति होती है तथा इसी जीवन में आनंदमयता पूर्ति और क्रिया योग के उस गुह्य तत्व को उद्घाटित करके समस्त ब्रह्माण्ड में विचरण करते हुए निखिलमय हो जाता है।

"य"

यशस्करं योग क्षेम प्रदं वै
योगश्रियं शुभमनन्तवीर्यं
यज्ञान्त कार्यं निरतं सुखं च
योगेश्वरं तं निखिलं वरेण्यम् ॥6॥

'यकार' बीज की साधना से योग के यम नियम आदि अष्टांग योग को सम्पन्न करते हुए यशस्वी पुरुष योग क्षेम की चिंता से रहित योग के समस्त आयाम को पूर्ण करते हुए अनन्त शक्ति युक्त होकर यज्ञ विद्या को सर्वांग रूप से प्राप्त करता है तथा योगेश्वर निखिल के ब्रह्ममय स्वरूप में अधिष्ठित हो जाता है।

"ना"

निरामयं निर्मल भाव भाजनं
नारायणस्य पदवीं समुदारभावं
नवं नवं नित्य नवोदितं तं
नमामि निखिलं नवकल्प रूपम् ॥7॥

'नकार' बीज की साधना से साधक रोग रहित सात्विक बुद्धि से युक्त शास्त्र सम्मत नारायण स्वरूप को प्राप्त करके नित्य नवीन जीवन के प्रत्येक क्षण को जीता हुआ कल्पान्त तक गुरुदेव निखिल की शरणागति को प्राप्त करता है।

"रा"

रासं महापूरित रमणीयं
महालयं योगिजनानु मोदितं
श्री कृष्ण गोपीजन वल्लभं च
रसं रसज्ञं निखिलं वरेण्यम् ॥8॥

'रा' बीज की साधना से महारास की उपलब्धि होती है जिस प्रकार भगवान कृष्ण गोपियों के साथ रासलीला की उसी तरह साधक भी योग के माध्यम से अपने इष्ट के साथ रसपूर्ण होकर निखिल स्वरूप में अभिसिक्त होता है।

"य"

यां यां विधेयां मायार्थ रूपां
ज्ञात्वा पुनर्मुच्यति शिष्य वर्गः
सर्वार्थ सिद्धिं प्रददाति शुभ्रां
योगेन गम्यं निखिलं प्रणम्यम् ॥9॥

इस द्वितीय 'यकार' की साधना से माया के स्वरूप को जानकर शिष्य बंधन मुक्त होकर सभी श्रेष्ठतम सिद्धियों को प्राप्त करके योगियों के द्वारा गम्य वन्दनीय निखिलेश्वर स्वरूप के रहस्य को प्राप्त करता है।

"णा"

निरंजनं निर्गुण नित्य रूपं
अणोरणीयं महतो महन्तं
ब्रह्म स्वरूपं विदितार्थ नित्यं
नारायणं च निखिलं त्वमेवम्॥१०॥

'णकार' बीज के माध्यम से साधक नादब्रह्म को प्राप्त करके निरंजन तथा निर्गुण ब्रह्म स्वरूप को प्राप्त करता है तथा अणु से अणु और महान से महान रहस्यमय ब्रह्माण्ड को जानकर नारायण स्वरूप को प्राप्त करता है।

"य"

यज्ञ स्वरूपं यजमान मूर्ति
यज्ञेश्वरं यज्ञ विधि प्रदानं
ज्ञानाग्नि हूतं कर्मादि जालं
याजुष्यकं तं निखिलं नमामि॥११॥

'यकार' बीज की साधना से साधक यज्ञ के वास्तविक स्वरूप को प्राप्त करके अनन्त भेद प्रभेदों को जानकर अपने शुभ अशुभ आदि कर्म रूपी हवि को ज्ञान रूपी अग्नि में आहुति देकर बंधन मुक्त हो जाता है तथा यज्ञ की साक्षात मूर्ति निखिल स्वरूप में समाहित हो जाता है।

"गु"

गुत्वं गुरुत्वं गत मोह रूपं
गुह्याति गुह्यं गोप्तृत्व ज्ञानं
गोक्षीर धवलं गूढ प्रभावं
गेयं च निखिलं गुण मन्दिरं तम्॥१२॥

'गुकार' बीज अपने आप में अद्वितीय है इसकी साधना से साधक मोह रहित होकर गुरु तत्व को प्राप्त करके गुरुमय हो जाता है तथा गौदुग्ध के समान निर्मल ज्ञान को प्राप्त करके गूढ शास्त्र ज्ञान को प्राप्त करता है तथा आनन्दमय युक्त जीवन व्यतीत करता है।

"रु"

रुद्रावतारं शिवभावगम्यं
योगाधिरुढिं ब्रह्माण्ड सिद्धिं
प्रकृतिं वसित्वं स्नेहालयं च
प्रसाद चितं निखिलं तु ध्येयम्॥१३॥

'रूकार' बीज की साधना से साधक शिव भाव को प्राप्त करके योगमय होकर ब्रह्माण्ड के दिव्य सिद्धियों को प्राप्त करता है तथा प्रकृति के वशीभूत न होकर स्नेह युक्त होकर जीवन को अमृतमय बना देता है।

"श्यो"

योगाग्निना दग्ध समस्त पापं
शुभा शुभं कर्म विशाल जालं
शिवा शिवं शक्तिमयं शुभं च
योगेश्वरं च निखिलं प्रणम्यं॥१४॥

इस बीज की साधना से योगरूपी अग्नि में समस्त पाप समूह को दग्ध करके शुभा शुभ कर्म जाल से मुक्त होकर शिव और शक्ति रूप की साधना करके योगेश्वर निखिल स्वरूप को प्राप्त करके दिव्यतम बन जाता है।

"न"

नित्यं नवं नित्य विमुक्त चितं
निरंजनं च नरचित मोदं
ऊर्जस्वलं निर्विकारं नरेशं
निरत्रपं वै निखिलं प्रणम्यं॥१५॥

'नकार' बीज की साधना से चिंता मुक्त होकर साधक नित्य नवीन जीवन जीता हुआ सभी मोह बाधाओं से रहित सभी प्राणियों को आनन्द देता हुआ अनन्त ऊर्जा युक्त निर्विकार और मनुष्यों में श्रेष्ठ होकर, निखिल के आनन्दमय स्वरूप का ध्यान करता हुआ पूर्णता युक्त जीवन व्यतीत करता है।

"म"

मातृ स्वरूपं ममतामयं च
मृत्युञ्जयं मानप्रदं महेशं
सन्मंगलं शोक हरं विभुं तं
नारायणमहं निखिलं प्रणम्यं ॥१६॥

'मकार' बीज की साधना से साधक मातृत्व गुण से युक्त होता है तथा प्रत्येक प्राणियों में दया करने वाला मृत्यु के भय से रहित मंगल स्वरूप, शोक से रहित नारायण की साक्षात स्वरूप को प्राप्त करता है तथा दिव्यतम इस मानव जीवन को सार्थक करता है।

***

निखिलेश्वरानन्द पंचक

ॐ नमः निखिलेश्वर्यायै कल्याण्यै ते नमो नमः।
नमस्ते रुद्ररूपिण्यै ब्रह्म मूर्त्यै नमो नमः ॥१॥

नमस्ते क्लेश हारिण्यै मंगलायै नमो नमः।
हरति सर्व व्याधिनां श्रेष्ठ ऋष्यै नमो नमः ॥2॥

शिष्यत्व विष नाशिन्यै पूर्णतायै नमोऽस्तु ते।
त्रिविध ताप संहर्त्र्यै ज्ञानदात्र्यै नमो नमः ॥3॥

शान्ति सौभाग्य कारिण्यै शुद्ध मूर्त्यै नमोऽस्तु ते।
क्षमावत्यै सुधावत्यै तेजोवत्यै नमो नमः ॥४॥

नमस्ते मंत्र रूपिण्यै तंत्र रूपिण्यै नमोऽस्तु ते।
ज्योतिषं ज्ञान वैराग्यं पूर्ण दिव्यै नमो नमः ॥5॥

य इदं पठते स्तोत्रं श्रृणुयात् श्रद्धयान्वितं।
सर्व पाप विमुच्यन्ते सिद्धयोगिश्च जायते ॥६॥

रोगस्थो रोग तं मुच्येत् विपदा त्राणयादपि।
सर्व सिद्धिं भवेत्तस्य दिव्य देहस्य संभवे ॥७॥

निखिलेश्वर्य पंचकं नित्य यो पठते नरः।
सर्वान्कामानअवाप्नोति सिद्धाश्रममवाप्नुयात् ॥८॥

मूल रूप से पंचक में ही प्रथम पांच श्लोकों में सद्गुरुदेव की स्तुति का वर्णन है, इन्हीं पांच श्लोकों में उनके व्यक्तित्व के २१ गुणों की व्याख्या की गई है शेष तीन श्लोकों में पंचक के पठन श्रवण का माहत्मय स्पष्ट किया गया है। साधक इस श्लोक को कंठस्थ कर ही लें।

महापुरुष जन्म से नहीं अपितु अपने कार्यो से महान बनते हैं और उन्हें युगपुरुष भी कहा जाता है ये युगपुरुष जो समाज की धारा बदल दें समाज में नई चेतना प्रदान कर दें। अंधकार, अविश्वास के घने कोहरे को हटाकर जीवन में ज्ञान की किरणें फैला दें।

युगपुरुष समाज को अपनी चेतना, अपने कार्यों के द्वारा ही वह ज्ञान प्रदान करते है जिससे मनुष्य में आत्मबल बढता है और वह स्वय को पराजित नहीं अपितु जीवन में संघर्षशील व्यक्तित्व अनुभव करता है। महापुरुषों का ज्ञान समाज के हर वर्ग के लिए खुला रहता है वह अपना ज्ञान धन केवल कुछ व्यक्ति को बांटकर पूर्ण सिद्धाश्रम नहीं जाते अपितु जितने समय भी पृथ्वी पर निवास करते है वे स्थान स्थान पर घूमकर हर वर्ग में चेतना प्रदान करते है।

मनुष्य अपनी स्थितप्रज्ञता के कारण एक घेरे में बंधा होता है और अपने घर-बार, ग्राम नगर को ही अपनी दुनियां मान लेता है तथा परिवार के बंधनों से बंधा हुआ पशुवत जीवन जीता है। ऐसे समय में जब धर्म पर अधर्म हावी होने लगता है वेद मंत्रों की ध्वनियां मंद हो जाती है यज्ञ शालाओं की ज्वालाओं पर राख पड़ते लगती है समाज में हिंसा व्याभिचार इत्यादि विकृतियां बढने लगती है तब तब युगपुरुष महापुरुष आकर अपने ज्ञान से संसार को संशय रहित करते है।

सदगुरुदेव डॉ. नारायण दत्त श्रीमाली जिन्हें सन्यासी परमहंस स्वामी निखिलेश्वरानन्द कहते है उनकी गृहस्थ व्यक्तियों ने और संन्यासियों ने एक ही भाव में सदगुरु की वन्दना की है।

सदगुरुदेव को दी गई यह उपमाएं सामान्य उपमाएं नहीं है इनमें से प्रत्येक उपमा की पीछे गुरुदेव का एक व्यक्तित्व लक्षण प्रकट होता है। यही कारण है कि जब कोई साधक चाहे वह गृहस्थ हो अथवा संन्यासी हो, यती हो या योगी हो इसका पाठ और श्रवण करता है तो एक विशेष अनुभूति प्रकट होने लगती है उसके रोम रोम में चेतना जाग्रत होने लगती है गुरु तत्व जाग्रत होने लगता है।

निखिलेश्वरानन्द पंचक के पांच श्लोकों में ही एक सन्यासी शिष्य ने बहुत कुछ कह दिया है उसका विस्तृत विवरण और व्याख्या स्पष्ट की जा रही है और २१ अप्रैल सदगुरुदेव का अवतरण दिवस है जिस दिन इस धरा पर आकर उन्होंने ज्ञान का विकास फैलाया हम सभी शिष्य तो यही कह सकते है कि गुरुदेव आप सिद्धाश्रम में भी है, पृथ्वी पर भी है, हमारे हृदय में भी है और हमारे पूजा में भी है। आपका स्वरूप तो चारों ओर अष्टगंध प्रवाहित कर रहा है।

आपकी इन २१ विभूतियों स्वरूपों का बार-बार नमन करता हूं –

१. ॐ नमः निखिलेश्वर्यायै

यह पद केवल स्तोत्र का आरम्भ मात्र अथवा वंदना मात्र ही नहीं वरन सम्पूर्णता से एक अमोघ मंत्र तुल्य ही तो है। जिस प्रकार **"ॐ नमः शिवाय"** अपने-आप में पूर्ण मंत्र है और भगवान शिव की स्तुति का ही प्रभाव समेटे है, उसी प्रकार **"ॐ नमः निखिलेश्वर्यायै"** भी तो योगियों व संन्यासियों का सर्वाधिक प्रिय मंत्र और अपने प्रिय गुरुदेव की स्तुति दोनों का ही प्रभाव समेटे है। दुर्गम वनों, विपरीत परिस्थितयों में न केवल संन्यासी इस मंत्र के माध्यम से त्राण प्राप्त करते है वरन एकांत ध्यान के अवसर पर इसी के माध्यम से अपने मन की गहराईयों में उतरने का भी तो प्रयास करते हैं।

इस मंत्र की विशेषता है, कि यह नौ अक्षरों का मंत्र है तथा आध्यात्मिक जगत में नौ की संख्या का जो दुर्लभ रहस्य है, उससे वरिष्ठ साधक परिचित ही हैं। यदि साधक ध्यान दें, तो किसी भी माला में १०८ मनके होते हैं, जो अंक ज्योतिष की दृष्टि से देखा जाए तो नौ की संख्या (योग करने पर) बनती है। इस नौ अक्षरी मंत्र के द्वारा साधक एक बार के उच्चारण से ही एक माला गुरु मंत्र जप का लाभ प्राप्त कर लेता है, यह कहने में मुझे कोई भी संकोच नहीं।

2. कल्याण्यै ते नमो नमः

यह द्वितीय पद है। यदि पूज्य गुरुदेव के साधकों ने ध्यान दिया होगा, तो अनुभव किया होगा, कि वे आशीर्वाद स्वरूप केवल सुखमय जीवन, कष्टों की समाप्ति, प्रसन्नता आदि का ही आशीर्वाद नहीं देते वरन यह भी उच्चरित करते हैं - 'कल्याण हो'। उनका यह उच्चारित करना ही स्पष्ट कर देता है, कि कोई दिव्यात्मा इस रूप में हमारे आपके समक्ष विद्यमान है, क्योंकि "कल्याण" का एक अत्यंत गूढ़ अर्थ है। कल्याण का तात्पर्य योग-जगत में होता है - संसार के आवागमन के चक्र से मुक्त करा देना, साक्षात् मोक्ष ही उपलब्ध करा देना। इस प्रकार सहज कल्याण प्रदान करने वाले पूज्यपाद सद्गुरुदेव के चरणों में मैं भी शत्-शत् वंदन करता हूं।
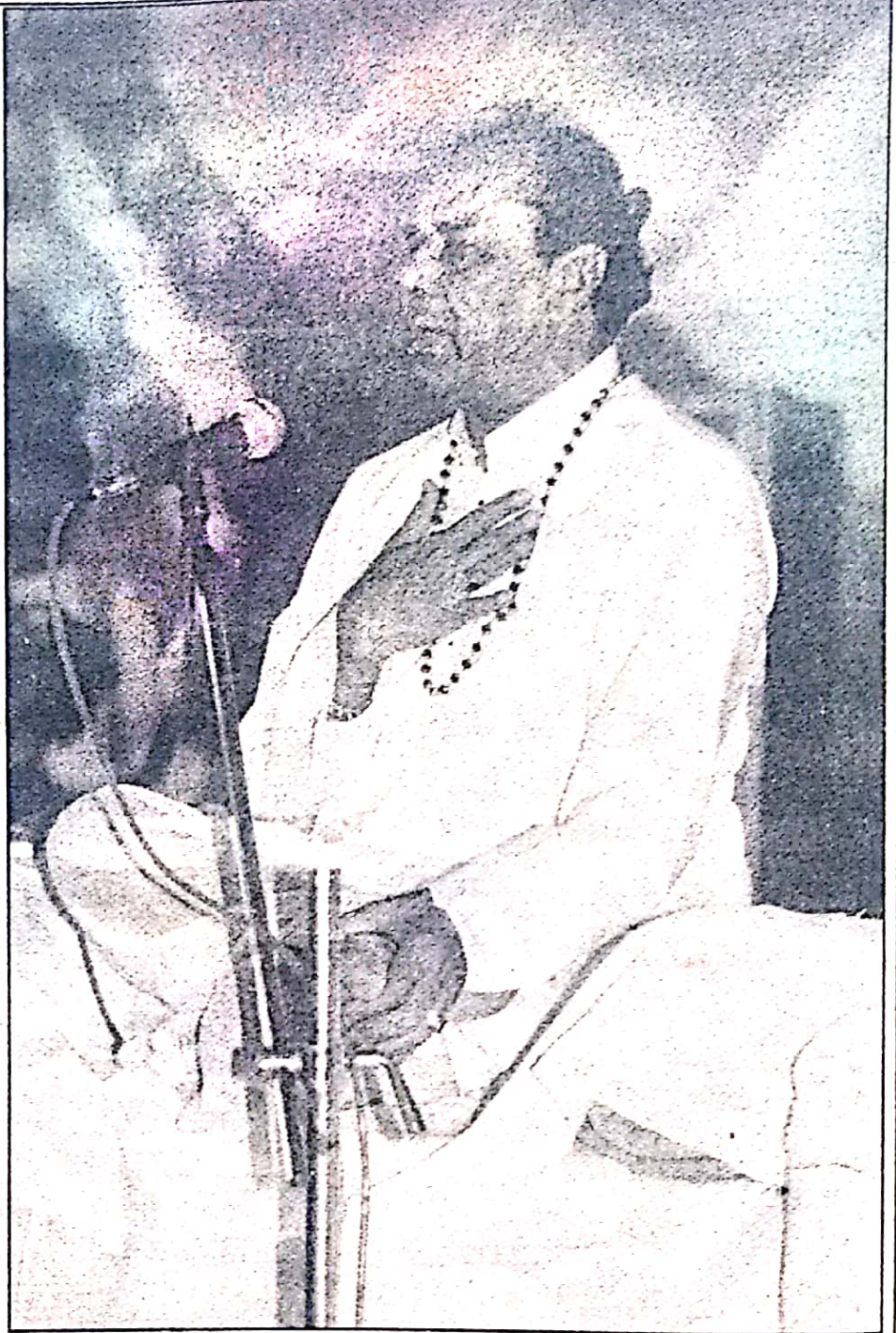
3. नमस्ते रुद्र रूपिण्यै

जो साधक भारत की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से परिचित हैं, उन्हें ज्ञात होगा, कि प्रारम्भ में केवल रुद्र की ही उपासना होती थी तथा रुद्र की ही कालांतर में उपासना शिव के रूप में प्रचलित हुई। रुद्र की धारण से उपासकों का तात्पर्य उस

भीषण शक्ति से होता था, जो विध्वंस करने में समर्थ है।

पूज्यपाद गुरुदेव का एक स्वरूप रुद्र भी तो है। अशुभ के समापन हेतु, विसंगतियों पर दावानल की भांति फैल जाने वाले गुरुदेव का यह स्वरूप किस प्रकार पौरुषता का एक जीवंत स्वरूप है - यह तो वर्णन से भी अधिक दर्शन की बात है।

यह बात और है कि पूज्यपाद गुरुदेव इस सांसारिक जीवन में जीवन अपने उस रुद्र स्वरूप में दृष्टिगोचर नहीं होते, किंतु हम संन्यासी शिष्य जानते हैं, कि जब-जब वे इस प्रकार के स्वरूप में कुछ घटित करने के उद्धत हो जाते हैं, तो हम सभी को साक्षात् भगवान शिव के दर्शन का पुण्य प्राप्त हो जाता है। प्रभु के इस स्वरूप को भी प्रणाम।

४. ब्रह्म मूर्त्यै नमो नमः

किंतु इन्ही रुद्र स्वरूप गुरु का दूसरा पक्ष ब्रह्ममयता का भी तो है। मेरे कुछ पूर्व जन्म के पुण्य थे - ऐसा कहना तो किंचित 'अहं' युक्त लगता है, किंतु कोई विशेष बात थी अवश्य जिससे मैं पूज्यपाद गुरुदेव के ब्रह्म स्वरूप का दर्शन कर सका ... इस सांसारिक स्वरूप एवं संन्यस्त स्वरूप से नितांत भिन्न, किसी मनुष्य या योगी से उनकी तुलना का कोई प्रश्न ही नहीं; उस स्वरूप की तुलना तो केवल प्रकृति के उपादानों से कुछ एवं सीमित रूप में ही की जा सकती है -

जिस प्रकार हिम मण्डित शिखरों की उच्चता, शीतलता और शुभ्रता होती है, जिस प्रकार आकाश की निःस्तब्धता होती है, जिस प्रकार सागर की गहनता होती है - उन्हीं सब का सम्मिलित स्वरूप ही तो पूज्यपाद गुरुदेव का ब्रह्ममय स्वरूप है। तभी तो उन्हें कण-कण में व्याप्त कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। गुरुदेव के इस स्वरूप को वन्दित करने के लिए मेरे पास कोई भाव ही नहीं।

५. नमस्ते क्लेश हारिण्यै

गुरुदेव के इस स्वरूप को प्रणाम करने से पूर्व आवश्यक है, कि हम ''क्लेश'' शब्द का अर्थ समझ लें, क्योंकि जब तक हम भाव-भूमि ही नहीं समझेंगे, तब तक प्रणाम केवल हमारे होठों से ही उच्चारित होकर रह जायेगा। क्लेश शब्द का अर्थ है - जीव के विविध संस्कार। अनेक जन्मों में अनेक प्रकार से जीवन यापन कर अनेक मोह जालों में ज्ञात अज्ञात रूप से बद्ध, पूर्व जन्म के संस्कारों-कुसंस्कारों से ग्रसित जीव तब तक मुक्ति लाभ नहीं कर सकता जब तक उसके इन संस्कारों की इस प्रकार न समाप्त कर दिया जाए जिस प्रकार जल के प्रवाह से भूमि की गदगी स्वच्छ कर दी जाती है।

पूज्यपाद गुरुदेव इसी क्रिया को निरन्तर अपने शक्ति प्रवाह, वचनों आदि से सुसम्पन्न कर जीव को जाग्रत, स्वप्न एवं सुसुप्ति तीनों अवस्थाओं में अभय प्रदान करते हैं, जिससे वह न केवल प्रत्यक्ष दोषों से मुक्त हो सके वरन अनेक अज्ञात दबावों से जिस प्रकार निरन्तर क्लेश, खिन्नता का अनुभव करता रहता है, उससे भी त्राण पा सके। उनका यह स्वरूप, उनकी यह क्रिया कितनी अद्भुत है! मैं मुग्ध भाव से उनके इस स्वरूप को अपने मानस पटल पर निहार कर इतना भाव विभोर हो उठा हूं कि प्रणाम निवेदित करूं भी तो कैसे?

६. मंगलायै नमो नमः

जिसकी पवित्र देह यष्टि से हवन-कुंड से निःसृत सुगन्ध आ रही हो, जिनके वचन यज्ञ की पुष्ट धूम्र राशि के सदृश्य चारों ओर विकसित हो रहे हों, जिनके श्वास-प्रश्वास में आम्र-मंजरी की सुगन्ध हो, जिनका सु (सुवासित) मन (आत्म) सुमन के समूह की भांति वातावरण को भी सुगन्धित कर रहा हो, उन्हें मंगल करने को फिर आवश्यकता ही क्या? जो सम्पूर्ण स्वरूप में मंगलमयता की ही प्रकट अवधारणा हैं, उन्हें मैं उनका यह क्षुद्र शिष्य प्रणाम ही तो निवेदित कर सकता हूं।

७. हरति सर्व व्याधिनां

यह पद भी परमहंस किंकर स्वामी जी की गूढ़ लेखनी का एक चमत्कार ही है। इस प्रकार से उन्होंने संक्षेप में पूज्यपाद गुरुदेव के दो स्वरूपों का वर्णन किया है -

प्रथम स्वरूप तो वह - जहा वे भवरोग - वैद्य बन कर अपने शिष्य की अनेक मोह-माया जनित 'व्याधियों' का शमन करते हैं।

द्वितीय स्वरूप वह - जहां वे प्रखर आयुर्वेदज्ञ बनकर इस प्राचीन विद्या को संरक्षण एवं नवजीवन देने के लिए अवतरित हुए है।

यही कारण है, कि उनके सम्पर्क में आने वाला प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में केवल अपूर्व मानसिक शांति वरन प्रत्येक अपने जीवन में न केवल अपूर्व मानसिक शांति वरन आरोग्य का भी अनुभव करता है। ''देह और प्राण दो अलग-अलग तत्त्व नहीं हैं, इन दोनों के सामञ्जस्य से ही साधना में पूर्णता मिलती है'' - ऐसा कहने वाले पूज्यपाद गुरुदेव की यदि फिर दोनों रूप में वंदना की जाए तो विचित्र ही क्या?

८. श्रेष्ठ ऋष्यै नमो नमः

प्रकाण्ड विद्वान चाणक्य ने ऋषि की व्याख्या इस प्रकार की है - ''बिना जोते-बोए स्वतः उत्पन्न कंद-मूल खाने वाला, सर्वदा जंगल से प्रेम करने वाला तथा प्रतिदिन श्राद्ध करने वाला ब्राह्मण ही ऋषि की संज्ञा से विभूषित किए जाने योग्य है।''

यदि इन पूज्यपाद गुरुदेव के संन्यस्त जीवन पर दृष्टिपात करें, तो क्या ऐसी स्थितियां सम्पूर्णता से नहीं मिलतीं? अपने गुरुदेव की आज्ञा से बद्ध होकर भौतिक जीवन में विवशता पूर्वक रहने वाले पूज्यपाद गुरुदेव का प्रकृति से क्या सम्बन्ध है, यह तो उनके ही एक वचन से स्पष्ट हो जाता है - ''प्रकृति मेरे लिए मां और बहन के समान मधुर है।''

इतनी उच्च भावभूमि का ही तो परिणाम है, कि वे इस सांसारिक जीवन क विषयों के मध्य भी उदार मना बने हुए - ठीक प्रकृति की ही भांति।

९. शिष्यत्व विष नाशिन्यै

यों तो इस लेख में वर्णित प्रत्येक पद अपने आप में एक पृथक ग्रंथ की ही अपेक्षा करता है, किन्तु इस प्रस्तुत पद विशेष के संदर्भ में तो यही आवश्यकता और अधिक मुखरित हो जाती है। गुरुदेव अपने शिष्यों का विष निरन्तर किस प्रकार से समाप्त कर रहे हैं, किस प्रकार उन्हें संदेह, तर्क, अश्रद्धा, निर्लज्जता आदि विषों से बाहर निकाल कर अमृत घट की ओर ले जाने को तत्पर कर रहे हैं, वह यदि न ही वर्णित करें तो उचित होगा, क्योंकि वह विवरण पीड़ाओं की एक गाथा ही तो है।

पूज्यपाद गुरुदेव ने एक अवसर पर सूक्ष्म रूप से सिद्धाश्रम पधारने पर यही बात कही भी - ''जिस प्रकार मुझे अपने सांसरिक शिष्यों के मध्य, शिष्यों का परस्पर तालमेल कर कर ले चलने में स्वयं विष का पान करना पड़ता है, तब मुझे यहां (सिद्धाश्रम) की बेहद याद आती है, जहां सभी साधक परस्पर एक मत होकर मानव कल्याण के विषय में चिंतनशील सक्रिय हैं।''

गुरुदेव के इस रूप से वंदन करने से अधिक उचित तो यह होगा कि हम सभी अपने आचरण द्वारा उन्हें तृप्ति देने का प्रयास करें।

१०. पूर्णतायै नमोऽस्तु ते

पूज्यपाद गुरुदेव के अवतरण का रहस्य ही है, अपने शिष्यों को पूर्णता प्रदान करना अर्थात् जो भागार्थी हैं, उन्हें भोग की पूर्णता प्रदान करना तथा मोक्षार्थी शिष्यों को जीवन मुक्ति का लाभ उपलब्ध करा देना।

पूर्णता कोई निरपेक्ष भाव नहीं है, जिसको जिस रूप से जीवन की तृप्ति अनुभव हो जाए, वही उसके लिए पूर्णता है और इन विविधताओं की पूर्ति केवल सद्गुरु के माध्यम से ही सम्भव है। यही कारण है, पूज्यपाद गुरुदेव के सम्पर्क में आने वाले विविध प्रकृतियों के साधक समानता से संतुष्टि का अनुभव करते हैं।

षोडश कला युक्त भगवान श्री कृष्ण की भी तो यही विशेषता थी, कि बाल-वृद्ध ही नहीं पशु-पक्षी और वनस्पति तक उनसे स्पंदित हो उठते थे। पूज्यपाद गुरुदेव को इस लीलामय कृष्ण स्वरूप में प्रणाम!

११. त्रिविध ताप संहर्त्र्यै

त्रिविध ताप का अर्थ है - दैहिक, दैविक एवं भौतिक स्वरूप में मनुष्य के कर्मफलस्वरूप आने वाली बाधाएं। गुरु का दायित्व यह नहीं होता कि वह अपने शिष्यों के कर्मफल से आबद्ध हो, किन्तु पूज्यपाद गुरुदेव ने सर्वथा नूतन परम्परा डालकर यह सिद्ध करने का प्रयास किया है, कि सद्गुरु तो वही है जो
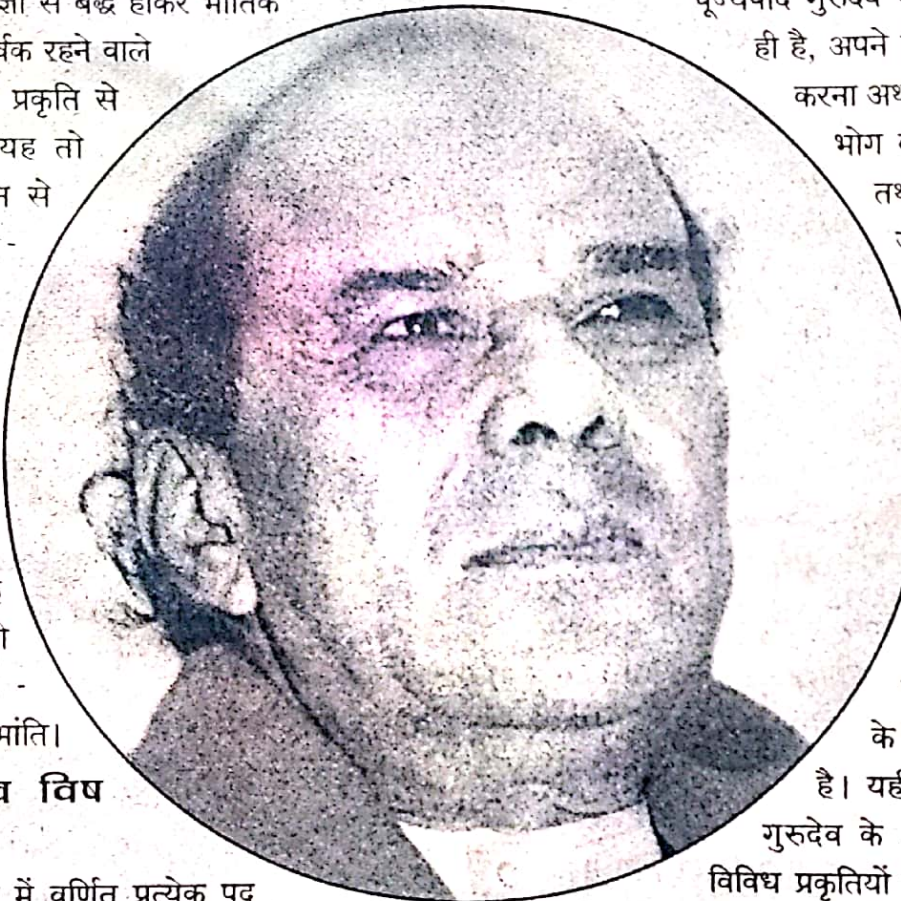
शिष्य के साथ उसी के स्तर तक अपने को झुका कर, उसके दुःख, दोष, दारिद्र्य, पाप-ताप को समाप्त कर उसे ज्ञान मार्ग पर ले चले।

गुरुदेव को शिष्य के स्तर तक उतरने में कितनी अधिक पीड़ा होती है, इसे केवल वे व्यक्तित्व ही समझ सकते हैं जो स्वयं योग की उच्च भावभूमि को स्पर्श कर चुके हों। अद्वितीय ब्रह्मानन्द की छोड़ शिष्यों की भांति क्रिया-कलाप करना - उनका कोई आनन्द नहीं होती; किन्तु शिष्यों के कल्याणार्थ, उनके जीवन के दुर्भाग्य को समाप्त करने के लिए, वे फिर भी यही क्रिया सहर्ष करते ही रहते हैं।

क्या यही उनके अंदर सन्निहित शिवत्व का प्रबल प्रमाण नहीं है? ऐसे विषपायी नीलकंठ महादेव को इस अकिंचन का प्रमाण स्वीकार्य हो।

१२. ज्ञानदात्र्यै नमो नमः

मैं नहीं जानता, कि कितने शिष्यों ने इस तथ्य को अनुभव किया होगा, किन्तु जब - तक पूज्यपाद गुरुदेव के समक्ष ज्ञान-चर्चा छिड़ती है अथवा कोई शिष्य वास्तव में किसी गूढ़ जिज्ञासा को प्रकट करता है, (केवल बुद्धि का बल नहीं दिखाता है) तो उनके मुखमण्डल पर अमृत जैसा कुछ झलक उठता है और वे सब कुछ विस्मृत कर, उस विषय विशेष की पर्त-दर-पर्त इतनी सटीक विवेचना करते हैं, कि मन नर्तन कर उठता है।

-क्योंकि गुरुदेव का मूल स्वरूप तो ज्ञानमयता का ही है, यह और बात है कि सांसारिक जीवन में कोई उन्हें कृष्ण बना कर देखना चाहता है, तो कोई शिव या इसी प्रकार से अपने मन की कोई भी भावना से वे शिव भी हैं, कृष्ण भी हैं, किन्तु उनका मूल स्वरूप ज्ञानमय ही है। हम सभी जिस दिन इस तथ्य को गंभीरता से अनुभव कर लेंगे, उसी दिन स्वतः ही हमारे मौन प्रणाम उनके पाद्-पद्मों में निवेदित हो उठेंगे।

१३. शान्ति सौभाग्य कारिण्यै

कदाचित् इस विशेषण के द्वारा पूज्यपाद गुरुदेव में गुरोचित दृढ़ता एवं अनुशासनप्रियता के मध्य जो मातृत्व एवं पितृत्व से युक्त व्यक्तित्व भी छिपा है, उसे ही वर्णित करने की युक्ति की गयी है। वे शांति दायक स्वरूप में जहां मातृत्व की गरिमा से ओत-प्रोत हैं, वहीं एक सहृदय पिता की ही भांति अपने शिष्यों की भौतिक उन्नति में भी चिंतातुर रहने वाले व्यक्तित्व है। सामान्य जन तो पूज्यपाद गुरुदेव के व्यक्तित्व के उस पक्ष को ही देख पाते हैं, जो उनके समक्ष प्रातः दस बजे से रात्रि दस बजे तक विविध लोगों से मिलता-जुलता, सामान्य जन की भांति विविध समस्याओं आदि में संलग्न रहता है, किन्तु इसके उपरांत उनकी रात्रि के पल किस प्रकार बीतते हैं, इसकी तो कोई चर्चा ही नहीं।

-किन्तु मैंने स्वयं देखा है कि, किस प्रकार वे पूरी रात उथल-पुथल में काटते हैं और यह घटना प्रायः ही होती रहती है। अपने शिष्यों को शांति एवं सौभाग्य प्रदान करने का मूल्य वे इसी प्रकार साधनाओं एवं स्वयं के ऊपर तनाव के माध्यम से कितने ही वर्षों से प्रदान करते आ रहे हैं। मुझे लज्जा आती है, कि प्रभु के इस स्वरूप को प्रणाम करूं, क्योंकि उनके इस स्वरूप के पीछे हम शिष्यों द्वारा दी गयी जो अपार पीड़ा राशि है, वह वर्णित करने, हर्षित होने की नहीं वरन ग्लानि से भर उठने की बात है।

१४. शुद्ध मूर्त्यै नमोऽस्तु ते

गुरु तत्त्व तो स्वतः ही शुद्ध होता है, इसके उपरांत भी पूज्यपाद गुरुदेव को क्यों इस प्रकार के विशेषण से विभूषित किया गया - इसमें एक विवेचन की आवश्यकता है। जैसा कि मुझे एक अन्य संन्यासी बन्धु ने बताया कि सद्गुरुदेव इस पृथ्वी पर तीन रूपों में आते हैं या तो उन्मत्त रूप में होते

(जिसके उदाहरण परहंस रामकृष्ण) अथवा ज्ञान स्वरूप में (भगवत् आद्य शंकराचार्य के रूप में) अथवा शिशु स्वरूप में।

पूज्यपाद गुरुदेव इसी शिशु स्वरूप में अवतरित हुए हैं। यह रहस्य भी मुझे उन्हीं संन्यासी बंधु से मिला। जब ईश्वर को इस जगत में निर्मलत्व साधुत्व और कोमल भावनाओं का ही प्रसार करना सर्वोपरि होता है, तभी वह इस प्रकार शिशु रूपात्मक सद्गुरु बनकर अवतरित होता है, और उनके इसी स्वरूप की ही महत्ता है, कि बिना किसी पात्रता आदि का विचार किए सभी उन तक उपस्थित होने के अधिकारी हैं, जिस प्रकार शिशु द्वेष रहित शुद्ध होता है, पूज्यपाद गुरुदेव ने भी बहुजन हिताय इसी प्रकार का स्वरूप प्राप्त किया है।

हम ऐसी विलक्षण घटना के लिए पूज्यपाद गुरुदेव के साथ-साथ नित्य लीलाविहारिणी के पाद-पद्मों में भी आतुर भाव से प्रणाम करते हैं।

१५. क्षमावत्यै - सुधावत्यै

ये दो पद नहीं हैं, अपितु एक ही पद है, क्योंकि क्षमा तो केवल उसे कहा जा सकता है जो प्रेम की सुधा में आवृत्त हो। प्रेम रहित क्षमा का कोई अर्थ नहीं होता - न याचना करने में न प्रदान करने में। प्रभु में क्षमा किस प्रकार विद्यमान है, इसके संदर्भ में मुझे एक घटना याद आती है - "कोई साधु जल में बहते बिच्छु को बार-बार निकाल रहा था, किंतु वह बिच्छु निकलते ही डंक मार देता, फलतः हाथ से छूट पुनः गिर जाता। अंत में जब यही घटना कई बार दोहराई गयी, तो किनारे पर खड़े एक व्यक्ति ने इसका कारण पूछ ही लिया।" उत्तर में साधु ने मुस्करा कर कहा - "अपना-अपना स्वभाव है!"

इसी प्रकार वे भी बार-बार हमको जीवन चक्र से निकाल रहे हैं और हम डंक मार रहे हैं, किन्तु फिर वही बात कि अपना-अपना स्वभाव है। क्षमा उनके चरित्र में धारण किया गया कोई गुण नहीं वरन हृदय की सरिता का अक्षय निर्झर प्रवाह है और इसी कारण वश अमृत्व से युक्त नव जीवन देने में सर्मथ भी हैं।

१६. तेजोवत्यै नमो नमः

यदि हम अपनी दृष्टि को विस्तारित नहीं करेंगे तो तेज का एक सामान्य सा अर्थ ही लगा सकेंगे अर्थात् जिसका मुखमण्डल खूब चमक रहा हो या तो खूब ऊंचे, खूब चमकीली रेशमी मसनदों के सहारे बैठा हो! क्योंकि यही गुरु के तेज को सांसारिक अर्थ हो गया है।

तेज के समानार्थक योग की भाषा में एक अन्य शब्द का प्रयोग किया जाता है - "उर्ध्वमूर्धिनः" अर्थात् जिनका सहस्रार तप की अधिकता से प्रदीप्त एवं उतप्त हो! ऐसे ही व्यक्ति केवल अपनी कृपा दृष्टि से किसी का भी कल्याण करने में समर्थ हो पाते हैं।

यह बात और होती है, कि वे किस स्वरूप में रहते हैं। यहां मैं यह भी उल्लिखित करना चाहूंगा कि महायोगी तो वे होते हैं, जो अपने तेज को, मुखमण्डल पर आयी तप की आभा को लुप्त कर लेना जानते हैं, न कि उसका प्रदर्शन करना।

ऐसे गूढ़ तेज से युक्त पूज्यपाद गुरुदेव की ज्ञान रश्मियों से हमारा भी जीवन आलोकित हो, मैं अपने प्रणाम के साथ इसी आशीर्वाद की कामना से युक्त हूं।

१७. नमस्ते मंत्र रूपिण्यै

इस देश की थाती मंत्र शास्त्र को पुनर्व्याख्यित करने के उपरांत उन्होंने जिस प्रकार से 'मंत्र' शब्द का सही अर्थ जनमानस को स्पष्ट किया है, वह ज्येष्ठ की तपती दोपहर में

श्रावण की सुखद पुरवाई सा ही शीतल है। उन्होंने प्रथम बार स्पष्ट किया है, कि 'मंत्र' तो सही अर्थों में वह दशा है जहां मन सभी बंधनों, आवरणों, घुटन और सड़न से मुक्त होकर उर्ध्वगामिता की ओर बढ़ सके।

रास्तों द्वारा निर्धारित मर्यादायाओं पर कुठाराघात न करते हुए भी उन्होंने समाज का जो नवीन दिशाा दी है, साधना की जिस प्रकार से सार्वजनिक किया है, उससे तो आने वाली कई-कई पीढ़ियां कृतज्ञ हो उठेगी।

मेरे मन को स्वच्छ कर, उसमें पुष्पों की सुगन्ध भरने वाले ऐसे 'मंत्रज्ञ' गुरुदेव का सहस्र प्रणाम!

१८. तंत्र रूपिण्यै नमोऽस्तु ते

पूज्यपाद गुरुदेव अपने आप में एक नियामक सत्ता हैं, जो अपार शिष्य-समूह का संचालन करते ही जा रहे हैं। जीवन क्या है? जीवन कैसे व्यतीत किया जाए? जीवन की तृप्ति और उल्लास कैसे उपलब्ध हो तथा इसी प्रकार के अनेक मूलभूत प्रश्नों का गूढ़ चिंतन से युक्त पूज्यपाद गुरुदेव का यह 'तांत्रिक' स्वरूप प्रचलित धारणा से अत्यधिक भिन्न है। इसके उपरांत भी यदि सामान्य जन तंत्र से घृणा करते रहें, तो इसमें दोष किसका? 'तंत्र' इस विराट व्यक्तित्व के समक्ष अनुष्ठान की कोई पद्धति नहीं वरन सम्पूर्ण जीवन चक्र की व्यवस्था ही तो है।

मुझे पल-पल अदृश्य रूप से अपने सूक्ष्म संकेतों पर ही गतिशील करने वाले पूज्यपाद गुरुदेव के चरणों में इस लघु 'यंत्र' का कोटिशः वन्दन।

१९. ज्योतिषं

सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में अगणित ग्रह नक्षत्रों के मध्य दैदीप्यमान इस सूर्य के समक्ष यद्यपि ज्योतिष एक लघु पक्ष ही है, किन्तु साधना तत्त्व की इस समाज में पुनस्थापना से पूर्व उन्होंने जिस प्रकार से ज्योतिषशास्त्र के विवेचन द्वारा एक सुदृढ़ नींव रखी, वह तो किसी युगपुरुष के चिंतन का ही अंश हो सकती थी। उन्होंने इस कार्य को इतनी अधिक गहनता से किया कि आज सम्पूर्ण भारत ही नहीं, भारत की सीमाओं से परे भी उनका लौकिक स्परूप 'डॉ. नारायणदत्त श्रीमाली' एवं 'ज्योतिष' दोनों एक-दूसरे के पर्याय बन गए है।

कदाचित् पूज्यपाद किंकर स्वामी जी ने इसी कारणवश पूज्यपाद गुरुदेव के इस धरा अवतरण से पूर्व ही रचित अपने स्तात्र में उनके इस कालज्ञयी स्वरूप को भी पृथक स्थान दिया। मेरे हृदय के अंधकार को अपनी प्रखरता से समाप्त करने में समर्थ 'ग्रहपति' गुरुदेव को साष्टांग प्रणाम!

२०. ज्ञान वैराग्यं

सामान्य गुरु जिस त्याग की महिमा बखानते नहीं थकते और शिष्य के हृदय को कुंठाओं से ही भर देते हैं, सद्गुरु उसी कार्य को ज्ञान रूपी अमृत के पान द्वारा वैराग्य से सम्पन्न करवा देते हैं यही उनकी महत्ता है। त्याग बलात् करना पड़ता है, वैराग्य स्वतः उत्पन्न हो जाता है। ज्ञान के अमृत का पान कर लेने के बाद कौन होगा जो भौतिक भोग की निस्सारता में अपने-आप को छलावा देना चाहेगा!

पूज्यपाद गुरुदेव ने इस जगत में उपदेश नहीं दिए हैं वरन अपने शिष्यों को साक्षात् अमृत का ही पान करवा दिया है। कबीरदास ने जिसे - "सहज समाधि तब कहिबौ, जब मन फरकि पड़े" की दशा कह निरूपित किया था, पूज्यपाद गुरुदेव ने उसी को सहज रूप से हम सभी शिष्यों, साधकों को उपलब्ध करवा दिया है। मुझे संसार के कीचड़ से ऊपर कमल दल की भांति स्थापित करने में समर्थ पूज्यपाद गुरुदेव को नित-नित वन्दन!

२१. पूर्ण दिव्यै नमो नमः

यदि कोई साधक ध्यानपूर्वक अवलोकन करे, तो पायेगा की गुरु की उपमा सर्वत्र पूर्णिमा के चद्रं से दी गयी है, न कि प्रखर सूर्य से। पूज्यपाद गुरुदेव के श्री चरणों में बैठने पर यह उपमा स्वतः ही समझ में आने लगती है, कि गुरु किस प्रकार से शीतलता, स्निग्ध्ता एवं तृप्ति दायक होते हैं। उनके समीप बैठने से मन में स्वतः ही करूण, विवेक, पूर्णता और आह्लाद का अनुभव होने लग जाता है।

ऐसे 'शुद्ध स्फटिक संकाशं शरच्चन्द्रनिभाननम्" गुरुदेव के समीन बैठने में तो नित्य प्रति गुरु पूर्णिमा के सौभाग्य का हम सभी ने जो अनुभव किया है, आज उसी की स्मृतियों में अभिभूत होकर उनसे बिछोह के दिन काट रहे हैं।

पूर्ण की प्रशंसा या वर्णन में कुछ कहा भी कैसे जा सकता है? जितना भी कुछ निवेदित करेंगे वह अपर्याप्त ही तो होगा। फिर सभी उन दिव्य आत्मा के चरण में बैठ, जब कंठ भावनाओं से अवरूद्ध हो गय हैं और हाथ प्रणाम की मुद्रा में जुड़ गए हैं, तभी इस वाणी का मूक निनाद सर्वत्र गुंजरित होना अनुभव कर पाए हैं -

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्ण मुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥

*****

गुरु चरणों का ध्यान एवं नित्य प्रति गुरु पूजन ही तो शिष्य का जीवन है, यह पूजा समर्पण साधना है, जिसमें साधक अपने समस्त राग-द्वेष, पीड़ा अपने आंसुओं के माध्यम से कण्ठ से गुरु पुकार करते हुए समर्पित कर देता है, सौंप देता है, अपना समस्त जीवन।

गुरु महिमा का वर्णन केवल वेद पुराण उपनिषद इत्यादि शास्त्रों में ही नहीं है अपितु जनजन में एक निश्चित आधार के रूप में विख्यात है, महान सद्गुरुओं ने अपने स्वयं की प्रशंसा में कुछ नहीं लिखा, उन्होंने परम ब्रह्म को आधार माना अपने विचारों को कभी थोपने का प्रयास नहीं किया, उनका चिन्तन केवल सामाजिक चेतना को जागृत कर पूरे समाज के स्तर को सुधारना था, गुरु चाहे वशिष्ठ हों, याज्ञवल्क्य हों, गोरखनाथ हों अथवा रामतीर्थ या विवेकानन्द केवल एक ही प्रयास रहा कि सामाजिक अन्धकार को दूर कर शिष्यों के जीवन में ज्ञान की जो लौ जलाई जाए, उनके लिए शिष्य की कोई श्रेणी नहीं थी, जो भी शिष्य भावना से युक्त होता था, अपने भीतर आत्म साक्षात्कार करना चाहता था, अपनी कुण्डलिनी जागरण करना चाहता था, अपने जीवन के वास्वविक स्वरूप को देखना चाहता था, उस प्रत्येक शिष्य को अपने हृदय से लगाया, अपने पुत्र से अधिक माना और उसके जीवन को आलोकित किया।

यदि सद्गुरुदेव सूर्य हैं तो शिष्य उनकी किरणें हैं, ओर जब ये किरणें, अपना प्रकाश फैलाती हैं, तो सब कुछ आलोकित हो जाता है, अन्धकार का नाश हो जाता है।

असत्य से सत्य की ओर

महान गुरुओं ने कभी भी अपनी शक्ति का दुरुप्रयोग नहीं किया और न ही अपनी शक्ति के चमत्कारिक प्रदर्शन किये, क्योंकि उन्हें ज्ञान था, कि यदि पूरे समाज का उत्थान करना है, समाज के समने नया आदर्श देना है, शिष्य के जीवन से अज्ञान रूपी परत हटानी है तो उसे एक साधारण रूप में अपने पास बिठा कर अपने हाथ से ज्ञान का अमृत प्याला पिलाना पड़ेगा, उसे अपने साथ रख कर कुछ सिखाना पड़ेगा, अन्यथा प्रभाव केवल ऊपर-ऊपर ही रहेगा, और शिष्य वास्तविकअनुभूति प्राप्त नहीं कर सकेगा, इसके लिए उन्होंने सबसे पहले स्वयं शरीर की, देह की क्षमता को मापा, तपस्या के बल पर अपने आपको उस स्तर पह पहुंचाया कि वे जो भी बात कहें वह एक ठोस आधर लिये हो, स्वयं की देखी-परखी, अनुभव की हुई हों, स्वयं के भतर संशय की कोई

गुंजाइश नहीं रहे, क्योंकि यदि स्वयं के भीतर ही संशय है तो जो वाणी उच्चारित होगी उसमें आधार नहीं होगा।

गुरु और वरदान

क्या आपने आज तक कहीं पढ़ा है कि गुरु ने कोई वरदान कोई भौतिक इच्छा मांगी हो, उन्होंने केवल ब्रह्मत्व प्राप्ति हेतु साधनाएं सम्पन्न कीं, और ब्रह्मत्व प्राप्ति से उनके भीतर वह तेज उत्पन्न हो गया कि यदि किसी ने उनसे कोई वर मांगा तो सद्गुरुदेव के श्रीमुख से उच्चारित हुआ ''तथास्तु'' अर्थात् जैसी तुम्हारी इच्छा है, वैसा ही कार्य पूर्ण हो, अब महत्वपूर्ण प्रश्न यह आता है, कि क्या वरदान मांगना शिष्य के लिए उचित है? यहीं शिष्य की भक्ति और उसकी क्षमता का प्रश्न उठ खड़ा होता है? सद्गुरुदेव सब कुछ देखते हुए भी शिष्य के मुंह से कहलाना चाहते हैं और जब शिष्य अपने भीतर के प्रश्नों के उत्तर अपनी इच्छाओं के उत्तर अपने आप गुरु भक्ति से समाधान कर लेता है, वही शिष्य अपने जीवन में सद्गुरुदेव के निकट पहुंच जाता है, इसीलिए शास्त्रों में गुरुदेव के लिए निवेदन है -

।। ॐ ब्रह्म वै विंवो हः सः दिवो वै गुरु वै सदा हः ।।

हे गुरुदेव! आप ब्रह्म स्वरूप हैं, सूर्य स्वरूप हैं, विष्णु स्वरूप हैं, आप मुझे आत्मवत् बना लें, यही प्रार्थना है।

आत्मवत् बनने की शिष्य की भावना असत्य से सत्य की खोज के लिए बढ़ते हुए, सार तत्त्व को प्राप्त करना है, जिसे गुरु की सरलता से सूर्य के सदृश तेज पुंज बन कर शिष्य को जाग्रत कर देते हैं।

तमसो मा ज्योतिर्गमय

जैसे ही शिष्य के अन्तर में गुरु उपरोक्त क्रिया सम्पन्न करता है, उसके जीवन में अज्ञान अन्धकार के बादल स्वतः छटते जाते हैं, एक नयी सिहरन नयी उमंग, नयी गति, नयी तरंग, जीवन में नाचने लगती है, उसे अहसास होने लगता है कि यही वह सब कुछ नहीं है, जिसे पान के लिए उसेने अनमोल मानव रत्न यह देह रूपी मन्दिर प्राप्त किया है, इसमें स्थापित आत्मा और ब्रह्म का संयुक्त स्वरूप ही उसका अभीष्ट है, गुरु का ''गु'' अक्षर और ''रु'' अक्षर निश्चय ही अज्ञान से सत्य एवं अन्धकार से प्रकाश की ओर ले जाने की एक मधुर तांत्रोक्त क्रिया है, इसीलिए कहा गया है -

गुकारस्त्वन्धकारश्च रुकारस्तेज उच्यते।
ज्ञानाग्रासक ब्रह्म गुरुरेव न संशयः।।

गुरु के पावन चरणों में मानव अपने सचित पुण्यों को लेकर जब दीक्षा का सौभाग्य प्राप्त करता है, तो गुरु का मिलन दिव्य वात्सल्य और ममतायुक्त पिता और माता का शिशु में आत्म मिलन जैसी मनोहारी दृश्य पैदा कर कर देता है, जब गुरु शिष्य को सीने से लगाकर उसे प्यार से दुलारते हुए 'बेटा' का उच्चारण करते हैं, गुरु अपने हाथ से स्पर्श से आंखों के तेज से शिष्य को नया जीवन, नया चिन्तन, नया दर्शन प्रदान करते हैं तो यही तो ''तमसो मा ज्योतिर्गमय'' की पादाम्बुज कल्प कथ्य है।

मृत्योर्माऽमृतंगमय

मृत्यु मानव मात्र के लिए भयप्रद है, बालक हो अथवा वृद्ध, स्त्री हो अथवा पुरुष, पशु-पक्षी हो अथवा अन्य जीवनधारी, सभी इससे बचना चाहते हैं, लेकिन विधि की विडम्बना के

आगे कहीं किसी की पार नहीं पड़ती, सभी मृत्यु के आगे नतमस्तक हो युगों-युगों से काल कवलित होते चले आये हैं, आगे भी यह क्रम चलता जा रहा है यदि किसी ने मृत्यु को जीवन का श्रृंगार बनाया है, हंसते हुए गले लगाया है, तो वह व्यक्तित्व गुरु का ही है, जिसके आगे मृत्यु अपने आपको ठगा सा महसूस करती है, बौनी हो जाती है उनके व्यक्तित्व के सामने, क्योंकि गुरु ने सदा अमरता को पाठ पढ़ा है, और मृत्यु पर विजय प्राप्त करने की संजीवनी कला से वह पूर्ण पारंगत है।

गुरु अपने शिष्य को आत्मवत् बनाना चाहता है, उसके मृत्यु की ओर बढ़ते कदमों को मोड़ कर उसे अमरता का पाठ पढ़ाता है, वह चाहता है कि अपने सामने ही वह अपने शिष्य को इस योग्य बना दे, कि वह उसके बाद भी स्वयं पूर्ण तेजस्विता प्राप्त करते हुए, समाज को नयी दिशा दे सके, उसके लक्ष्य और कार्य को आगे गति दे सके, शिष्य गुरु के चरणों में बैठ कर अपने जीवन को संवारता जाता है, गुरु रूपी कामधेनु का ज्ञान रूपी मधुर दुग्धपान करते हुए कल्पवृक्ष सी शीतल छांव रूपी गुरु का वरदानमय आशीर्वाद प्राप्त करते हुए वह कभी थकता और अघाता नहीं, नित्य नूतन होता हुआ अपने जीवन का पूरा कायाकल्प कर लेता है और इसे ही गुरु पादाम्बुज कल्प का सही रूप कहा जाता है इसीलिए शिष्य अपने गुरु को हर पल, हर क्षण प्रसन्न रखने का प्रयास करता है, क्योंकि उसे मालूम है -

शिवे क्रुद्धे गुरुस्त्राता गुरु क्रुद्धे शिवो न हि।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन श्री गुरुं शरणं व्रजेत्॥

गुरु प्राणधार

गुरु और शिष्य की धड़कने जुदा-जुदा नहीं होती, शिष्य के रोम-रोम में गुरु की छवि समाहित रहती है, आंखों में गुरु का तेजस्वी स्वरूप नाचता है, हर पल, हर क्षण, उठते-बैठते, सोत- जागते शिष्य गुरु में ही खोया रहता है, उसका संसार गुरुमय हो जाता है, उसकी हर क्रिया गुरु को अर्पित होती है, अपना स्वयं का आस्तित्व गलती हुई बर्फ सा गलता जाता है, और एक क्षण जीवन में वह आता है कि समस्त क्रियाओं के प्रति उसका कर्त्ताभाव सदा-सदा के लिए तिरोहित हो जाता है, वह गुरु की परछाई सा बन गुरुतुल्य हो जाता है, और यही क्षण होता है कि गुरु अपने शिष्य को दोनों बांहों में समेट सीने से लगा कर सब कुछ समाहित कर देता है अपने शिष्य में, गुरु पाद सेवा और गुरु युगल चरण शिष्य की धरोहर बन कर साकार हो उठती है, ज्ञान के विराट पुंज में बोध के उन्मुक्त वातायनी क्षणों में, जहां व्यापकता की व्यापकता है, सत् चित् आनन्द का मधुर मिलन शिष्य का व्यापक जीवन बन जाता है और इसीलिए शिष्य गुरु को प्राणाधार मानते हुए अनायास स्वीकार कर लेता है -

गुरोः पादोदकं युक्त्वा सो सोऽक्षयोवटः।
तीर्थराजः प्रयागश्च गुरुमूर्त्यै नमो नमः॥

कल्प प्रयोग विधि

किसी भी गुरुवार को प्रातः चार बजे ब्रह्म मुहूर्त में स्नान आदि नित्य क्रियाओं से निवृत्त होकर शुद्ध श्वेत धोती पहन कर सफेद आसन पर उत्तर दिशा की ओर मुंह कर बैठें, फिर मन की वाणी एवं हृदय को पवित्र करने के लिए 'ॐ' प्रणव बीज का तीन बार नाभि से उठाते हुए लम्बा उच्चारण करें, और फिर तीन प्राणायाम सम्पन्न करते हुए अपने सामने मन्त्र सिद्ध प्राण प्रतिष्ठा युक्त **'गुरु चरण पादुका'** किसी पात्र में स्वस्तिक बना कर उस पर स्थापित करें, साथ ही **'गुरु यंत्र'** और गुरु चित्र भी सामने रखें और फिर कुंकुम, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य एवं अगरबत्ती आदि से पूजन आरती सम्पन्न करें इसके बाद शुद्ध घी की ज्योति अपने सामने लगाए, शुद्ध दूध गंगाजल चरणों में अर्पित करते हुए गुरु चिन्तन और गुरु चरणों का ध्यान करें।

तत्पश्चात् पद्मासन आ सिद्धासन में बैठ कर अपने शरीर के रोम-रोम में गुरु को समाहित करते हुए उनकी उपस्थिति का अहसास करें, मूलाधार से लेकर सहस्त्रार तक सभी चक्रों में गुरु के ही बिम्ब का ध्यान करें, ज्ञान मुद्रा या तत्व मुद्रा में पांच मिनट शान्त चित्त बैठ कर अपने आपको गुरुमय बना लें ओर फिर नीचे लिखे मन्त्र का **'स्फटिक माला'** से नित्य ११ माला जप २१ दिन तक करें, तो यह गुरु पादाम्बुज कल्प सिद्ध होता है, जिसका फल साधक को जीवन भर स्वतः मिलता रहता है।

गुरु मन्त्र

॥ ॐ परम तत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः॥

वास्तव में गुरु साधना से शिष्य को वह शक्ति प्राप्त होती है कि जब भी चाहे शान्त भाव से बैठ कर अपने गुरु का ध्यान करता है तो गुरुदेव उसके भीतर समाहित हो कर आधार प्रदान करते है, उसके संकट में मार्ग बतलाते हैं, गुरु भक्ति की महिमा तो अपार है।

साधना सामग्री -380/- रू.